आत्म-विश्वासी बनो !

इतिहास की धारा न हमारे पक्ष में है और
न उनके, बल्कि यह तो दृढ़-संकल्प और
आत्म-विश्वासी वीर पुरुषों के हाथ में है।

प्रे० कैनेडी

आत्मविश्वासी बनो !

लेखक

गन्धर्व

ारती भाषा प्रकाशन, दिल्ल

प्रकाशक
नारायणदत्त सहगल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

प्रमुख वितरक :
भारती भाषा प्रकाशन
५१८/६ बी, विश्वास नगर
शाहदरा, दिल्ली-३२

तृतीय संस्करण १९७५

मूल्य : १२ रुपये

देश के समुदाए को,
जिसके विश्वास, निष्ठा और
सहयोग पर भारत का
भविष्य निर्भर है।

विषय सूची

प्राक्कथन

आत्मविश्वास महान शक्ति है। अपने पर अटल विश्वास वह दैवी बल है, जो पहाड़ो को भी पथ देने पर बाध्य कर देता है। आधुनिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञो का कथन है कि आत्म-विश्वास का अवलम्बन लेकर अलौकिक पराक्रम का परिचय दिया जा सकता है और दु साध्य कार्यो को भा साध्य बनाया जा सकता है। जावन मे सफलता के लिए तो आत्मविश्वास महा-मत्र का स्थान रखता है।

प्रस्तुत पुस्तक मे उसी शक्ति को महिमा बतलाई गई है, और उन सिद्धातो पर प्रकाश डाला गया है, जिन्हें यदि अपना मार्ग-दर्शक बनाया जाए, तो कोई भी व्यक्ति, चाहे वह कितना हो दीन, हीन और दरिद्र क्यों न हो, आत्मविश्वासी बन सकता है, और हारे हुए विश्वास को भी पुनर्जीवित कर सकता है।

इस विशुद्ध वैज्ञानिक और व्यावहारिक विवेचन को मैंने अतीत और वर्तमान काल के महापुरुषो और अन्य सफल व्यक्तियो की जीवन सम्बन्धी घटनाओ के उल्लेख तथा अगणित बाह्य उदा-हरणों के अतिरिक्त स्वय अपने देश और समाज की नित्य गति-विधियो के विवरण मे सरलबोध और रोचक बनाने का भरसक प्रयत्न किया है। सामाजिक उदाहरण भी उसी प्रकार सत्य पर आधारित है, जिस तरह कि राजनीतिक क्षेत्र और बाह्य दुनिया की एतिहासिक घटनाएँ। परन्तु उनका उल्लेख करते समय

सम्बद्ध व्यक्तियों के नाम न 'लेकर एक सज्जन को जानता हूँ' अथवा 'एक मित्र है' आदि वाक्यों का सहारा लिया गया है। कारण हमारे समाज मे अभी तक अपने को प्रकट करने में सकोच अनुभव किया जाता है, और वहुधा लोग अपनी अनुभूतियो मे दूसरो को भागीदार वनाना पसन्द नही करते।

कुछ भी हो, मैंने पुस्तक को रोचक, सरल और उपयोगी वनाने में कोई कसर उठा नही रखी, और इस प्रयास में कहाँ तक सफल हुआ हूँ, इसका निर्णय आप पाठको पर छोडता हूँ। इतनी वात अवश्य पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि इस पुस्तक में प्रस्तुत मनोवैज्ञानिक समस्याओ मे ऐसी कोई भी जटिलता नही है, जो साधारण साक्षर व्यक्तियो की समझ से वाहर हो। इसलिए यह पुस्तक गूढ मनोविज्ञान की न हो कर व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित साधारण जानकारी की पुस्तक है, जिसका अध्ययन प्रत्येक व्यक्ति के लिए नितांत रोचक, ज्ञानवर्द्धक और लाभदायक सिद्ध होगा।

भारत एक जनतत्रीय राष्ट्र है, और जनतत्र की रक्षा और विकास के लिए व्यक्तिगत सुधार और उन्नति परमावश्यक हैं। सच तो यह है, कि जनतंत्र का आधार ही व्यक्ति के उत्कर्ष पर है। यदि व्यक्ति आगे वढता है, तो जनतंत्र का कुछ अर्थ भी है, अन्यथा नही। इस लिए एक लेखक के नाते यह मेरी प्रवल इच्छा है कि स्वतत्र भारत का प्रत्येक नागरिक अपनी वास्तविकता से परिचित हो, तथा अपने वाहुवल पर विश्वास करते हुए स्वयं अपने पैरो पर खडे होने का उद्योग करे। इस पुस्तक के अध्ययन से यदि एक भी भारतीय अपने पर भरोसा करके अपने वर्तमान और भविष्य को उज्ज्वल वनाने पर कटिवद्ध हो जाए, तो मैं समझूँगा कि मेरा परिश्रम व्यर्थ नही गया।

—गंदर्व

वह शक्ति जो पहाड़ों को उखाड़ फैंकती है।

एक शक्ति है, जो पहाडो को उखाड फेंकती है। उसका नाम है आत्मविश्वास। अपने पर पूर्ण विश्वास वह महामंत्र है, जिस की सहायता से अजेय दुर्ग जीते जा सकते है, दुर्गम जगलों और मरुभूमियों को पार किया जा सकता है, और दुर्लभ गडे धन का पता लगाया जा सकता है।

जो मनुष्य जीवन क्षेत्र मे इस विश्वास के साथ प्रवेश करता है कि सफलता उसकी है, और विजय-वैभव उसका जन्मसिद्ध अधिकार है, वह सफल हो कर ही रहता है। कोई कठिनाई, कोई विषमता उसके मार्ग मे बाधक नही हो सकतो। आत्म-विश्वास के बल-बूते पर वह हर मुश्किल पर काबू पाता है, और अपने अभीष्ट लक्ष्य पर पहुँच कर ही दम लेता है। उसके सब स्वप्न—सुहावने स्वप्न—यथार्थ मे परिणत हो कर ही रहते है।

"मैं इगलैंड का प्रधानमत्री बनना चाहता हूँ" लार्ड मलबर्न के पूछने पर इस महत्वाकाक्षा की अभिव्यक्ति जिस नवयुवक ने की, उसका जन्म एक मध्यम वर्गीय यहूदी परिवार मे हुआ था। वह किसी उच्च विश्वविद्यालय से पदवी-प्राप्त नही था। उसके सहपाठी उसे केवल इस लिए घृणा की दृष्टि से देखते थे कि वह उनके निकट विदेशी और यहूदी था।

जब वह जीवन क्षेत्र मे प्रविष्ट हुआ, तो पहले ही पग पर उसने ठोकर खाई। वह व्यापार मे असफल होकर देनदार हो गया। उसने राजनीति मे स्थान बनाना चाहा, तो पग पग पर उसका विरोध किया गया। वह पहली बार ससत्सदस्य बनने में केवल इस लिए असफल रहा कि डेढ सौ वर्ष पूर्व के इगलैंड में किसी यहूदी को इस सम्मान का पात्र नही समझा जाता था। परन्तु इन विफलताओ से उसके दृढ कदम नही डगमगाए। वह पूर्ववत इगलैंड का प्रधान मत्री बनने का स्वप्न देखता रहा।

लार्ड मल्बर्न ने उसे समझाया कि वह अपने इन अपरिपक्व विचारो का परित्याग कर दे। परन्तु वह न तो अपने स्वप्न को अविचार समझता था और न उसे त्यागने को ही तैयार हुआ। उसे अपने पर असीम विश्वास था। वह समझता था कि इगलैंड का गौरव और उसका प्रधानमत्री पद पर आसीन होना—इन दोनो बातों मे अटूट सम्बन्ध है इसलिए वह सघर्ष के मार्ग से विमुख नही हुआ। और अततोगत्वा, घोर विरोध के बावजूद, वह संसदसदस्य बनने मे सफल हो ही गया। परन्तु विरोधीगण उसे नीचा दिखाने की कुचेष्टाओ मे सलग्न रहे। जब वह पहली बार संसद मे बोलने के लिए खडा हुआ, तो उसके भाषण में बार-बार विघ्न डाला गया। उसे विरक्त करने के लिए उस पर व्यंग-बाण चलाए गए। आखिर उसे विवश होकर मौन होना पडा। परन्तु फिर भी उसने साहस नही हारा, पराजय स्वीकार नही की। उसने विपक्षियो को सम्बोधित कर कहा—"अब तो मैं बैठ जाता हूँ। परन्तु वह समय आएगा जब आप मेरा भाषण सुनने पर बाध्य होगे।" और इतिहास साक्षी है कि वह समय आकर रहा। वहाँ विदेशी और 'लुटेरा यहूदी', इंगलैंड के सामंतों और सर्वसाधारण को यह विश्वास दिलाने मे सफल हो गया कि वह सच्चा देशभक्त है, और प्रधानमत्री-पद का भागी बोदा

उठाने के योग्य उससे बढ कर और कोई राजनीतिज्ञ नही है ।
उस आत्मविश्वासी राजपुरुष का नाम था बेंझमन् डिज्राइली ।

डिज्राइली इगलेंड का प्रधान मत्री बन कर रहा। और उसे विदेशी और लुटेरा कहकर अपमानित करने वाली अग्रेज जाति उस का नेतृत्व स्वीकार करने पर बाध्य हुई। यह सब क्यो हुआ ? केवल इस लिए कि डिज्राइली आत्मविश्वासी था। उस के जीवन मे निराशा के क्षण भी आए। उसे कई बार पराजय का मुह भी देखना पडा। उसके विरोधियो ने उसके विरुद्ध जातीय पक्षाधता का अस्त्र भी प्रयुक्त किया। परन्तु वेंजमन् ने इन कठिनायो को लेशमात्र भी महत्व न दिया।

वह हताश न हुआ, बल्कि हर सफलता पर वह नई उमग, नए उत्साह और नए सकल्प के साथ सफलता-लक्ष्य तक पहुँचने के प्रयास में जुटा रहा। उसे अपने बाहुबल पर भरोसा था। उस का अटल विश्वास था कि स्रष्टा ने उसे इगलेंड का प्रधान मन्त्री पद ग्रहण करने के लिए ही ससार मे भेजा है। इस आत्मविश्वास ने सदैव उसका साथ दिया, उसका साहस बढाया और उसके कर्मोत्साह और सहनशीलता की वृद्धि की। इसलिए वह अपने जीवन लक्ष्य तक पहूचने मे सफल हुआ।

आप भी अपने गण्तव्य पर पहुँच सकते है। आपका स्वप्न भी वास्तव का रूप धारण कर सकता है। आप भी महानता, प्रसिद्धि और धन-वैभव प्राप्त कर सकते है। वशर्ते कि बेंजमन् की तरह आपको भी अपने पर पूर्ण विश्वास हो, और आप भी स्वय को महत्ता का अधिकारी समझते हो। किसी निर्धन कृषक के परिवार मे जन्म लेने के बावजूद आपको देश का राष्ट्रपति अथवा प्रधान मत्री बनने की उत्कठा ने व्याकुल कर रखा हो, और किसी स्वीकृत विश्वविद्यालय से पदवी-प्राप्त न होने के बावजूद आप केवल व्यक्तिगत अध्ययन से ज्ञान व साहित्य के

जगत में सूर्य सदृश चमकने का सकल्प किए हो । वेंजमन् की तरह आपको भी यकीन हो कि कोई कठिनाई आपको अपने ध्येय तक पहुँचने से रोक नही सकती, और यह कि शत्रु भी अंतत. आप का नेतृत्व और श्रेष्ठता स्वीकार करने पर वाध्य हो जाएँगे।

वास्तविकता यह है कि आत्मविश्वास मनुष्य की अमूल्य सम्पत्ति है। इस पूजी को साथ लेकर जो मनुष्य ससार रूपी वाजार मे अपना स्थान वनाने के लिए निकलता है, उसे कोई विचलित नही कर सकता, उसे कोई पराभूत नहीं कर सकता। उसे सफलता के मन्दिर मे प्रवेश करने से कोई नही रोक सकता। वस्तुत. आत्मा में अद्भुत शक्ति है। आत्मविश्वास मात्र से जीवन मे शक्ति-स्फूर्ति का सचार होता है। आत्मविश्वास के चमत्कार से व्यक्तित्व चमक उठता है और मनुष्य मे विलक्षण क्षमता का प्रादुर्भाव होता है। आत्मविश्वासी पुरुष राज-सत्ता प्राप्त करना चाहे तो स्वर्ण-मुकुट उसके चरणो मे भेंट किया जाता है, और देश व राष्ट्र के नेतृत्व की वागडोर उसके हाथ में थाम दी जाती है। यदि वह धनोपलब्धि का अभिलाषी हो, तो मणि-मुक्ता उस पर निछावर किए जाते है। और यदि वह ज्ञान-विज्ञान का आराधक हो, तो उसे विश्व के विद्या-परिषद में आसन दिया जाता है। लिंकन्, लेनिन, स्टालिन्, मनयात सेन' मुस्तफा कमाल. हिटलर, मुसोलिनी, माओत्से तुंग, नासिर, टीटो, सुकार्नो, होचीमिन्ह, लार्ड बीयर ब्रुक और रॉक फेलर—इन मे से किसी के पास भी न तो धन था और न उत्तम कुल की प्रतिष्ठा ही। ये किसी स्वीकृत विश्व-विद्यालय के सनातक भी नही थे। इनमे एक कारीगर का वेटा था, तो दूसरा किसी गरीब किसान या मजदूर का सपूत। किसी एक की परिस्थितियाँ भी अनुकूल नहीं थी। यदि आप इन

जीवनियों का अध्ययल करे, तो आप पर प्रकट होगा कि आरम्भ में इन मे से किसी की भी अवस्था आप से बेहतर नहीं थी। यदि आप किसी किसान या मजदूर के बेटे है, तो इनके माता पिता के माथे पर भी कुलीनता का तिलक नही लगा था। आप उच्च शिक्षा प्राप्त नही कर सके, तो इन्हे भी उच्च शिक्षा प्राप्ति की सुविधाये नही मिली थी। आप की तरह इन्हे भी बालावस्था मे पाठशाला को तिलाजली देनी पडी थो। परन्तु इन सब बातो के बावजूद वे सफल होकर रहे, क्योकि उन्हे अपने पर, अपनी योग्यता और सकल्प-शक्ति पर, अटल विश्वास था। वे जानते थे कि वे अपने प्रयत्नो से कठिनाइओ पर काबू पा सकते है, अपना मार्ग बना सकते है, और अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते है।

वे स्वय को किसी से हीनतर नही समझते थे। वे केवल बातो के ही धनी नही थे, बल्कि जिस सिद्धात, विचार या आदर्श के प्रति उन्हे निष्ठा थी, उसे कार्य रूप मे परिणत करने का प्रयास भी वे करते थे। इस लिए वे अपने साथियो से बाजी ले गए। फिर आप क्यो इस महान शक्ति स्रोत से काम न ले? आप भी स्वयँ को उच्चतम पद का अधिकारी क्यों न समझे, और अपने बाहुबल के चमत्कार पर विश्वास करते हुए कर्म मार्ग पर अग्रसर होकर सर्वोच्च पद क्यों प्राप्त न करे?

आत्मयिश्वास और सफलता मे कारण कार्य का सम्बन्ध है। आत्मवाश्विास के बिना सफलता की कल्पना भी नही की जा सकती। यह विश्वास कि मैं कर सकता हूँ, पहाडो को पथ देने पर बाध्य कर देता है। और यह निश्चय कि सफलता मेरा जन्म-सिद्ध अधिकार है, दुनिया की कोई शक्ति मुझे उससे वचित नही रख सकती, मानव का उत्थान करता है, उसे गति और कर्मशीलता प्रदान करता है, निभर्य बनाता है, और उसके हृदय मे आशा-दीप को सदा प्रज्जवलित रखता है। इस प्रकार उसकी

सफलता की सम्भावनाएँ उज्जवल ही नही होती, वल्कि सफलता अवश्यम्भावी हो जाती है

आत्मविश्वासी पुरुष जब किसी कार्य को हाथ लगाता अथवा किसी अभियान का प्रारम्भ करता है, तो वह अपने मन व मस्तिष्क को असफलता सम्वधी मिथ्या धारणाओ का वसेरा नही वनाता। वह स्वय को सदैव विजयी ही देखता है। सफलता और महत्ता के सिवा उसे और किसी भी वात से रुचि नही होती।

दिसम्बर, ५० मे अमरीका की आठवी सेना कोरिया के रणक्षेत्र मे विपदग्रस्त थी। हिमपात और शीत की अधिकता से सेनानियो का साहस टूट चुका था। वे पीछे हटने की योजनाएँ वनाने मे संलग्न थे। इसी बीच अमरीका की फौजके नए सेनाध-पति जनरल रिजवे ब्रिगेट चौकी का निरीक्षण करने के लिए आए। सेनाधिकारियो ने उनका स्वागत करने के पश्चात तुरन्त ही वह योजना उनके सामने प्रस्तुत कर दी, जो संगठित रूप से पीछे हटने के निमित्त वनाई गई थी। परन्तु जनरल रिजवे ने उस पर एक दृष्टि डालने तक का कष्ट न किया, और कठोर स्वर मे कहा, "मुझे पीछे हटने की योजनाओं से कोई दिलचस्पी नही है। हा अगर आगे वढने का कोई नक्शा हो, तो मैं उसपर विचार कर सकता हूँ। मैं आप लोगो की हर तरह सहायता करने को तैयार हूँ। लेकिन इस वात को अच्छी तरह समझ लीजिए कि मुझे केवल एक ही वात से दिलचस्पी है, और वह है शत्रु पर आक्रमण और अग्रयान !" जनरल रिजवे के इन शब्दो ने और उनके पीछे जो आत्मविश्वास क्रियाशील था, उसने सजीवनी का काम किया। सेनानायको का उत्साह पुन-र्जीवित हो उठा और कुछ ही सप्ताहो में ये समाचार आने लगे कि आठवी फौज पुनः अग्रयान कर रही है।

जीवन संग्राम मे भी विजय उन्ही के भाग्य में होती है, जो दृढ़-

त्यार डाल देने की बजाए दो-दो हाथ करने पर तत्पर रहते है, जो कठिनाइयो और विपत्तियो से विचलित नही होते, जो पराजय की योजनाएँ नही बनाते, जिनका आदर्श और लक्ष्य विजय और केवल विजय होता है। जो आँधी और तूफान मे 'बढे चलो' का नारा लगाते है जो विरोधियो का जमघट देख कर पलायन-मार्ग नही ढूढते, जिनका लक्ष्य हर अवस्था मे और हर मूल्य पर सफलता है, वह सफल होकर ही रहते है।

जिस मनुष्य को अपनी योग्यता पर भरोसा होता है, वह किसी के अवलम्बन, किसी के पक्ष-समर्थन अथवा किसी के सहयोग की अपेक्षा विरले ही करते है। वह अकेला दलो पर भारी होता है। वह प्रतिस्पर्द्धा से नही डरता, बल्कि उसे अपने लिए हितकर समझता है। इसलिए नही कि उसे कठिनाइयों की सृष्टि करने की सनक सवार रहती है, बल्कि इसलिए कि प्रतियोगिता मे उसे अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने का अधिक अवसर मिलता है।

तेल-वाहक जहाजो के बहुत बडे व्यापारी सुक्रात ओइसस् का नाम विश्व-विख्यात है। उसने मध्यपूर्व से अन्य देशों को तेल पहुँचाने के व्यवसाए पर अधिकार कर लिया, और अमरीका और यूरोप की अनेक कम्पनियो को आर्थिक हानि सहन करने पर बाध्य कर दिया। ओईसस् किसी धनवान व्यापारी के घर मे पैदा नही हुआ था। समरना के एक अज्ञात और गरीब घराने मे उसका जन्म हुआ। उसका बाप समरना की गलियो मे देशीय दस्तकारी की चीजे बेचा करता था, और माँ धनिको के घरो मे बर्तन माँझा करती थी। परन्तु ओईसस् आज करोड़पति है। उसने तेल-वाहक जहाजो के व्यापार मे इतनी अधिक उन्नति की है कि यूरोप की उन कम्पनियों को भी मैदान छोड देना पड़ा है जिन का सरक्षण कुछ बडे राष्ट्रो को सरकारे करती है।

ब्रिटेन के प्रसिद्ध पत्रकार, लेखक, आलोचक और रानीतिज्ञ सर व्युरली वैवस्टर उन लोगों मे से है, जो अपने भाग्य के स्वयं निर्माता होते है। मि० वैवस्टर कैनेडा मे पैदा हुए थे। प्रथम महायुद्ध के वाद वह लंडन मे भाग्यपरीक्षा करना चाहते थे। वह पत्रकार वनने के इच्छुक थे। और उनका मत था कि जिन लोगो को अपने वाहुवल पर विश्वास हो, जो स्वय अपना मार्ग प्रशस्त करने पर उद्यत हो, उनके लिए ब्रिटेन के पत्रकारिता-जगत मे अपने भविष्य को उज्ज्वल वनाने के अवसर दुर्लभ नही हैं। अत· मि० वैवस्टर ने समाचारपत्रो के प्रसिद्ध प्रकाशक लार्ड वीवर ब्रुक से समुद्री तार द्वारा अनुरोध किया कि उन्हे काम करने का मौका दिया जाए। उत्तर म लार्ड वीवर ब्रुक ने लिखा —"तुम अपनी जिम्मेदारी पर आ सकते हो।" निस्सदेह जवाव उत्साह वर्द्धक नही था। कैनेडा से अपनी जिम्मेदारी पर लडन पहुँचना, जब कि नौकरी की जमानत भी नही दी गई थी, कठिनाइयो और सकटो को आमन्त्रित करने के समान था। परन्तु मि० वैवस्टर को विश्वास था कि वह ऐसी सव मुश्किलो पर कावू पा लेंगे। इस लिए उन्होने लडन की यात्रा करने मे विलम्ब न किया।

उन्हे पहले पहल एक समाचार पत्र मे सवाददाता के पद पर काम करने का अवसर दिया गया। परन्तु दस वर्ष वाद वह एक ऐसे दैनिक पत्र के प्रधान सम्पादक वन गए जिसकी प्रकाशन सख्या वीस लाख से भी अधिक थी। उसके वाद वह संसत्सदस्य भी वने, सर की उपाधी भी उन्होने प्राप्त की, और देश के प्रमुख राजनीतिज्ञों मे उनकी गणना होने लगी। कहा जाता है कि ब्रिटेन के दो प्रधान मन्त्री—मि० चैम्बरलेन और मि० एटली—कठिन समय मे उनसे परामर्श किया करते थे। मि० चर्चिल भी उनकी मन्त्रणा को आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

मि० वैवस्टर की यह ईर्ष्या-योग्य सफलता उनके आत्म-

विश्वास की देन है। यदि उन्हे अपने आत्मबल और योग्यता पर विश्वास न होता, अर्थात उन्हे यह यकीन न होता कि वह लडन जाकर न केवल नौकरी ही प्राप्त कर सकेंगे, बल्कि मान-प्रतिष्ठा और धन-समृद्धि प्राप्ति मे भी सफल होगे, तो वह शायद ही अपनी जन्मभूमि को छोड़ने पर तैयार होते, और शायद कैनाडा मे ही अपने ढब के किसी काम के लिए प्रयत्न करते।

आत्मविश्वास वस्तुत मनुष्य को दृढता-धैर्य की मूर्ति बना देता है। जिस ममुष्य को अपनी स्थिति और विचारो की सत्यता का विश्वास होता है, और जो समझता है कि वह कठिन काम को भी पूरा कर दिखाने का सामर्थ्य रखता है, वह अपने मतव्य की सत्यता को सिद्ध करने के लिए बडे से बड़ा खतरा मोल लेने से भी नही डरता। उसे न तो मिथ्या धारणाओ के प्रेत भयभीत कर सकते है और न शकाओ के भूत डरा सकते है। उसके मार्ग मे मुसीबतो के हिमालय खडे हो, तो भी वह कदम पीछे नही हटाता, बल्कि पहाडो को भी पथ देने पर बाध्य कर देता है। जब वह किसी अज्ञात भूखड का पता लगाने पर कटिबद्ध होता है, तो वह महासागर के असीम विस्तार को देख कर सदेह और शका के सागर मे डुबकियाँ नही खाता, बल्कि कोलम्बस की तरह प्रति दिन यही सोचता है—आज भी लक्ष्य की ओर बढे। हार और असफलता की तो वह कल्पना भी नही करता। और यदि किसी समय उसे असफलता का मुँह देखना पड जाए, तो भी वह साहस नही हारता, निराश नही होता, निष्क्रिय हो कर बैठ जाने पर तैयार नही होता। वह उस समय तक सघर्ष जारी रखता है, जब तक कि अभीष्ट वस्तु को प्राप्त नही कर लेता।

आज हम जिन आविष्कारो और ईजादो से लाभन्वित हो रहे है, वे सब उन वैज्ञानिको और आविष्कारको की देन है,

जिन्हें आने पर और अपने आविष्कारों की सत्यता पर अटल विश्वास था। उन्हे अपनी सोच की सचाई का यकीन न होता, तो वे उसे कार्य रूप मे सिद्ध करने की सिरदर्दी कभी मोल न लेते। और यदि वे अनुसधान के कठिन मार्ग पर चलते हुए अविश्वास के भ्रमजाल में उलझ जाते, तो शायद ही अपने लक्ष्य तक पहुँच पाते, और शायद ही मनुष्य मात्र के हितचिन्तक और देश व जाति के उपकारक कहलाने का सौभाग्य प्राप्त करते।

वैज्ञानिक, आविष्कारक और पर्यटक कष्टो की ज्वाला में क्यो कूदते हैं? प्राण जैसी प्रिय वस्तु को जोखिम मे क्यो डालते है? भोग-विलास के जीवन पर दुःख और विपत्ति के जीने को प्राथमिकता क्यो देते है? केवल इसलिए कि उन्हें अपने अपूर्व विचार अथवा धारणा की सत्यता पर पूर्ण विश्वास होता है। और वे उसकी सचाई को साबित किए बिना चैन से नही बैठ सकते।

प्रथम महायुद्ध के समय ब्रिटिश वायुसेना के अधिकारी यह देखकर अत्यन्त चितित हो उठे कि बहुधा विमान उडान करते-करते सहसा चक्कर खाकर धरती की ओर गिरना शुरू कर देते हैं, और जब वैज्ञानिक उन पर काबू पाने की चेष्टा करते, तो उनका परिणाम प्रायः विनाश के रूप मे निकलता। आखिर सरकार ने इस चिताजनक परिस्थिति का हल निकालने के लिए तरुण वैज्ञानिक फ्रैड्रिकलिंडेमन् को नियुक्त किया। इसी वैज्ञानिक को बाद मे उसकी सेवाओ के पुरस्कार स्वरूप लार्ड चिरोल की उपाधी दी गई।

लिंडेमन् ने गहन चितन के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि जिस समय वायुयान चक्कर खा कर नीचे की ओर गिरना शुरू करे, तो वैज्ञानिक को स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार क्रिया नहीं करनी चाहिए। अर्थात यदि विमान का अगला भाग धरती की

ओर हो गया हो, तो वेज्ञानिक को उसे ऊपर उठाने मे शक्ति व्यय करने की बजाए विमान को पूर्ण वेग से नीचे ले जाने की चेष्टा करनी चाहिए। इससे विमान नीचे गिरने के स्थान पर सीवा सामने की ओर बढना शुरू कर देगा। लिडेमन ने इस सिद्धांत का आविष्कार तो कर लिया परन्तु अब उसका व्याव-हारिक परीक्षण कैसे किया जाय? विना परीक्षण विमान चालकों को उसे मान्यता देने पर बाध्य नही किया जा सकता था। प्रकट मे यह बड़ा ही विचित्र सिद्धात था। जो विमान पहले ही धरती की ओर गिर रहा हो, उसे और नीचे ले जाने से वह विनाश से कैसे बच सकता है, इस अनूठे सिद्धात को कौन स्वीकार करता? आखिर मि० लिडेमन् ने स्वय विमान चलाने का प्रशिक्षण लेने का प्रस्ताव किया, ताकि अपने सिद्धात की सत्यता का प्रत्यक्ष प्रमाण दे सके। और जब कुछ महीनो के बाद वह विमान चलाना सीख गए, तो उन्होने अपने अनोखे विचार को कार्यन्वित करने का बीडा उठाया।

देखते ही देखते वह विमान को १८ हजार फुट की ऊँचाई पर ले गये। फिर तुरन्त ही विमान ने चक्कर खाकर नीचे गिरना शुरू कर दिया। तभी मि० लिडेमन ने उसकी गति और भी तीव्र कर दी। लगा कि बस अब क्षण भर मे विमान धरती से टकरा कर नष्ट हो जायगा। परन्तु लोग यह देख कर चकित रह गए कि विमान ने एकाएक सीधा होकर आगे की ओर उडना शुरू कर दिया। इस प्रकार मि० लिडेमन की सिद्धात की यथार्थता सिद्ध हो गई। परन्तु उस वीर पुरुप ने विमान को धरती पर उतारने की बजाए फिर एक बार आकाशोन्मुख कर दिया। ऊंचाई पर पहुँच कर विमान ने फिर चक्कर खाया, और लिडेमन ने पुनः अपनी योजना केअ नुसार कार्य कर उसे दूसरी बार भी सकट से बचा लिया। इसके

बाद जब वह विमान को सकुशल धरती पर ले आए तो मैदान में उपस्थित जनो ने करतल-ध्वनि से उनका स्वागत किया। लोगों ने पूछा कि आपने एक बार सफलता प्राप्त कर लेने के बाद फिर दूसरी बार खतरा क्यो मोल लिया, तो लिडेमन ने उत्तर दिया "मैंने सोचा कि मुमकिन है कोई यह कहे कि पहली बार विमान शायद सयोग से बच निकला, इसलिए परीक्षण को दुहराना आवश्यक था।"

मि० लिडेमन की तरह अन्य वैज्ञानिक और आविष्कार भी अपनी स्थापना की पुष्टि के लिए प्राणो की बाजी लगाने में संकोच नही करते। उनका 'पथदर्शक तारा' उनका आत्मविश्वास होता है। उस की सहायता से वे आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न करते है, और अपनी रचनाओ को पूर्णता के स्तर पर पहुँचाने मे सफलता प्राप्त करते हैं।

वैज्ञानिको और आविष्कारको की तरह राजनीतिज्ञ भी अपने देश की स्वतत्रता और मान प्रतिष्ठा के लिए सकट के समय केवल इस लिए छाती तान कर खडे हो जाते है कि उन्हे अपने आदर्श के न्यायोचित होने का विश्वास होता है। उन्हें अपनी इस योग्यता पर भरोसा है कि इस समय केवल वही है, जो देश की नाव को सुरक्षा-तट तक ले जा सकते है।

राजनीतिक नेताओं का आत्मविश्वास केवल उन्ही का अंतिम श्वास तक लडने की प्रेरणा नही देता, बल्कि समूचे राष्ट्र को आत्मविश्वासी बना कर उसे शत्रु का मुँह मोड़ देने के लिए तत्पर कर देता है। तनिक द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भिक दिनों की कल्पना कीजिए। हिटलर की विजयी सेनाएँ सर्वत्र अग्रयान कर रही थी। जर्मन वायुसेना के विध्वंसक विमान इंग्लैंड का चिन्ह तक मिटा देने के लिए भीषण बम-वर्षा कर रहे थे। ऐसे नाजुक समय पर असीम संकल्प शक्ति के मालिक चर्चिल ने

इंगलैंड का नेतृत्व-भार सभाला। उस इंगलैंड का, जो युद्ध के लिए बिल्कुल तैयार नही था, जिसके पास आवश्यक युद्ध-सामग्री नही थी, और न प्रतिरक्षा के लिए प्रर्याप्त साधन ही थे। उस इगलेंड के कितने ही लोग इतने हतोत्साहित हो चुके थे कि अन्य देशो मे जाकर बसने की योजनाएं बनाने लगे थे।

समय का मर्म जानने वाले चर्चिल ने देश को वर्षो पहले सचेत होने और प्रतिरक्षा-बल की वृद्धि करने की मन्त्रणा दी थी। परन्तु उस समय उसकी किसी ने न सुनी, और उसे 'युद्ध-पिपासु' कह कर मौन रहने पर बाध्य कर दिया गया। परन्तु अब जब कि इगलेंड पर विपत्ति के बादल छा गए, तब उससे देश को इस महान संकट से निकालने का अनरोध किया गया, मि० चर्चिल को पहले से विश्वास था कि केवल वह ही इंगलेंड को अपमानजनक पराजय से बचा सकते हैं। इस लिए वह तुरन्त कार्य-क्षेत्र मे कूद पडे। वह इस दृढ-संकल्प के साथ जनता के सामने लेडी उपस्थित हुए कि वह अपने गौरवशाली द्वीप की रक्षा करेंगे, चाहे उन्हे इसका कितना ही भारी मूल्य क्यो न चुकाना पडे। "हम समुद्रतट पर लडेंगे। हवाई अड्डो पर शत्रु से लोहा लेंगे। पहाडो, मदानो, खेतो और गलियों में दुश्मन से दो-दो हाथ करेंगे। हम कभी हथियार नही डालेंगे हम कभी हार नहीं मानेंगे।" चर्चिल के इन उत्साहवर्द्धक शब्दो ने ब्रिटिश जाति के मृत प्राय शरीर मे मानो नए जीवन और नई आशा का सचार कर दिया। वे मि० चर्चिल के नेतृत्व मे जर्मन शत्रु को मुँह तोड जवाब देने के दृढ सकल्प के साथ उठ खडे हुए।

मि० चर्चिल ने अपने 'मनोवैज्ञानिक अभियान' को केवल उत्साहवर्द्धक शब्दो तक ही सीमित नही रखा, बल्कि उन्होने देश को एक नया नारा और एक निशान भी प्रदान किया। उनके कहने पर ही (V) अर्थात 'विजय' को राष्ट्रीय प्रतीक

वना लिया गया, ताकि जनता के मन व मस्तिष्क पर विजय की छाप पूर्ण रूप से अंकित हो जाए।

"विजय–हर कीमत पर विजय–हर प्रकार की कठिनाइयों और विपत्तियों के बावजूद विजय"—मि० चर्चिल के इस अटल और अजेय विश्वास ने इगलैंड के हर स्त्री-पुरुष, वाल, वृद्ध, युवा पर जादू सा कर दिया। उसके बाद इगलैंड की पराजय का प्रश्न ही नही उठता था आखिर वह दिन भी आया जब हिटलर की आसुरी शक्ति को मि० चर्चिल के नैतिक वल के आगे हथियार डालने पडे।

वर्तमान युग का एक राजनीतिक चमत्कार भारत की स्वतंत्रता-प्रप्ति भी कुछ दिव्य व्यक्तियो के आत्मविश्वास का सुपरिणाम है। इनमे महात्मागाधी का नाम सर्वोपरि है। जिस समय गांधीजी ने राष्ट्रीय आन्दोलन के क्षेत्र मे पदार्पण किया, तव भारत के राजनीतिक नेता ब्रिटिश साम्राराज्य की वदना करने को ही अपना परम सौभाग्य समझते थे। गाधीजी के प्रभाव से राष्ट्रीय आन्दोलन ने वास्तविक रूप धारण किया। वह कुछ प्रमुख व्यक्तियों की 'भाषण-प्रतियोगिता' की स्थिति से विकसित होकर सम्पूर्ण देश की वहुसख्यक जनता का जनतन्त्रात्मक स्वातन्त्र्य-संग्राम वन गया। परन्तु उस सग्राम के लिये गांधीजी ने देश को जो अस्त्र दिये, वे जितने अनूठे थे, उतने ही भारतीयो जैसी दीर्घकाल मे नि शस्त्र चली आ रही जनता के लिये उपयुक्त भी। सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के शातिपूर्ण हथियारो से ब्रिटेन जैसी प्रचड शक्ति को भारत छोड़ने पर वाध्य किया जा सकता है, इस वात पर प्रारम्भ मे वहुत कम लोगो ने विश्वास किया। परन्तु उस 'लंगोटी वाले वावा' को अपने सिद्धान्तों और साधनो की शुद्धता और उपयोगिता पर अटल

विश्वास था। उसी के बल पर वह अन्य अनेक लोगो को अपना समर्थक और अनुयायी बनाने मे सफल हुए। परिणामतः देश के कोने-कोने मे जागृति की लहर दौड गई। और अन्तत १९४७ ई० मे ब्रिटिश शासन को विवश होकर भारत पर से अपनी प्रभु-सत्ता हटानी पडी, यद्यपि जाते-जाते भी वह भारत पर एक अंतिम प्रहार करता गया, और शतियो से अखड चले आ रहे इस देश को दो भागो मे विभाजित कर 'पाकिस्तान' नाम का एक स्थायी शत्रु भारत की छाती पर बिठा गया।

परन्तु यहाँ देखने की बात केवल यह है कि यह तथाकथित 'पाकिस्तान' भी केवल एक व्यक्ति की सूझ और आत्म बल का ही परिणाम है। व्यक्ति का नाम था मुहम्मद अली जिनाह। "भारत नाम के महाद्वीप मे एक नही, बल्कि दो राष्ट्र है, जिन्हें अलग-अलग स्वतन्त्र देश क मिलने चाहिएँ—"जिनाह की इस स्थापना पर भारतीय नेता ही नही, बल्कि प्रारम्भ मे स्वयं ब्रिटिश सरकार भी चकित रह गई। कांग्रेस के प्रमुख नेता, जिनमे केवल गाँधीजी ही अन्त तक अपने वचन पर दृढ रहे, देश विभाजन को गाय के टुकडे करने के समान बतलाते थे। परन्तु उस 'आत्मविश्वास की मूर्ति' जिनाह ने समूचे जगत को सम्बो-धित कर कहा कि 'सबसे पहले जो व्यक्ति छतरी लेकर निकला होगा, उस पर लोग हँसे होगे। परन्तु अब सभी लोग धूप अथवा वर्षा मे छतरी लेकर चलते है, और देखने वालो को इस पर कुछ भी अचभा नही होता।" उसका आशय यह था कि आज आप पाकिस्तान के अयुक्त और असगत होने की लाख दलीले दे, पर यह निश्चित है कि यह 'अद्भुत देश', जिसके दो खडो के बीच डेढ हजार मील का परराष्ट्रीय क्षेत्र होगा, और नाग-रिको में धर्म के सिवा और कोई भी बात सामान्य नही होगी, अस्तित्व मे आएगा अवश्य। कहते है कि अकेले जिनाह को छोड

कर स्वय मुस्लिम लीग के और किसी भी बड़े नेता को इस योजना के व्यवहार्य होने का विश्वास नही था। वे इस माग को केवल सौदेबाजी का एक उपयोगी माधन समझते थे। परन्तु आज वही 'अकल्पनीय' देश ठोस यथार्थ के रूप मे हमारे सामने विद्यमान है। और भले ही हम धर्मनिर्पेक्षता के भ्रम मे पड़े रहें, पर यह तथ्य है कि अखडित भारत के मुसलमानों ने एक पृथक राष्ट्र और अभारतीय जाति होने की धारणा को अपने आचार-विचार और व्यवहार से पुष्ट और प्रमाणित कर दिया है। एक व्यक्ति के आत्मविश्वास का इतना व्यापक प्रभाव इतिहास में विरले ही दृष्टिगत होता है।

नि.सदेह वास्तविक महत्ता और जीवन का सुख-आनन्द भी उन्ही लोगों के लिए है, जो सघर्ष कर सकते है। चेष्टा और अध्यवसाय से दासपुत्रो को मत्री, कृषको के बेटों को मुकुटधारी राजा, और सेवको की सतान को राष्ट्रो के भाग्य-निर्माता बनते देखा गया है। अविरत परिश्रम और प्रयत्न से वे लोग भी प्रसिद्धि और अमरता को प्राप्त कर सकते हैं, जो किसी स्वीकृत विश्व-विद्यालय से शिक्षा-सम्पन्न नही होते। परन्तु कोई व्यक्ति तब तक सघर्ष के लिए उद्यत नही होता, जब तक कि उसे इस बात का विश्वास न हो कि जिस अभियान मे वह भाग लेने जा रहा है, उसमे वह विजयी हो सकता है, और जिस महान और कठिन कार्य को पूरा करने का वह सकल्प कर रहा है उसे सम्पन्न करने की योग्यता भी वह रखता है। आप उन महापुरुषो की जीवनियो का अध्ययन करें, जिन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में जन्म लेने और पालितपोषित होने के बावजूद सफलता को देवो के साक्षात दर्शन किए, तो आपको ज्ञात होगा कि वे अपनी मनो कामना की सिद्धि मे केवल इसलिए सफल हुए कि वे आत्म विश्वासी थे। उन्हें उनके आत्मविश्वास ने ही संघर्ष के लिए

प्रेरित किया और आत्मविश्वास ने ही ऐसे क्षणो में उनका साहस बनाए रखा, जब उनकी सफलता की सम्भावनाएँ मद पड गई। इसलिए आत्मविश्वास और सफलता को एक ही बात के दो पक्ष मानना गलत नही है।

एमर्सन कहते है कि विजय के भागी केवल वही लोग होते है, जिन्हे अपनी विजय का पूर्ण विश्वास होता है। एक मनो-विज्ञान-विशेषज्ञ का कथन है कि आत्मविश्वास वह शक्ति है जो असम्भव को सम्भव बना देती है। एक प्रसिद्ध डाक्टर लिखते है"आत्मविश्वास से ऐसे घाव भी भर जाते है, जो किसी भी मरहम से अच्छे नही हो सकते।" इसमे सदेह नही कि दुनिया मे कुछ लोग केवल इसलिए सफल नही होते कि उन्हे अपनी सफलता का विश्वास नही होता, और वे अपने बाहुबल पर भरोसा नही करते। वे तीक्ष्ण बुद्धि वाले होने पर भी अपनी बौद्धिक शक्तियो से केवल इसलिए काम नही ले सकते कि वे अपने को इसका अधिकारी ही नही समझते कि अपनी प्रतिभा के चमत्कार दिखाकर उन्नति करे आत्मविश्वास के अभाव से उन्हे अपना भविष्य बनाने का अवसर नही मिलता।

आप बडे-बडे कारखानो और कार्यालयो मे ऐसे व्यक्तियो को मामूली वेतन पर काम करते हुए देख सकते हैं, जो छात्रावस्था मे बडे होशियार और तेज माने जाते थे। परन्तु वे नहीं चमक सके और उन्नति के सोपान पर नही चढ सके, क्योकि उन्होने कभी बुद्धिमत्ता से समुचित काम नही लिया। वे चायखाने मे बैठकर कारखाने की शीघ्रकालिक प्रगति के उत्कृष्ट सुझाव प्रस्तुत कर सकते है, परन्तु उन्हे कहिए कि यही सुझाव अपने कारखाने के व्यवस्थापक के सामने पेश करे, तो वे झट से उत्तर देगे—"हमारे व्यवस्थापक के सामने ऐसे सुझाव पेश करना सूरज को चिराग दिखाने के समान है"—या वे 'छोटा मुँह बड़ी

वात' की लोकोक्ति का हवाला देकर अपने को सही साबित करने की कोशिश करेगे। वे स्वय सूर्य होते हुए भी अपने को दीपक समझते हैं, तो फिर उनकी दरिद्रता और कष्टों का प्रतिकार कैसे हो सकता है ? कुछ आश्चर्य नही कि ऐसे लोग तुच्छ वेतन पर सारा जीवन व्यतीत कर देते हैं।

मेरे एक घनिष्ट मित्र एक राज्य विधान-सभा के सदस्य है। वह कुछ दिनो तक संसदीय सचिव भी रह चुके है। एक दिन वातो-वातो में आपने रहस्योद्घाटन किया कि राज्य मत्री-मडल के एक प्रमुख सदस्य उनके समर्थन और योगदान से ही मन्त्री-पद प्राप्त करने मे सफल हुए है। इस पर मैं यह कहे बिना न रह सका कि जव आप इतना प्रभाव और इतनी प्रतिष्टा रखते हैं कि दूसरो को मंत्री-पद दिला सकते हैं, तो फिर आपने स्वय ही मंत्री बनने की इच्छा क्यों नही की, और संसदीय सचिव बने रहने पर ही संतोप क्यों कर लिया। सुन कर आपने अपनी तुच्छता का विवरण सुनाना शुरू कर दिया। मैं और मन्त्री-पद ! यह मुंह और मसूर की दाल ! अजी साहब, इसकी तो मैं कल्पना भी नही कर सकता !' यह था उनके उत्तर का सार परन्तु अभी इस वार्तालाप को छः मास भी नही बीते थे कि एक दिन वह मेरे कुछ कहे बिना ही कहने लगे—"आप ठीक कहते थे। मैं चाहता तो मंत्री बन सकता था। लेकिन मुझे अपनी योग्यता पर भरोसा न था। मुझे जरा भी विश्वास होता, तो शायद मैं उस मित्र से कुछ बेहतर ही मन्त्री सिद्ध होता, जिसे मन्त्री बनवाने के लिए मैंने रात-दिन एक कर दिया। अफ़सोस ! मैंने अपनी योग्यता पर विश्वास न किया। इस चूक पर मैं आजीवन पछताता रहूँगा।" मेरे उस मित्र की तरह अधिकतर लोग केवल इसलिए असफल रहते हैं, और बाद में पश्चाताप करते हैं कि उन्हे अपने पर विश्वास नही होता।

थामसग्रे अपनी विख्यात कविता में उन मोतियों के भाग्य पर खेद प्रकट करता है, जो अपनी चमक-दमक दिखाए बिना ही समुद्र के गर्भ मे पड़े रहते है, और उन फूलो के नसीब पर आँसू बहाता है जो बिना खिले ही मुरझा जाते हैं। कवि पोप भी ग्रे के स्वर मे स्वर मिला कर उन फूलो की दशा पर शोक व्यक्त करता है, जो जगल मे खिलते है। अपना सौदर्य और सुगधि जगल को ही अर्पित कर देते है। इसी प्रकार की भावनाओ की अभिव्यक्ति अनेक भारतीय कवियो की रचनाओ मे भी मिलती है। 'हसरत उन गु्ँचो पै है, जो बिन खिले मुरझा गए' उर्दू कविता की एक प्रसिद्ध पक्ति है।

जीवन मे इससे बढकर दु.ख की बात और क्या हो सकती है कि मोती अपनी चमक-दमक दिखाए बिना ही लुप्त हो जाएँ, और फूल अपनी महक से किसी का मन प्रफुल्लित किए बिना ही धूल मे मिल जाएँ। परन्तु इनसे भी ज्यादा दुखदायी और दयनीय स्थिति उन लोगो की है, जो सब कुछ करने की क्षमता रखते हुए भी अपने पर विश्वास नही करते। इसलिए अपनी योग्यता से न तो स्वयं लाभ उठाते है और न मानवता की कुछ सेवा ही करते है। ये दीन-हीन और दु खी लोग, जिनके चेहरे धूल से आवृत है, और जिन्हे तन ढाँपने के लिए कपड़े का एक टुकडा तक नसीब नही, जो वर्षो की दौड-धूप के बाद भी सुख शान्ति का मुँह नही देख सके, ये लोग सब जन्मसिद्ध क्षुद्र नही है। इनमे बीसियो दिव्य आत्माएँ भी है। परन्तु दरिद्रता और दुर्गती इनका पीछा नही छोड़ती। कारण वे अपनी वास्तविकता से परिचित नही है, वे स्वय को पहचान भी कैसे सकते है, जबकि उन्हे अपनी आत्मा पर भरोसा ही नही है, जबकि वे अपने बाहु-बल से काम लेने के लिए तैयार ही नही हैं।

भारत के प्रशसित खाद्य-मत्री स्वर्गीय श्री रफीएहमद किद

वाई, जिन्होने अन्न-नियंत्रण समाप्त कर गली-गली में अनाज विकवाया था, एक महान नेता और कुशल प्रशासक ही नही, वल्कि कई अन्य दृष्टियो से भी एक असाधारण व्यक्ति थे। उनके देहात पर पडित नेहरू ने उन्हे निम्न शब्दो मे श्रद्धांजली अर्पित की थी—"श्री किदवाई न तो जन्म से नेता थे, और न नेतृत्व उन पर ठूँसा गया। वह अपनी व्यक्तिगत साधना और सघर्ष से नेता वने" श्री किदवाई के जीवन-वृत का अध्ययन करने से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि उनकी पूँजी उनका आत्मविश्वास था। श्री किदवाई के आत्मविश्वास का इससे वढ कर प्रमाण और क्या होगा कि जिन दिनो में पहले-पहल पं० नेहरू ने प्रधान मत्री-पद के भारी वोझ से अवकाश लेने की इच्छा प्रकट की, और इस पर भारत भर मे चिन्ता व्याप्त हो गई, तव श्री किदवाई ने एक सार्वजनिक सभा मे भाषण करते हुये कहा कि "अगर प० नेहरू थक गये है और आराम करना चाहते हैं तो इस पर परेशान होने की क्या जरूरत है। मैं उनके स्थान पर प्रधान मत्री-पद सभालने के लिए तैयार हू।" और श्री किदवाई के इस दावे पर समूचे भारत मे किसी एक व्यक्ति ने भी, यहाँ तक कि उनके विरोधियो ने भी, न तो प्रतिवाद कया और न इसे आत्मश्लाघा अथवा असत्य पर ही आधारित वतलाया। इससे स्पष्ट है कि भारत का विचारशील समुदाए उन्हे वस्तुतः इस सम्मान का अधिकारी और इस महान् दायित्व-भार को सहन करने के योग्य समझता था। स्पष्ट है कि श्री किदवाई की महत्ता का रहस्य उनके आत्मविश्वास मे था। और प० नेहरू ने उनकी महानता को श्रद्धाजली अर्पित कर वास्तव में आत्म-विश्वास के महत्व को ही स्वीकार किया।

आज के जनतत्रीय युग मे नेतृत्व किसी पर शायद ही कभी ठूँसा जाता हो। साधारणतः सभी नेतागण अपने अविश्रांत

परिश्रम और निरन्तर सघर्ष के बाद ही राजनीतिक क्षितिज पर उदित होते है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की पुण्य स्मृति भारतवासियो के हृदय से कभी मिट नही सकती। वास्तव मे भारत को स्वतंत्रता दिलाने का श्रेय यदि किसी एक व्यक्ति को दिया जा सकता है, तो वह नेताजी बोस ही थे। उन्ही के द्वारा सगठित आजाद हिन्द फौज ने भारत की तत्कालीन सशस्त्र बाहिनियो मे भी देशभक्ति की भावना को उत्तेजित किया, जिसके फलस्वरूप उनमे ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध उठ खडे होने की शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। पहले नौसेना ने, और उसके बाद वायुसेना और स्थल सेना ने भी विदेशी शासको की भारत-विरोधी आज्ञाओ का पालन करने से इन्कार कर दिया। परिणामतः तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मत्री एटली को विवश होकर घोषणा करनी पडी कि भारती सेनाएँ अब हमारे प्रति निष्ठ नही रही है। और हमारे लिए यह सम्भव नही कि हम भारत पर अपना आधिपत्य जमाए रखने के लिए एक नए युद्ध मे उलझ जाएँ। इसलिए हम भारत को स्वतत्रता प्रदान करने का निश्चय कर चुके हैं। परन्तु यह परिस्थिति जिस महान व्यक्ति के कर्मयोग से उत्पन्न हुई, उसे भारतवासियो ने स्वयं अपना नेता नही बनाया था। वह नेता बना, तो अपनी निजी वीरता, सघर्ष और बलिदान से। बर्मा के मोर्चे पर जब वह एक बार अपने कुछ साथियो सहित ब्रिटिश विमानो की बम-वर्षा मे घिर गए, एक खाई मे पडे-पडे जनरल शाहनवाज ने उनसे अनुरोध किया कि उन्हे तुरन्त ही किसी अधिक सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाना चाहिए, क्योकि ब्रिटिश बम बहुत निकट ही फट रहे थे। इस पर नेताजी ने हँस कर उत्तर दिया—"वह गोली जो मेरा काम तमाम कर सकती है, अभी किसी ब्रिटिश कारखाने मे तैयार ही नही हुई।" और इतिहास साक्षी है कि नेताजी को ब्रिटिश सेनाओ के हाथो

कभी एक मामूली घाव भी नही लगा। वह वीरगति को प्राप्त हुए, तो रणक्षेत्र में शत्रु की गोली वर्षा से नही, वल्कि विमान दुर्घटना मे आग से जलकर। नेताजी यह सव कार्य कैसे कर पाए ? कलकत्ते मे अपने मकान के गिर्द कडे पहरे से निकल भागने से लेकर फार्मूसा में दुर्घटनाग्रस्त होने तक उनका जीवन वृत असाधारण साहस और अकल्पनीय उत्साह की कहानी मालूम पडती है। इस साहस और उत्साह की प्रेरणा उन्हे कहाँ से मिलती थी ? कहने की आवश्यकता नहीकि यह सव उनके आत्मविश्वास के वरदान थे—इस विश्वास के साथ कि भारत की स्वतन्त्रता-प्राप्ती उन्ही के हाथो वदी है। अव चाहे प्रकट मे वह इस साधना मे सफल न हुए हो, परन्तु जैसा कि हमने ऊपर लिखा, भारत के स्वतत्र होने मे निर्णयात्मक हाथ वास्तव में उन्ही का था। कुछ आश्चर्य नही कि भारत की समस्त नेतागीरी मे केवल सुभाष ही अपने साथियो के दिए हुए नाम—नेताजी—से प्रसिद्ध है।

हिलारी और तेनसिंह नोरके के नामो से कौन परिचित नही है ? इन दो वीर पुरुषो ने हिमालय मे एवरेस्ट की अजेय चोटी पर पांव रखने का सौभाग्य प्राप्त किया है। हिलारी को तो फिर भी महत्वाकांक्षी वनने की सभी सुविधाएं प्राप्त थी, क्योकि वह एक समुन्नत देश का सम्पन्न नागरिक है। परन्तु दार्जिलिग-निवासी गरीव नेपाली तेनसिंह को किस शक्ति ने इतना साहस प्रदान किया कि वह किशोरावस्था से ही इस महान सफलता का स्वप्न देखता आ रहा था ? यह उसका आत्म-विश्वास ही था कि निर्धन परिवार मे जन्म लेने और प्रायः निरक्षर रहने पर भी वह सर्वदा एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ने का स्वप्न देखता रहा। और इस स्वप्न को यथार्थ में परिणत करने के लिए उसने एवरेस्ट विजय के प्रायः हर अभियान मे भाग

लिया। एक मामूली शेरपा के पद से आरम्भ करके वह एक महान पर्वतारोही बन गया, और एवरेस्ट-विजेता कहलाया।

स्वेज नहर के झगडे मे मिस्र पर ब्रिटेन और फ्रास के सयुक्त आक्रमण के समय प्रधान नासिर को किस शक्ति ने दृढ और अविचलित रखा ? मिस्र के पास एक साथ विश्व के इन दो शक्तिशाली राष्ट्रो का मुकाबला करने के लिए कुछ भी नही था। फिर भी नासिर यही कहते रहे कि मिस्र कभी हथियार नहीं डालेगा, और ब्रिटेन को मिस्र के रेगिस्तानो मे एक-एक कण के लिए अपना रक्त बहाना पडेगा। नासिर का यह आत्मविश्वास ही था, जिसके बल-बूते पर वह एक पिछड़ी और निर्बल जाति को ब्रिटेन जैसे शत्रु के मुकाबले पर दृढ रख सके और अततः उसे मिस्र से भागने पर बाध्य करने मे सफल हुए।

युगोस्लाविया जैसे छोटे देश के प्रधान मार्शल टीटो रूसी अधिनायक स्टालिन के साथ अपने मत-भेद मे किस शक्ति के सहारे डटे रहे ? स्टालिन चाहता, तो एक दिन मे युगोस्लाविया की ईंट से ईंट बजा देता। लेकिन उसे कभी मौखिक निन्दा से अधिक कदम बढाने का साहस न हुआ। क्यो ? केवल इसलिए कि टीटो को अपने मत की सत्यता और अपने आत्मबल पर पूर्ण विश्वास था। इस आत्मविश्वास के बल पर टीटो ने कभी हार स्वीकार न की, और स्टालिन जैसा क्रूर अधिनायक मरते दम तक उसका बाल बाका न कर सका।

इन्डोनेशिया मे प्राय. ही दाएँ या बाएँ पक्ष वाले तत्वो की ओर से सशस्त्र विद्रोह होते रहते है। एक बार प्रधान सुकार्नो जापान मे थे, कि विद्रोह बहुत प्रचड रूप धारण कर गया। आप से शीघ्रातिशीघ्र स्वदेश पहुँचने का अनुरोध किया गया। तो आपने हँसकर उत्तर दिया कि क्या मैं इस आये दिन के उपद्रव के कारण अपने भ्रमण का कार्यक्रम ही बदल दूं ? सुकार्नो

ने जापान मे बैठे-बैठे ही अपने मन्त्रियों को आवश्यक कार्यवाही के सम्बन्ध मे उपयुक्त निर्देश दिये, और अपने नियत समय पर ही राजधानी में लौटे। सुकार्नो को अपने पर इतना विश्वास है कि वह सोच भी नही सकते कि इन्डोनेशिया उनके बिना जीवित रह सकता है।

यही बात हमारे प्रिय प्रधान मंत्री पं० नेहरू के लिये भी सत्य थी। आप भी अक्सर कहते रहते थे कि आप प्रधान मन्त्री-पद पर रहे, या न रहे, परन्तु देश के लिए आपका महत्व बराबर बना रहेगा। एक बार अपने एक विदेशी पत्रकार के साथ वार्ता करते हुए हँसी मे कहा था, "आप जानते हैं, मै बड़ा आत्मश्लाघी हूँ। मै समझता हूँ कि देश को मेरी जरूरत बराबर बनी रहेगी" यह आत्मविश्वास यों ही उत्पन्न नही हो जाता, इसके पीछे बड़ी वास्तविकता होती है। नेहरूजी ने अपने आत्मविश्वास से केवल स्वय को ही दृढ नही रखा, बल्कि वह सम्पूर्ण देश को प्रगति-मार्ग पर सुदृढ बनाने मे सफल हुए है। यह आप की ही महानता है कि भारत को आज समूचे विश्व में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। ये बडी-बडी योजनाएँ, ये देशोन्नति और जन-प्रगति के महान अभियान सब आप की ही देन है। और आप इन महान कल्पनाओं को कार्यान्वित करने का साहस और शक्ति अपने आत्मविश्वास से उपलब्ध करते है। देश आपका कितना ऋणी है, इस बात के मूल्यांकन का अभी समय नही आया, लेकिन इतिहास साक्षी रहेगा कि जैसे सुभाष के बिना अभी बहुत वर्षों तक स्वतंत्रता-प्राप्ति एक स्वप्न ही रहती, उसी तरह नेहरूजी के बिना इतना अल्प समय मे उस का दृढीकरण भी अकल्पनीय था।

तो फिर यह क्या परिस्थिति है, अर्थात् जब हम अपने व्यक्ति-गत आवश्यकताओं और सम्पर्क से राष्ट्रों के नेता, विद्वान वैज्ञानिक,

सफल आविष्कारक और योग्य व्यापारी वन सकते है, तो पिछडे पर और हीनता पर सतोष कर लेना मूर्खता नही तो और क्या है ? क्या आपका यह कर्त्तव्य नही कि 'अविश्वास' के कारावास से वाहर निकले ? अपने पर विश्वास करे, अपनी वौद्धिक योग्यता से काम ले, और जीवन-सघर्ष मे पुरुषोचित ढग से भाग लेकर अपना उचित अश उपलब्ध करे ? यदि आपने आज तक इस समस्या पर विचार नही किया, यदि आज तक आप यह अनुभव ही नही कर सके कि आप भी एक महान व्यक्ति है, और अपने भीतर के महान पुरुष को जगा कर अर्थात् अपनी सम्पूर्ण योग्यता से काम लेकर वह सब कुछ प्राप्त कर सकते है, जिसके आप अभिलाषी है, तो अपने को पीडित अत्याचारित समझने और अपनी दुर्दशा पर अश्रुपात करने की आवश्यकता नही । क्योकि आप अव भी अपनी विगडी वना सकते हैं, और आत्मविश्वासी वनकर अपनी भूलो और त्रुटियो का परिशोध करके सफलता के रगमहल मे प्रवेश कर सकते है । आवश्यकता केवल इतनी है कि आप अपने को हीन और तुच्छ न समझे, अपने विचार ऊँचे रखे, सदैव आशावादी रहे, कठिनाइयो का दृढता से मुकाविला करे और अपनी दुर्बलताओ को दूर करने पर तत्पर रहे । उदाहरण के लिए यदि आपको बचपन मे ही स्कूल छोडने पर वाध्य होना पडा था, तो इस कारण घबराने और निराश होने की कोई जरूरत नही है । बैंजमन् डिज्राइली की तरह आप भी निजी अध्ययन से विद्धवान वन सकते है । आप नाम मात्र के चंदे से किसी अच्छी पुस्तकालय का सदस्य वनकर ज्ञान-विज्ञान और कला-सस्कृति से सम्वन्धित उत्तम पुस्तके पढ़ सकते है । आप जिस युग में रह रहे है, इसमे निजी शिक्षालयों का प्राचुर्य है । प्रत्येक उल्लेखनीय नगर-उपनगर मे ऐसी वीसियो सस्थाये है, जहाँ मामूली शुल्क पर हर प्रकार वैज्ञानिक प्रावि-

घिक अथवा सांस्कृतिक विषयों की शिक्षा दी जाती है। ऐसी ही सुविधाएँ आज घर बैठे डाक द्वारा भी प्राप्त की जा सकती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अपनी अवस्था में सुधार करके तथा अपनी मदद आप करके उन्नति करने के जितने उत्तम अवसर वर्तमान युग मे प्राप्य हैं, इतने अतीत में कभी नहीं थे।

आज के जनतंत्रीय युग मे समुन्नत देशों का शासन-सूत्र जिन लोगो के हाथ मे है, उनमे अधिकाश का प्रारम्भिक जीवन और परिस्थितियाँ आप से बेहतर नही थी। आज के बड़े-बड़े उद्योगपतियो, लेखकों और कलाविदों की जीवनियो का अध्ययन करने पर यह देखकर आश्चर्य होता है। कि इनमे से बहुत कम प्रचलित अर्थों में उच्च शिक्षा पाए हुए है। इसलिए मैं कहता हूँ कि अपनी विवशता की कहानियाँ घड़ने और स्वय को आत्म-तुच्छता के भ्रमजाल मे डालने की बजाए अपने जीवन के पुनः निर्माण का सकल्प कीजिए। अपने पर विश्वास कीजिए, अपना लक्ष्य स्पष्टतः निर्धारित कीजिए और उस तक पहुँचने के लिए जिस मार्ग पर चलना उचित है, उस पर चलने की योग्यता प्राप्त कीजिए। और जब आप अनुभव करें कि आप अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए तैयार हो चुके हैं, और आपने स्वयं को उन सब साधनो से युक्त कर लिए है, जिनकी मार्ग में आवश्यकता होगी, तो फिर आप यात्रारम्भ में एक क्षण का भी विलम्ब न कीजिए

याद रखिए, अकर्मण्यत, आलस्य और विलास की ये परियाँ जो मार्ग में आपको मिलती है; जो थोड़ा रुकने और विश्राम करने का परामर्श देती हैं, अपने यौवन और सौदर्य से आपका मन बहलाने का प्रस्ताव करती है, ये सुख की नीद सुलाने वाली परियाँ आपकी हितचिंतक नही हैं। ये इससे पहले कितने ही पथिकों को इसी वासना जाल में फँसाकर विनष्ट कर चुकी हैं।

इसलिए इनकी मीठी-मीठी बातो मे न आइये, बल्कि इनकी ओर आँख उठाकर भी न देखिए।—और ये झूठी शंकाओं के दैत्य, जिनके पाँव धरती पर और सिर आकाश में हैं, जिनके, आतंक से आपके हाथ-पैर शिथिल हो रहे है और जिनकी डरावनी आवाज़ बार-बार आपके कानों मे गूँज कर आपके प्राण उडा रही है—ठहरो, आगे न बढो, वरना तुम्हारी हड्डियाँ तक सुर्मा कर दी जाएगी।—इन कल्पित आवाजों से डरने और आतंकित होने की कोई जरूरत नही है, क्योकि इनका अस्तित्व केवल तभी तक है, जब तक कि आप अपने पर भरोसा नही करते, और अकारण ही भयभीत होने पर आमादा हैं। इनसे निपटने का सही तरीका यह है कि इन्हे मृत समझिए, और कदम आगे ही बढ़ाते जाइए। यदि आपने दृढता से कदम बढ़ाया. तो आप पर शीघ्र ही यह भेद खुल जायेगा कि दुनियाँ की कोई शक्ति आपका रास्ता रोकने का साहस नही कर सकती।

"मैं प्रधान मत्री बन के रहूँगा," "मैं प्रधान-मंत्री-पद का बोझ उठाने को तैयार हूँ," मैं आखिर दम तक लड़ूँगा," विजय हमारी है," "स्वतन्त्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है," "भारत आजाद हो कर रहेगा," "मेरा बध करने वाली गोली अभी तैयार ही नही हुई"—ये ऐतिहासिक वाक्य जिन व्यक्तियों के मूँह से निकले उनमे से अधिकतर गरीब घरानों मे पैदा हुए। उनका बचपन दरिद्रता मे व्यतीत हुआ। उन्होने अपने जीवन मे बडे कष्ठ सहे। माता पिता की साधनहीनता के कारण सामान्य शिक्षा से भी वंचित रहे। परन्तु इन सब कठिनाइयो के बावजूद वे ख्याति, उपाधि और धन-ऐश्वर्य प्राप्त करने में सफल हुए। कारण उन्हे अपने आतम-बल और बाहुबल पर भरोसा था, और अपने लक्ष्य के सही होने का विश्वास था।

फिर आप क्यों आत्मविश्वास के महत्त्व को स्वीकार न करें ? आप क्यो इस उपाय से काम लेकर अपनी बिगडी न बनाएँ ? अपने लिए कोई उच्च लक्ष्य निर्धारित क्यो न करें ? श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ, उत्तम कोटि के लेखक, व्यापारी या उद्योगपति बनने का स्वप्न क्यो न देखें। आप भी "मै सफलता के उच्च शिखर पर पहुँच कर रहूँगा" या मैं बौद्धिक जगत मे नाम पैदा करके रहूँगा' जैसे संकल्प-वाक्यो से अपने अंतःकरण मे स्फूर्ति का संचार क्यो न करें, और अपनी तथाकथित वर्तमान हीनता, असहायता और विवशता पर संतोष क्यो कर लें ? इसलिए कि आप किशोरावस्था मे इस तथ्य से परिचित न हो सके कि आप वास्तव मे हीन, असहाय और विवश नही है, और यह कि केवल आत्मविश्वास के बल-बूते पर बडे-से-बडा पद प्राप्त कर सकते है। यदि इस सवाल का जवाब 'हां' मे है, तो अब भी बीते दिनो की गलतियों को दूर करने पर तत्पर हो जाइए। आज से सही अर्थो मे जीवित रहने का संकल्प कर लीजिए। डा० नॉर्मन पील कहते है कि इन्सान सही मानों में जिन्दा रहना तभी से शुरू करता है, जबकि वह अपनी वास्तविकता से परिचित हो जाता है।

यह परिवर्तन जीवन मे किसी भी स्थल पर हो सकता है। और इसी समय से सार्थक और उपयोगी जीवन का प्रारम्भ होता है। डा० पील का विचार है कि लोग, जो हमें चलते-फिरते दिखाई देते है, यद्यपि सभी प्रकट मे जीवित है, परन्तु वास्तव में इनमें अधिकतर अधमरे या अर्द्धजीवित ही होते है। सही अर्थो मे जीवित केवल वही होते है, जो जीवन के उद्देश्य और प्रयोजन को समझते है, और अपनी वास्तविकता को पहचान कर अपने कर्तव्य का पालन करते है। इसलिए आप जीवन के बहुमूल्य क्षणों का अपव्यय न कीजिए, और अभी से पूर्ण

जीवन व्यतीत करने का निश्चय कर लीजिये। वेद का सुन्दर वाक्य है उद्यान ते पुरुष नावयानम् अथर्ववेद—अर्थात पुरुष ! तुझे ऊपर उठना है, न कि नीचे गिरना। मनुष्य को निरंतर ऊपर उठना चाहिए, उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होना चाहिए। इसी मे जीवन की सार्थकता है।

अपनी वास्तविकता को पहचानिए !

आत्मविश्वास बहुत कुछ निर्भर करता है आत्मज्ञान पर। जो लोग अपनी वास्तविकता से परिचित और अपनी योग्यता के जानकार नही होते, वे कठिनाई से ही अपने व्यक्तित्व को प्रकट करने, कोई महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करने, उच्च पद प्राप्त करने, नेतृत्व सभालने अथवा दरिद्रता का अंत करके 'हजारों में एक बनने की चेष्टा करते है। चूंकि वे अपनी निर्माणात्मक क्षमताओं से परिचित नहीं होते, इस लिए वे स्वयं को भाग्यहीन समझ बैठते हैं, और पैत्रिक सम्पत्ति अथवा संयोग से मिले धन पर ही संतोष कर बैठ जाते हैं। वे कल्पना भी नही कर सकते कि अपनी योग्यता से यथोचित काम लेकर,एक मामूली कलर्क किसी कार्यालय का प्रधान व्यवस्थापक और एक साधारण नागरिक किसी देश का राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री बन सकता है। उनका जीवन-दर्शन सम्भवतः यह होता है कि गरीब लड़के व्यक्तिगत चेष्टा से धनवान नही बन सकते। एक साधारण नागरिक को राष्ट्रपति बनने का स्वप्न देखने का कोई अधिकार नहीं। और विद्या रूपी सागर से श्रेष्ठता के मोती प्राप्त करने का अधिकार भी केवल उन्ही लोगो को है, जो विश्वविद्यालयो से पदवी-प्राप्त हों। ऐसे लोग 'ज्यो के ज्यों' के सिद्धांत के समर्थक होते हैं और उसे असंशोधनीय समझते है। यह विचारो की तुच्छता, दृष्टि

की क्षुद्रता और हीनभावना आत्मविश्वास के लिए घातक विष के समान है। यह अनभिज्ञता मनु की सतान को अपना उचित अधिकार सिद्ध करने पर तत्पर नही होने देती। इस लिए आत्म-परिचय को आत्मविश्वास का पहला कदम कहना अनुचित नही है।

'अपने को पहचानिए'—प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक सुक्रात का यह सक्षिप्त वाक्य सब युगो की सचाइयो का सार है। मनुष्य व्यक्तिगत उत्कर्ष और निजी शक्ति का इच्छुक हो, देश और राष्ट्र की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा के लिए कोई मार्मिक कार्य करना चाहता हो, या मनुष्य मात्र के कल्याणार्थ किसी नए अविष्कार को पूर्णता के स्तर तक पहुँचाने के लिए प्रयत्न-शीला हो, वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति मे तभी सफल हो सकता है, जबकि वह अपनी वास्तविकता से परिचित हो, क्योकि इस परिचय अथवा आत्मज्ञान के बिना वह अपनी योग्यता और सामर्थ्य पर कभी विश्वास नही कर सकता। और इस विश्वास के बिना वह किसी काम को सम्पन्न करने के लिए सिर-धड़ की बाजी नही लगा सकता।

मुसलमानों की धार्मिक किताब 'कुरान' मे आया है कि मनुष्य की सृष्टि के समय कुछ सहृदय फरिश्तो ने उसे अपनी ओर से 'सतोष' का उपहार देना चाहा। परन्तु सृष्टिकर्त्ता ने इस सुझाव को स्वीकार न किया और कहा कि मनुष्य को सतोष का उप-हर देने का अर्थ उसका अहित करना है, क्योकि इससे वह संतोषी बन जाएगा, और अपनी रचनात्मक शक्तियो से काम नही लेगा। दूसरे शब्दो में वह स्वय को उस पद का अधिकारी सिद्ध नही कर सकेगा, जो उसे दिया जा रहा है (इस्लाम धर्म के अनुसार परमेश्वर ने मनुष्य को धरती पर अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया है) परन्तु विधाता की इस सावधानी के बावजूद

अधिकतर लोग अपने को पहचानने की कोशिश नहीं करते, और अपनी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों से काम नहीं लेते।

विलियम जेम्स का यह कथन गलत नहीं है कि मनुष्य साधारणतः अपनी शक्ति के एक तुच्छ अंश से ही काम लेता है, और शेष बड़ा अंश उपयोग में नहीं लाता। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्राइड का कहना है कि औसत आदमी अपनी बौद्धिक शक्ति के केवल पांचवें अंश को ही उपयोग में लाता है। स्मरण रखिए कि यहां औसत आदमी से अभिप्राय यूरोप के समुन्नत देशों का औसत आदमी है, जोकि साधारणतः साक्षर और अपेक्षया अधिक समझदार होता है। जब यूरोप के लोगों की यह दशा है, तो आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि एशियायी देशों के लोग, जिनमें दुर्भाग्य से भारतवासी भी सम्मिलित है, और जो अज्ञानता संकीर्णहृदयता और विचारशून्यता में अपना सानी नहीं रखते, अपनी वास्तविक बौद्धिक शक्ति के कितने अंश से काम लेते होंगे।

झोपडो को गगनचुम्बी राजप्रसाद मे बदल सकता है, पैदल चलने के कष्ट से बचने और समय बचाने के लिए द्रुतगामी मोटरें और हवा से बातें करने वाले विमान निर्मित कर सकता है; जगली फल-फूलो पर गुजारा करने की बजाए तरह-तरह के स्वादिष्ट भोजन बनाने की कला विकसित कर सकता है, तो उस समय उसकी प्रगति की क्या स्थिति होगी, जब वह २० प्रतिशत की बजाए ४० या ५० प्रतिशत बौद्धिक शक्ति से काम लेने पर तैयार हो जाएगा।

इस समस्या पर तनिक गम्भीरता से विचार कीजिए। यदि हम व्यक्तिगत रूप से अपनी ८० प्रतिशत बौद्धिक शक्ति का अपव्यय न करे, बल्कि इस बडे अश मे से कुछ और शक्ति अपनी दशा सुधारने अर्थात कुछ सीखने और आगे बढने मे लगाएँ; अपनी दरिद्रता, साधनहीनता, अल्पज्ञान पर सन्तोष न करते हुए उनमे मुक्तिलाभ के लिए सचेष्ट हो, अपनी वास्तविकता से परिचित होकर बाहुबल पर विश्वास करने के अभ्यस्त हो जाएँ, और इस आत्मविश्वास के बल पर महानता के शिखर को छू लेने का प्रयास कर, तो हमारा यह प्रयास कितनी शीघ्रता से सफल हो सकता है।

एक पत्रकार ने प्रसिद्ध मनोविज्ञान-विशेषज्ञ डा० विल्बर्ड ऐलन से प्रश्न किया कि क्या कारण है कि अधिकतर लोग अधूरा जीवन व्यतीत करते है? उत्तर में डा० ऐलन ने कहा—"इसका जवाब बड़ा सरल है। हम मे से अधिकतर लोग अपनी योग्यताओ को प्रकाशित होने का मौका नही देते। हम महान कार्य कर सकते है। परन्तु हम अपने इस सामर्थ्य से परिचित नहीं होते। हमारे शरीर के भीतर महान शक्तिया निहित है। परन्तु हम उनसे काम नहीं लेते, जिससे इन्हे उन मशीनों की तरह जग लग जाता है, जो उपयोग मे न लाई जा रही हो। आप इसे अति-

श्याक्ति न समझें। हमे शारीरिक इन्द्रियाँ इसीलिए दी गई हैं कि हम उनसे काम ले। परन्तु सँसार में अधिकतर लोग उनसे काम लेना पाप तुल्य सनझते है। मेरा अभिप्राय आलसी लोगों से है। वहुत से लोग बौद्धिक शक्ति से काम नही लेते, चिन्नत-मनन नही करते, दूसरों के विचारों पर गुजारा करते है, अथवा सुनी-सुनाई वातों से काम चला लेते हैं। यही कारण है कि वे जीवन के वास्तविक सुखों और पुरस्कारो से वँचित रहते हैं।"

वस्तुत: हममे से अधिकतर लोगों कों जीवनानन्द इसलिए अनुभव नही होता ; हम प्रतियोगता-परीक्षा में इसलिए नही वैठते, अपने समवयस्कों से आगे वढने का साहस इसलिए नही करते अपने विचारो की अभिव्यक्ति में इसलिए संकोच करते हैं, और आत्मबल पर इसलिए भरोसा नहीं करते क्योंकि हम अपने भीतर के महान पुरुष को नही पहचानते, अपनी बौद्धिक शक्ति से काम नही लेते और सोच-विचार की आदत नही डालते। उर्दू के प्रसिद्ध कवि डा० इकवाल ने क्या खूब कहा है—

अपनी असलीयत से हो आगाह
ऐ गाफिल कि तू।
क़तरा है, लेकिन मिसाले वहरे
वेपायाँ भी है।

इसे कवि की सूक्ष्म कल्पना न समझें। यह मानव-रूपी क़तरा (बूँद) वास्तव में 'वहरे वेपायाँ' (असीम सागर) है। मनुष्य वस्तुत: असीम शक्ति और अपरिमित वल-निधि का स्वामी है। उसे 'कालशिरोमणि' कहा गया है। वह निर्माण और रचना का निर्णायक है।

एक अंग्रेज साहित्यकार ने इस 'दुर्बल जीव'—के सम्वन्ध में लिखा है—नक्षत्र लुप्त हो जायेंगे, सूर्य का प्रकाश मद पड़ जाएगा। परन्तु मनुष्य की आत्मा सदा तेजवान रहेगी। उस

तक काल का हाथी कभी न पहुँच सकेगा। यह गीता के उपदेश के बिल्कुल अनुकूल है। मनुशास्त्र में आया है—यमो वैवस्वतो देवो मस्त्तवैषहृदिस्थित· अर्थात, पुरुष ! तेरे हृदय में सर्वान्तार्यामी सर्वनियामक आत्मदेव का वास है।

कवियो और दार्शनिको के अलावा वैज्ञानिक भी मानवी आत्मा के गुण गाते है, और उसे अविनाशी, शाश्वत और सृष्टि का स्वामी स्वीकार करते है। डा० कैरल लिखते हैं। मनुष्य की सृष्टि पहाड़ो, दरियाओं और समुद्रो के मापदंड से हुई। अर्थात जिस शक्ति की वाहिकाएँ ये प्राकृतिक रचनाएँ है, वही शक्ति इस 'मिट्टी केपुतले' मे है। परन्तु यह शक्ति विशुद्ध शरीरिक नही है। मनुष्य की एक और दुनिया भी है, और वह उसके अंत.करण की दुनिया है। आत्मा, बुद्धि और मन की यह दुनिया काल और देश के प्रतिबधो से मुक्त है। यदि इस आन्तरिक जगत में मनुष्य की आत्मा शुद्ध-पवित्र, सकल्प दृढ और सुस्थिल तथा अभिलाषा प्रबल और अगाघ हो, तो वह बाह्य जगत को भी अपने अधीन कर सकता है।

यदि आप अपने अत:करण की एक झलक देख ले; विधाता ने बुद्धि और विवेक के रूप जो विधि आपको प्रदान की है, उसका पता लगा ले तो फिर आप गरीबी, बेबसी और माँगे-ताँगे की समझ पर सँतोष नही कर सकते। यदि आप एक बार अपनी हकीक़त को जान ले, तो फिर आप किसी के पीछे चलने पर राजी नही हो सकते। मानवी महिमा के ज्ञाता एमर्सन कहते है। विद्यारूपी आकाश मे जो तारे चमक रहे हें, उनके प्रकाश से ज्यादा तेजवान मनुष्य के अपने मस्तिक और विवेक की ज्योति हे। मनुष्य को इसके दर्शन करने का प्रयत्न करना चाहिए। आधुनिक युग के इस विचारक का यह कथन बहुमूल्य और सचाई पर आधारित है।

स्रष्टा ने कोई से दो इन्सानो को एक सा नही बनाया। जो कुछ आप है, वह और कोई नही बन सकता। इसलिए अपने भीतर झाँकिए, प्रत्येक समस्या पर स्वतंत्रतापूर्वक विचार कीजिये और अपनी सम्मति की अभिव्यक्ति मे कभी संकोच न कीजिए। आपकी सम्मति मूल्यवान है। हो सकता है वह अन्य विचारकों के मत से अधिक महत्वपूर्ण समझी जाए। तनिक उसे प्रकट तो कर देखिए।

दुनिया केवल उन्ही विचारको, दार्शनिको, लेखकों, कवियो, वैज्ञानिकों और विद्वानो का आदर करती है, तथा उनकी कृति की सराहना करती है, जिनके विचारों और मताभिव्यक्त में नवीनता होती है। अश्वघोष, कालीदास, शैक्स्पीयर, गोयटे, सादी, बर्नार्डशा, गालिब और रवीन्द्रनाथ इसलिए सम्मानित और आदरणीय है कि उन्होंने अपने आतरिक प्रकाश को प्रस्फुटित किया। इनमे से कोई भी पुरातन मार्ग पर चलकर सफलता और प्रसिद्धि के मदिर मे प्रविष्ट नही हुआ। इसलिए अपना सम्मान कीजिए, स्वाभिमानी बनिए। स्वय को असहाय न समझिए. किसी से दब कर न रहिए। छाती तान कर चलिए, किसी की खुशामद न कीजिए। अपने विचारो और सम्मतियो की अभिव्यक्ति मे संकोच न कीजिए। आप एक विशिष्ट व्यक्ति है। आपका व्यक्तित्व सबसे प्रखर, आपकी सम्मति सबसे सुस्थित और आपका विचार सबसे ज्यादा मूल्यवान हो सकते हैं। जब न्यूनटन ने गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त प्रस्तुत किया, तब ऐसा विचार धर्म विरोधी तक समझा गया। परन्तु इस कारण न्यूटन ने मत-परिवर्तन नही कर लिया। कॉपरनिकस, ब्रूनो और गलेलियो को पृथ्वी की गतिशीलता और सौर-परिवार सम्बंधी अपनी स्थापना की रक्षा के लिए प्राणों तक को दांव पर लगाना पड़ा। इसलिए आपभी इन महापुरुषो की तरह स्वतंत्र विचार-पद्धति

को अपना धर्म बना लीजिए। अवश्य पहले से यह जमानत तो नही दी जा सकती कि आपका हर विचार या सिद्धात किसी नए आविष्कार की भूमिका जरूर ही बनेगा, परन्तु इसकी सम्भावना प्रकट है। इसलिए आप अपने अस्तित्व को दुनिया के सामने पेश तो कीजिए।

जब आप अपनी वास्तविकता से परिचित हो जाएँगे तो फिर आपको अपने पर, अपने बाहुबल पर और दैवी सहायता पर निर्भर करने मे कोई कठिनाई अनुभव नही होगी। इसमे सदेह नही कि आप महापुरुषो की कीर्ति और उनके उच्च एव पवित्र विचारो से लाभ उठाएगे। परतु लाभ उठाने का अर्थ स्वय अपनी विचार-शक्ति का द्वार बन्द कर देना नही है। एक बार जब आपको विश्वास हो जायेगा कि आप अतीत के महानुभावो की अपेक्षा मानवी जगत की अधिक सेवा कर सकते है, तो आप नि सकोच होकर घटना-सागर मे कूद पडेगे। जब आप अपना सम्मान स्वय करेंगे। तो आपके सहयोगी और साथी भी आपका सम्मान करेगे। जैसेकि फारसी कवि बुखारी ने एक स्थान पर कहा है—"मुझ जैसा नश्वर मनुष्य भी ऐश्वरीय सृष्टि मे त्रुटि ढूँढता है। परन्तु मै नतमस्तक हो जाता हूँ, जब अपनी कला का चमत्कार देखता हूँ।"

ऐसे ही आत्मज्ञान से आप वह शक्ति प्राप्त करेंगे, जो पहाड़ों को उखाड फेंकती है और जिसके बल पर पराक्रमी व्यक्ति किसी देश के शासक, सुयोग्य सेनापति या अपने समय के युगपुरुष बन जाते है। फिर आप किसी निर्धन परिवार मे जन्म लेने और प्रारम्भिक जीवन प्रतिकूल वातावरण में बिताने के बावजूद पदैश्वर्य और धन-समृद्धि की प्राप्ति को अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझेगे। आप अपनी उन त्रुटियो और दुर्बलताओ को दूर करने पर तत्पर हो जाएँगे, जो आपके अपने अभीष्ट लक्ष्य तक

पहुँचने में बाधक हैं। और तब आप छाती तान कर यह कहते हुए जीवन-संग्राम में कूद पड़ेंगे कि अब इस मैदान में विजय-वैभव-महानता और यश-कीर्ति मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।

मनु का पुत्र जब इस संकल्प और विश्वास के साथ जीवन की रण-भूमि मे प्रवेश करता है, तो सफलतारूपी दुल्हिन वर-म.ला लिए उसकी प्रतीक्षा करती है, और विजयश्री उसका स्वागत करने को तैयार रहती है। ऐसे मेधावी पुरुष को कोई पराभूत नही कर सकता, उसे अपने गन्तव्य पर पहुँचने से रोक नहीं मकता।

आप की मनोकामना क्या है ?

अपने को पहचानिए—यह मंतव्य प्राचीन यूनान के दार्शनिक सुक्रात का है। परन्तु आज के 'सुकत' इससे एक कदम और आगे बढकर कहते है—अपनी मनोकामना और अपनी उत्कँठा को पहचानिए। अर्थात यह मालूम कीजिए कि आप क्या चाहते है। प्रकट में यह विस्तार कुछ अनावश्यक सा जाना पडता है, क्योकि अपने को पहचानने मे अपने मनोरथों को पहचानना भी सम्मिलित है। परन्तु शतियो के अनुभव ने सिद्ध किया है कि अपनी वास्तवविकता को जानने का दावा करने वाले कुछ लोग केवल इसलिए सफल नही होते कि उन्हे जीवन की लम्बी यात्रा मे कभी यह मालूम ही नही होता कि वे क्या बनना चाहते है, और क्या बन सकते है। वे आत्मविश्वास और आत्कज्ञान के महत्व से तो परिचित होते है, परन्तु अपने निरन्तर सघर्ष और अविश्राँत परिश्रम का फल पाने से केवल इसलिए वचित रह जाते है कि वे ठीक से निश्चय नही कर पाते कि वे जीवन के किस विभाग मे उन्नति करने के लिए पैदा हुए है।

असफल शक्ति भी स्वय को उन्नति का पात्र समझता है, और अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियो से यथासम्भव काम भी लेता है। परन्तु दीर्घ कालीन सघर्ष के बाद भी सफलता की देवी के दर्शन नही कर पाता। और यदि कुछ सफलता

मिलती भी है, तो वह उसकी मनोकमना के अनुसार नही होती। इसपर वह वहुत हैरान और निराशा हो जाता है। कभी-कभी तो यह निराशा इतनी वढ जाती है कि वह इस सिद्धात पर ही आस्था गँवा वैठता है कि मनुष्य एक समर्थ और सत्तायुक्त जीव का नाम है, और यह कि वह अपनी आविष्कार-क्षमता से काम लेकर कोई महान कार्य कर सकता है, अथवा अपनी दरिद्रता, विवशता और असहायता को सुख-समृद्धि और सामर्थ्य मे परिणत कर सकता है। ऐसे लोगों की मनोवृत्ति पलायनवादी हो जाती है। उनका आत्मविश्वास केवल मौखिक और काल्पनिक ही वन कर रह जाता है। वे कभी तो वडे उत्साहित और आशा-पूर्ण दिखाई देते हैं, और कभी नैराश्य और साहसहीनता की मूर्ति वन जाते हैं। ऐसे एक प्रौढ सज्जन से मैं व्यक्तिगत रूप मे परिचित हू। वह जीवन भर ठोकरे खाने के वाद भी उन्नति के स्वप्न देखते रहते है, और वडे विश्वास के साथ कहते है कि वह एक महान व्यक्ति वन कर रहेगे। उनसे कहा जाए कि वह जीवन के पैंतालीसवे वर्ष में इस प्रकार के सुहावने सपने न देखा करे, क्योकि जव वह पिछले वीस वर्षो मे अपनी वित्तीय कठिनाइयों पर कावू नही पा सके, और कोई उल्लेखनीय उन्नति नही कर सके, तो अव जवकि वह प्रौढावस्था मे प्रवेश कर चुके है, वह कैसे प्रगति कर सकते है। उत्तर स्वरूप वह तुरन्त किसी प्रसिद्ध व्यक्ति का नाम लेते हैं, जिसने जीवन के अंतिम दिनो मे सफलता और ख्याति प्राप्त की थी। हमारे इन सज्जन का प्रकट उत्साह और साहस प्रशसनीय है, परन्तु कभी-कभी वह भी आत्म-ग्लानि का अनुभव करने लगते हैं, और तव उनसे साक्षात करने पर यह आभास होता है कि अव इन मे जीवन की शक्ति शेष नही रही, और अव वह शायद ही कभी युद्ध के लिये उद्यत हों।

ऐसे उच्च विचारों वाले साहसी और पराक्रमी पुरुषो का

यह दु.ख भरा अत निश्चय ही खेदजनक है। परन्तु वास्तविकता यह है कि ऐसे लोग न तो जीवन-क्षेत्र मे प्रवेश करते समय यह सोचने का कष्ट करते है कि विधाता ने उन्हे किस विभाग मे सफल होने की योग्यता प्रदान की है, ओर न व्यवहारिक जीवन मे वर्षो तक ठोकरे खाने के बाद उन्हे यह ज्ञात होता है कि उनको मनोकामना क्या है। वे घाट-घाट का पानी पोने अर्थात विभिन्न कार्य क्षेत्रो मे भाग लेने के बाद भी यह निश्चय नही कर पाते कि वे किस विभाग मे अपने रचनात्मक गुणो का परिचय दे सकते है और अपने कर्मोत्साह का प्रदर्शन कर सकते है। ऐसे लोग प्राय' एक साथ कई कलाओ के ज्ञाता होते है, और उन पर पर्याप्त अधिकार भी रखते है परन्तु उनसे पूछिये कि इन मे से किस कला या कौशल को अपनी मनोकामना के अनुकूल सभझते है, और किसमे अपनी योग्यता का पूर्ण प्रदर्शन कर सकते है, तो वे तुरन्त ही कोई उत्तर नही दे सकेंगे, जैसे वे अभी तक दुविधा मे हा, और अभो तक यह निश्चय न कर पाए हो कि वे अपना शक्तियो को किस काम मे लगाकर उन्नति के शिखर पर पहुँच सकते है। यही अनिश्चितता अथवा अस्थिरता उनकी असफलता या आंशिक सफलता का मुख्य कारण है।

इस सुविधा ने असख्य लोगो की जीवन-नौका निराश के समुद्र मे डुबो दी है, या कम से कम उन्हे अभी तक सफलतारूपी तट पर पहुँचने नही दिया। मेरे परिचित व्यक्तियो मे एक सज्जन पिछले पन्द्रह वर्ष से सघष कर रहे है, परन्तु अभी तक कोई उल्लेखनीय उन्नति नही कर पाए। वह उस समय भी वडे बुद्धिमान, परिश्रमी और आदर्शवादी थे, जब वह एक कलर्क के रूप मे जीवन क्षेत्र में प्रविष्ट हुए, और आज भी बड़े समझदार और विवेकशील व्यक्तियो में गिने जाते है, परन्तु आर्थिक विवशताओ ने अभी तक उनका पीछा नही छोडा। उनकी दुर्दशा

का अनुमान इस बात से लगाइए कि वह एक अत्यंत ही लाभदायक योजना को केवल इस लिए कार्यान्वित नहीं कर सके कि वह उसके लिए अपेक्षित तीन-चार हज़ार रुपये की सामान्य रकम का प्रबन्ध करने मे असमर्थ रहे।

इस व्यक्ति ने अपना जीवन बनाने के लिए घोर परिश्रम किया है। मुझे स्मरण है कि जब वह स्कूल में पढता था तो रातो जाग कर अध्ययन मे तल्लीन रहता था। वह गरीब पिता का पुत्र था, इसलिए नियमित रूप से उच्च शिक्षा प्राप्त नही कर सका। परन्तु उसने अपनी व्यतिगत चेष्टा से शैक्षणिक योग्यता प्राप्त की। वह युवावस्था से ही महानता के स्वप्न देखा करता था। वह क्लर्क बने रहने पर सतोप नही कर सकता था। अतएव द्वितीय महायुद्ध में वह एक अधीनस्थ सेनाधिकारी के रूप मे सेना मे भरती हो गया। परन्तु सैन्य जीवन और युद्ध से उसका मन शीघ्र ही ऊब गया। यदि वह इस प्रकार हतोत्साहित न होता, और मनोयोग से अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहता, तो उसके लिए सेना मे ही उन्नति के बड़े सुअवसर थे। वह स्वयं बतलाता है कि उसके कुछ साथी आज मेजर और कर्नल बन चुके है। परन्तु उसके मन मे यह धारणा बैठ गई थी कि उसे दुनिया मे कुछ और ही काम करना है। इसलिए युद्ध समाप्त होते ही उसने सैन्य सेवा को अन्तिम प्रणाम किया, और एक व्यापारिक सस्था से सम्बद्ध हो गया। परन्तु कुछ समय बाद उसने यह सम्बन्ध भी तोड दिया और अपनी पूँजी एक ऐसे कारबार मे लगा दी, जिसमें यदि सफल हो जाता, तो जीवनपर्यंत सुख का साँस लेता। परन्तु चचल प्रकृति ने यहाँ भी उसका पिंड न छोड़ा, और मामूली कठिनाइयों से घबरा कर उसने निजी व्यापार को भी तिलांजली दे दी। इसके बाद वह कई सस्थाओ से सम्बद्ध रहा, परन्तु

किसी एक का बन कर न रह सका। परिणाम यह है कि वह अभी तक परेशान है, वह अभी तक अपने परिश्रम का फल नही पा सकता और अपने उस लक्ष्य पर नही पहुँच सका जिस के लिए उसने जीवन के अनेक सुखो और प्रसादों से स्वय को वचित रखा है।

यह बुद्धिमान और समझदार व्यक्ति अब भी सभल सकता है, अब भी अपनी दुर्दशा को सम्पन्नता में परिणत कर सकता है। अब भी उस ध्येय को प्राप्त कर सकता है, जिसके स्वप्न वह देखा करता था, और जिसकी प्राप्ति के लिए वह अब भी बहुत कुछ करने को तैयार है—बशर्ते कि वह मालूम करले कि उसकी रुचि और झुकाव किस विभाग की ओर है, वह किस कार्य क्षेत्र मे अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर सकता है। मुझे विश्वास है कि यदि वह अब भी किसी एक क्षेत्र से स्थाई रूप से सम्बद्ध हो जाए, और उसमे सफलता-सिद्धी के लिए अपनी सारी शक्ति लगा दे, तो वह अब भी सफल हो सकता है।

यह सच है कि अव उसमे वह पहले जैसा उत्साह शेष नही रहा, और बार-बार की असफलताओ के कारण अब उसे अपने पर पहले जैसा विश्वास भी नही रहा। परन्तु यह समस्या बिल-कुल ही असाध्या नही है। अपने मनोरथ को ठीक से पहचान कर सही लक्ष्य स्थिर करने के बाद सफलता प्राप्त करने की योजना बना ली जाए, तो कर्मोत्साह पुन. स्थापित हो सकता है।

जीवन मे सफल होने और सार्थक-जीवन यापन करने का सही कार्यक्रम यही है, जिसका निर्देश आज के 'सुक्रात' और आधुनिक युग के अनुभवी विचारक करते है। हमारा कर्तव्य है कि हम किशोरावस्था मे ही अपनी मनोकामना को पहचान ले, और अपनी रुचि और झुकाव के अनुसार

अपने लिए उस कार्य-क्षेत्र का निर्वाचित करें, जिसमे हम अपने विशिष्ट व्यक्तित्व और अपनी विशिष्ट विभूतियो का पूरा-पूरा परिचय दे सके। यदि हमारा चुनाव ठीक होगा, तो फिर दुनिया की कोई ताकत हमे सफलता के मदिर मे प्रवेश करने से रोक नही सकेगी। परन्तु इसका यह अर्थ नही कि यदि हम एक वार अल्पवुद्धि अथवा अदूरदर्शिता से गलत मार्ग पर चल निकले, तो उसे छोड़कर सही रास्ता अपनाना निन्दनीय समझा जाए, और अपनी गलतियो और त्रुटियों का प्रतिकार न किया जाए। स्रष्टा ने मनुष्य की प्रकृति मे वड़ी लचक रखी है। मनुष्य चाहे, तो जीवन के किसी भी मोड पर अपने आचार-विचार मे परिवर्तन कर सकता है। मनोविज्ञान विशेषज्ञो का कहना है कि मनुष्य जव चाहे अपनी पुरानी आदतों का परित्याग कर नई आदते अपना सकता है। और यह सिद्धात सत्य पर आधारित है। मैं ऐसे वीसियो व्यक्तियो को जानता हूँ, जिन्होने सामान्य प्रयत्न, वल्कि एक वार के दृढ संकल्प से ही किसी ऐसी आदत का सदा के लिए परित्याग कर दिया, जिसमे मुक्ति पाना असम्भव प्रायः समझा जाता था जव केवल इच्छाशक्ति से असम्भव को सम्भव वनाया जा सकता है, तो आदतो का परित्याग और उनके स्थान पर नई आदतो का पोषण दुष्कर क्यो समझा जाए। इस लिए यह कहना गलत नही कि मनुष्य अपने व्यक्तिगत प्रयत्न और धैर्य-दृढता से काम ले कर खोए हुए विश्वास को पुनर्स्थापित कर सकता है, और पुनः आत्म-विश्वास और कर्मशीलता की मूर्ति वन सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि आपको हर हालत में सफलता का स्वप्न देखने का अधिकार है, वशर्ते कि आप अपने लक्ष्य को जानते हो और अपनी दृष्टि ऊँची रखते हो। उर्दू के किसी अज्ञात कवि ने क्या खूब कहा है—

झुक झुक के देखता हूँ मैं तूबा को अर्श को,
कुछ इस कदर बुलन्द मिली है नजर मुझे।

अर्थात मेरी दृष्टि इतनी उँची है कि मुझे आकाश को और स्वर्ग के सुगन्धित पेडो को देखने के लिए अपने स्थान से झुकना पडता है।

यह उच्च दृष्टि सफल लोगो की विशिष्टता है। इसी से वे आत्मविश्वासी बने, कर्म के लिए उद्यत हुए और सफलता के शिखर पर पहुँचे। परन्तु स्मरण रहे कि उन्होने एक ही वार मे अपने गन्तव्य पर पहुँचने की चेष्टा नही की, बल्कि एक-एक पग आगे बढते रहे। और जब वे एक स्थल को पार कर लेते थे, तो दूसरे को पार करने की तैयारी करते थे। आपभी क्रमशः आगे बढिए। सब से पहले अपना एक लक्ष्य निर्धारित कीजिए और विचारिए कि इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कितनी और कैसी योग्यता अथवा पू जी की आवश्यकता है और वह कोनसा सुगम मार्ग है, जिस पर चलने से आपकी सफलता की सम्भावनाएँ निश्चत हो सकती है। इसके वाद अपेक्षित 'ज्ञान' अथवा 'पूँजी' की उपलब्धि के लिए प्रयत्न कीजिए। असफलता की चिताओं को अपने मस्तिष्क पर अधिकार न करने दीजिए। इस प्रकार जव आप परिस्थितियो को अपने अनुकूल वना लेगे, तो सफलता का राजपथ स्वयमेव प्रशस्त होता जाएगा।

जिला परिषद के एक स्कूल के मैट्रिक पास अध्यापक ने जब अपने एक जानकर को, जो किसी विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर थे, नौकरी दिलाने के लिए पत्र लिखा, तो प्रोफेसर साहव ने सहमति प्रकट करते हुए उत्तर दिया—आप साइकल लेकर मोटरों की दौड़ मे भाग लेना चाहते है! यदि विश्व विद्यालय में आने की इच्छा है, तो पहले मोटर का प्रवन्ध कीजिए। अर्थात स्वाध्याय से अपनी शैक्षणिक योग्यता वढाइए, और तैयारी करके निजी तौर पर

उच्च परीक्षाओं मे बैठिए। उनमे उत्तीर्ण होने के बाद ही यहाँ आने का विचार कीजिए। यह परामर्श बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। अध्यापक महाशय ने कुछ ही वर्षों के अध्ययन से कई पदवियाँ प्राप्त कर ली, और शीघ्र ही एक बडे कालेज मे प्रोफेसर नियुक्त हो गए।

उनके प्रोफेसर मित्र ने जो परामर्श दिया था, वह निश्चय ही इस योग्य है कि उन्नति के इच्छुक नवयुवक उसे सदैव अपने सामने रखे। यदि आपभी मोटरो की दौड मे भाग लेना चाहते हैं, तो सबसे पहले यह मालूम कीजिए कि आपको किस प्रकार के मोटर की जरूरत है। फिर साइकिल को मोटर मे बदलने की व्यवस्था कीजिए। यह केवल सुहावने सपने देखने अथवा भाग्यावलम्बी बने रहने से नही हो सकता। इसके लिए निरतर सघर्ष करने और क्रमश आगे बढने की जरूरत है।

अपनी योग्यता और रुचि का सही अनुमान लगाने और एक-एक पग आगे बढने को ज्यादा महत्व इस लिए दिया जाता है कि इस प्रकार उन्नति करने मे साधक को प्रारम्भिक कठिनाइयो का सामना नही करना पडता, सामयिक असफलताओं का मुँह नही देखना पडता, और यदि कभी विफलता होती भी है, तो वह हताश नही होता, अपना आत्मविश्वास नही गवाता। उसे पता होता है कि उसमे ऐसी कठिनाइयो पर काबू पाने की क्षमता है, इसलिए उसका साहस बना रहता है। फिर भी इसमे सदेह नही कि लगातार असफलताएँ बडे से बडे साहसी आशावादी को भी निराशावादी बना देती है, और उसके आत्मविश्वास पर बहुत गहरी चोट लगाती है।

इटली के प्रसिद्ध देश-भक्त मैज़ीनी ने अपने देश की स्वाधीनता के लिए घोर सघर्ष किया। उसे एक मोर्चे पर हार होती

थी, तो वह हताश नही होता था, बल्कि दूसरा मोर्चा लगा देता था। मजीनी ने 'तरुण इटली' नामक आन्दोलन की नीव रखी और देशवासियो को दासता के बधनो से मुक्त होने के लिए आह्वान किया। इस पर 'राज्य सत्ता' उसके लहू की प्यासी हो गई और उसे वदी बना कर फाँसी के तख्ते पर चढाने पर तुल गई। तब देशभक्त मैजनी ने अनिच्छा पूर्वक अपने देश से विदा ली, और पड़ोसी देशो से अपने आन्दोलन के पक्ष मे लेखन-प्रकाशन का अभियान जारी रखा। परन्तु 'सत्ता' ने यहाँ भी उनका पीछा न छोडा। मैजीनी का एक जीवनी लेखक लिखता है कि शासन के गुर्गे निरतर उसकी तलाश मे रहते थे। वह एक मकान को छोड़ कर दूसरे मे और एक नगर से भाग कर दूसरे मे शरण लेता था। कभी-कभी मजीनी के किसी मकान को छोडने और पुलिस के वहाँ पहुँचने मे चार-पाँच मिनट का ही अन्तर रह जाता था। अतत वह लन्डन पहुँचा, जो सदा से राजनीतिक विद्रोहियो का सुरक्षित-रक्षा-स्थान रहा है, और वहाँ बैठ कर उसने अपने आन्दोलन को आगे बढाने के लिए लेख और पुस्तके लिखी। परन्तु उस के यह प्रयत्न सफल न हुए। देशवासियो ने उसकी आवाज पर उचित ध्यान न दिया। जब कभी सफलता की मजिल निकट आई तब देशवासी पाखडियो और सत्ताधिकारियो के षडयन्त्रो का शिकार हो गए। इस प्रकार निरतर असफलताओं के कारण मैजीनी के जीवन मे एक समय ऐसा भी आया, जब उसे इटली के बाह्य जगत मे ही नही, स्वय अपने अत.करण की दुनिया मे भी अधकार दिखाई देने लगा। वह अपने उन दिनो की मनोदशा का चित्रण करते हुए लिखता है—'बहुधा मैं यह अनुभव करता हू कि कही मैं ही तो पथभ्रष्ट नही, कही मैं ही तो गलती पर नही। जब अपने पराए सभी मेरे विरोधी है, जब मेरे सहयोगी ही मेरी निष्ठा पर सदेह करने लगे है, जब

देशवासी मेरी पुकार पर कान नही धर रहे हैं, तो क्या यह सम्भव नही कि मेरा चुना हुआ रास्ता ही गलत हो, मेरी आवाज आसमयिक हो और मेरे विचार ही भ्रममूलक हों?' मैजीनी इस अधकार मे कई मास तक भटकता रहा। इसके बाद जब शंकाओ के बादल छँट गए, तो उसपर प्रकट हुआ कि सतमार्ग वही था, जिस पर वह चल रहा था। मैजीनी ने अपनी आत्म-कथा मे उन दिनो का हाल बडे विस्तार के साथ लिखा है, जब उनके मन व मस्तिष्क पर निराशा, निरुत्साह और शक का अधकार छाया हुआ था। उसने इस वृत्तात को लिपि बद्ध करने की आवश्यकता इस लिए अनुभव की ताकि आने आ वाले लोग जब इस प्रकार के आन्दोलनो मे भाग ले और सामयिक असफलताओ से हताश होने लगे, तो मैजीनी की आत्मकथा के इस परिच्छेद से प्रेरणा ग्रहण करे और असफलता के आघात को वीरतापूर्वक सहन कर सके।

मैजीनी एक चरित्रशाली पुरुष था। उसे अपने लक्ष्य और आदर्श से अलौकिक प्रेम था। इतना प्रेम कि जब एक सुन्दरी ने उससे प्रणय निवेदन कर विवाह की इच्छा प्रकट की, तो उसने उत्तर मे कहा कि मेरे पास सिर्फ एक ही दिल है, और उसे मैं अपने देश को समर्पित कर चुका हू। अब मेरे हृदय मे किसी और के प्रेम के लिए स्थान नही है। जब ऐसा दृढहृदय पुरुष भी असफलताओं से उदासीन हो सकता है, जब उसे भी अपने आदर्श की सत्यता मे सदेह हो सकता है, जब उसका आत्मविश्वास भी विचलित हो सकता है, तो फिर विचार कीजिए कि उन लोगों के निराशा-गर्त मे गिरने की सम्भावना कितनी अधिक है, जो गुण-चरित्र और धैर्य-दृढता मे मैजीनी के पासिग भी नही है? मैजीनी का लक्ष्य स्पष्ट और उज्ज्वलित था। उसकी महत्वा-कांक्षा बडी पवित्र और नि स्वार्थ थी। इसके बावजूद वह अवि-

कुछ लोग नितांत स्पष्ट और निश्चित शब्दों में कहते सुने जाते है कि वे किसी प्रांत के मुख्यमत्री अथवा राज्यपाल बनने जा रहे है। परन्तु इस लक्ष्य को कैसे प्राप्त किया जा सकता है, उसका कोई सतोषजनक उत्तर उनके पास नही होता। सच तो यह है कि वे इस मौलिक प्रश्न पर विचार ही नही करते। फलस्वरूप वे प्राय. कोरे आदर्शवादी ही बने रहते है। डा० पील एक ऐसे नवयुवक के साथ अपनी एक बातचीत का विवरण बतलाते हुए लिखते है कि यह नवयुवक, जिसकी अवस्था प्रायः पचीस वर्ष की थी, और जो अपनी वर्तमान नौकरी से असतुष्ट था, परामर्श के लिए मेरे पास आया। वह जीवन मे कोई बड़ा काम करना चाहता था और इस सिलसिले मे मेरे पथप्रदर्शन का प्रार्थी था। उसकी बातें सुनकर मैंने उससे पूछा कि तुम किस कार्य-क्षेत्र को पसन्द करते हो? बोला, "मै उसका स्पष्टीकरण नही कर सकता, क्योकि मैंने इस प्रश्न पर कभी विचार ही नहीं किया। मैं केवल इतनी बात जानता हू कि मैं अपने वर्तमान काम से तंग आ गया हू।"

"अच्छा, तो यह बताओ कि तुम्हारी रुची किसी ओर है और तुम अपने ख्याल में किस काम को लगन के साथ कर सकते हो?"

"यह मैं नही जानता। मैंने इन बातो पर विचार नही किया। मैं तो सिर्फ अपना वर्तमान काम छोडना चाहता हूं।"

"अच्छा, अगर तुम्हे विभिन्न विभागो मे से किसी एक को चुनने का अवसर दिया जाए, तो तुम किसी विभाग में जाना चाहोगे, तुम्हारी स्वाभाविक इच्छा क्या होगी?"

"यह मैं कुछ करने के बाद ही बता सकता हूं।" यह उसका अतिम उत्तर था! तब मैंने उसे सम्बोधित कर कहा—"देखो, तुम अपने वर्तमान विभाग से किसी दूसरे विभाग में जाना चाहते हो, लेकिन तुम नही जानते कि किस विभाग में जाना

चाहते हो। तुम्हे यह भी मालूम नही कि तुम्हारी हार्दिक इच्छा क्या है, और तुम किस काम को करने के इच्छुक हो। इस अव-स्था मे यदि तुम अपनी दशा सुधारना चाहते हो, तो पहले अपने विचारो को सगठित करो, और जो प्रश्न मैंने अभी-अभी तुम से किए है, उनके उत्तर जानने की चेष्टा करो। अन्यथा तम्हारे सुधारने की कोई सम्भावना नही।"

यदि आप उस उज्जवल लक्ष्य को प्राप्त करने के अभिलाषी है, जो एक दीर्घ काल से आप के सामने है, तो पहले अपने विचारो का सगठन कीजिए, उन पर आलोचनात्मक दृष्टि डालिए, और फिर स्थित कीजिए कि आप क्या चाहते है। जब एक बार निश्चय करले, और अपना लक्ष्य निर्धारित करले, तो फिर पुरुषोचित ढग से वहाँ तक पहुचने का प्रयास कीजिए। मार्ग काँटीला और उसमे उतार-चढाव है, तो उसकी परवाह न कीजिए। अपने पर भरोसा कीजिए। फिर काँटों को हटाकर मार्ग बनाना सहज हो जाएगा, और उतार-चढ़ाव को पार करने मे भी कठिनाई नही रहेगी।

भय पर विजय

भय आत्मविश्वास का शत्रु है। दुनिया में बहुत से लोग अपनी योग्यता का समुचित पुरस्कार पाने से वंचित रहते हैं; और अपने सदगुणों से स्वयं को, अपने परिवार और सम्बंधियो को तथा अपने देश को लाभ नही पहुंचा सकते, क्योकि वे एक अज्ञात भय के बोझ तले दबे रहते है। वे सुशिक्षित होते है; उनका अध्ययन भी विस्तृत होता है; वे सोच-विचार के अभ्यस्त होते हैं और उनके विचार भी प्राय स्वस्थ और सुस्थिर होते हैं, परन्तु वे उनको अभिव्यक्ति का साहस केवल इसलिए नही करते कि कही उनका सुझाव उपहास का विषय न बन जाए, और उन्हे भरी सभा मे लज्जित और तिरस्कृत न होना पडे।

कुछ लोग अपनी योग्यता से परिचित होते है, और अपनी वास्तविकता को भी एक अंश मे पहचान लेते है। उन्हे विश्वास होता है कि वर्षों के चिंतन और व्यवहार के बाद उन्होंने जो जीवन-संबंधी सिद्धांत स्थिर किए है, वे गलत या निराधार नहीं हैं, उन्हें यह भी विश्वास होता है कि यदि वे किसी समस्या पर अपने विचार किसी सभा आदि मे प्रस्तुत करें, तो उन्हे निरर्थक कह कर ठुकराया भी नही जाएगा। परन्तु भय और भीरुता उन्हे अपने विचार अभिव्यक्ति करने से रोक देती हैं।

इन लोगो के जीवन में ऐसे अवसर भी आते है, जब उनका जी चाहता है कि अपनी साच के परिणामो को निर्भयता से सब

के सामने रखदे। परन्तु भय और घबराहट उन्हे मुँह खोलने का अवसर नही देती। तब वे अपनी इस कायरता पर मन ही मन में झुँझला उठते है; अपने को कोसते है और सँकल्प करते है कि 'भविष्य' मे वे साहस से काम लेगे ? परन्तु जब 'भविष्य' वर्तमान बन जाता है, तब वे फिर भयग्रस्त हो जाते है। इस साहसहीनता का परिणाम यह होता है कि वे अपने मूल्यवान विचारो के लिए भी प्रशँसा प्राप्त करने से वचित रहते है।

आपको अपनी जिन्दगी के किसी मोड पर इस कठनाई का कटु अनुभव हुआ होगा कि किसी सभा मे लोकतत्र या साम्यावाद पर वाद-विवाद हो रहा है, और आप उपस्थित जनो मे से किसी के अच्छे या बुरे तर्क को सुनकर मन ही मन मे कह उठते है कि यदि दूसरा पक्ष अमुक तर्क उपस्थिन करे, तो उसकी विजय निश्चित है। परन्तु किसी का ध्यान उस तर्क की ओर नही जाता। तब आप व्याकुल हो उठते है, ओर आप का मन चाहता है कि आप भी इस विवाद मे भाग ले, अपने विचार व्यक्त करके श्रोतागण को आश्चर्यचकित कर दे। परन्तु आपका स्वा-भाविक भय आपको इच्छा पूर्ति मे बाधक हो जाता है। किसी समय आप बडे साहस से काम लेकर बोलने का सकल्प भी कर लेते है। परन्तु मद स्वर मे 'मेरा विचार है।' कहने के पश्चात् आपकी ज़बान लडखडा जाती है।

मान लीजिए, आप किसी सुप्रसिद्ध व्यापारिक सस्था मे जूनियर अफसर है। प्रधान सचालक प्रति सप्ताह अफसरो की कान्फ्रेन्स इस उद्देश्य से करता है, ताकि सस्था की बेहतरी और उन्नति की समस्याओ पर मिल कर विचार किया जाए। सँचालक चाहता है कि सब अफसर इस सप्ताहिक सम्मेलन मे अपने सुझाव प्रस्तुत करे, विशेषकर 'तरुण मस्तिष्क' वाले, ताकि उन पर विचार-विमर्श करके उनमें जो उपयोगी हो, उन्हे अपनाया

जाए। अब आप चाहे; तो अपने उन सुझावों को जो, आप मित्र मंडली मे प्राय: व्यक्त करते रहते है, संचालक के सामने रखकर स्वयं को संस्था का हितैषी सिद्ध कर सकत हैं, और अपनी उन्नति का द्वार खोल सकते हैं। परन्तु आप इस भय से मौन रहते है कि कही आपसे बडे अफसर उन्हे रद्द न कर दे, उन्हे मूर्खतापूर्ण कह कर आपको लज्जित न करे। या फिर आप का 'दु:साहस' आपके लिए अहितकर ही सिद्ध न हो।

यदि आप अपने बीते दिनो पर दृष्टि दौडाएँ तो आपको किसी ऐसी घटना का स्मरण अवश्य ही आएगा, जब आपने अज्ञात भय के कारण अपनी सम्मति व्यक्ति करने मे सकोच किया। मैंने इस समस्या पर कई मित्रों और बुद्धिमान लोगो से विचार विनिमय किया है, और उन्होने प्राय. इस अनुभव की पुष्टि की है कि भय और सकोच के कारण वे बहुधा अपनी योग्यता का परिचय देने का सुअवसर गँवा बैठे हैं।

मेरे एक मित्र की अवस्था चालीस के लगभग है, वह काफी होशियार और चतुर व्यक्ति है, परन्तु अभी तक कोई विशेष उन्नति नही कर सका। कारण उसने अपनी बौद्धिक योग्यता का प्रदर्शन करने की कभी कोशिश नही की। वह चाहता तो ज्ञान और साहित्य का दुनिया मे नाम पैदा कर सकता था। परंतु उसने 'वीर-रीति' अर्थात सत्य भाषण और निर्भयता को अपना सिद्धांत नही बनाया। फलस्वरूप वह अपनी योग्यता का लाभ न उठा सका। उससे ज्यादा ख्याति तो उन लेखकों और कवियो को प्राप्त है जो विशुद्ध ज्ञान और विद्या-बुद्धि मे उससे कही हीनतर हैं।

मैं एक सज्जन को जनता हू, जो सुभाषी और मधुरवक्ता है। आप राजनीतिक समस्याओं पर बडे तर्कयुक्त और प्रभावी ढंग से टिप्पाणी करते है। परन्तु वह आज तक कुशल व्याख्याता

नही बन सके। मैने एक बार उन्हे एक अल्पसंख्यक समूह मे भाषण करते देखा, तो बडी निराशा हुई। वह बोल तो रहे थे, परन्तु उन्हे सिर-पैर का होश न था। कुर्सी के सहारे खडे थे, और बार-बार पानी माँग रहे थे। जब वह अपनी वक्तृता समाप्त कर चुके, या यो कहिए कि उस विपत्ति से मुक्त हुए, तो मैंने उन्हे बताया कि वह जब तक अपने इस बैरी—भय पर काबू नही पाएँगे, तब तक वह एक अच्छे वक्ता नही बन सकते। आप ने अपनी इस कमजोरी को माना भी, और वायदा किया कि आइन्दा दृढता से काम लेगे। आपने आजकल भय के विरुद्ध नियमित रूप से अभियान चला रखा है, परन्तु अभी तक विजय प्राप्त करने में सफल नही हुए। शायद इनके प्रयत्न अभी अपरिपक्व है।

भय और आतक मनुष्य के लिए किस प्रकार घातक सिद्ध हो सकते है, इसका एक उदाहरण जापान मे देखने मे आया। यह सन् ५३ की घटना है। शिमोसीकी के कोची निकाशी नामक एक युवक ने केवल इस कारण आत्महत्या कर ली कि उसके निकट ऐसी दुनिया मे जीवित रहना व्यर्थ था, जिसमे अणुबम के प्रयोग की सम्भावना बनी हुई है! भगवान का लाख-लाख धन्यवाद है कि दुनिया मे मि० कोची के 'सहधर्मियो' की सख्या अधिक नही, अन्यथा मनु की सगति कब की समाप्त हो चुकी होती, क्योकि मनुष्य मात्र के सिर पर ऐटम बम से भी ज्यादा भयानक और निश्चित खतरा मृत्यु के रूप मे सर्वदा मडराता रहता है। कुछ भी हो, मि० कोची का शिक्षा-प्रद मृत्यु से इस तथ्य का ज्ञान होता है कि मनुष्य भयग्रस्त और आतकित हो कर केवल जीवन के सुख चैन से ही नही, बल्कि कभी-कभी तो स्वय जीवन से ही हाथ धो बैठता है। भय के प्रभावातगत अनेक पाप और कुकर्म तो होते ही है। सम्भवत. इसी लिए अभिनव मनो-

विज्ञापन के विशेषज्ञ भय और आतंक को सक्रामक रोगो से भी ज्यादा खतरनाक समझते है, और इनके उन्मूलन के लिए यत्नशील रहते है।

यदि आप सफलता के इच्छुक है, और अपनी योग्यता का पूरा मूल्य प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको अपने विचारों की अभिव्यक्ति मे कभी सकोच न करना चाहिए, और अपनी योग्यता प्रदर्शित करने का कोई अवसर हाथ से जाने न देना चाहिए। अपनी सम्पति निःसकोच व्यक्त कीजिए, और निर्मम भय को अपना भविष्य अधकारमय बनाने का मौका कभी न दीजिए। याद रखिए, मनुष्य नाते आप इस धरती के विजेता है। आप जो चाहें कर सकते है, जिस लक्ष्य तक पहुँचना चाहे, पहुँच सकते हैं। डर, भय, विवशता और तुच्छता का प्रदर्शन आपको शोभा नही देता।

. जब आप देखते हैं कि महत्ता का राजमुकट केवल उन्हीं लोगो के सिर पर रखा गया, जिन्होने अपनी रचनात्मक कल्पना शक्ति की उपज को दुनिया के सामने रखने मे विलम्ब नही किया, तो फिर आप उनके विचारो को प्रकट करने मे संकोच क्यो करते हैं ? क्या सिर्फ इसलिए कि आपके विचार सुप्रसिद्ध विद्वानो के विचारो से पूर्ण या आंशिक रूप में भिन्न हैं ? परन्तु यह तर्क युक्ति सगत नही है। क्या आप नही जानते कि दुनिया मे जब किसी विचारक ने प्रसिद्धि प्राप्त की, तो प्रायः अपने आविष्कृत किसी ऐसे सिद्धांत के कारण, जो उसके पूर्ववर्ति विचारको के सिद्धांतो से भिन्न था। आप जिन महान व्यक्तियों को मानवता के उद्धारक और सेवक समझते हैं, और उनकी पुण्य स्मृति मे नतमस्तक हो जाते हैं, उनकी महत्ता का रहस्य उन की विद्या-बुद्धि से ज्यादा उनके आत्मविश्वास में था। उसी की सहायता से उन्होंने अपने विचार और सिद्धांत सबके सामने रखे,

अपने मत के प्रचार के लिए पुस्तके लिखी, आपत्तियो के युक्ति-युक्त उत्तर दिए, और शास्त्रार्थ किए। यदि वे भीरु होते और डर के मारे अपनी डगर से हट जाते, तो आज दुनिया न उनके नाम से परिचित होती, न उनके सिद्धातो से मनुष्य का कल्याण ही होता।

तनिक कल्पना कीजिए कि यदि प्रथम महायुद्ध के बाद गाँधीजी अपने इस अनूठे विचार को, कि शान्तिपूर्ण उपायो द्वारा स्वतत्रता-प्राप्ति सम्भव है, कार्य रूप मे परिणत करने के लिए अहिंसात्मक सत्याग्रह का झडा बुलन्द न करते, तो क्या देश में इतने व्यापक पैमाने पर आन्दोलन छिड सकता था कि एक बार तो ब्रिटिश साम्राज्य की जड़े तक हिल गई ? और यदि नेताजी सुभाष बोस अपनी इस धारण को, कि स्वतत्रता-प्राप्ति के लिए स्वतंत्रता सुलभ होती ? दोनो अवस्थाओं मे निर्णयात्मक तत्व इन महापुरुषो के विचारों की प्रकृति नही, बल्कि उनके व्यक्तिगत विश्वास की यह दृढ़ता थी कि उनके विचार सही हैं।

जिन विचारको और विद्वानों की महानता को आप स्वीकार करते हैं, उनकी एक सूची बनाइए और फिर विचार-पूर्वक देखिए कि उनकी महत्ता का रहस्य क्या है। आप निश्चय ही इस निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि उनकी वास्तविक महिमा दूसरो के अनुकरण की बजाए मौलिकता मे और समालोचना की बजाए रचना में निहित थी। आप आइन् स्टाइन् के प्रशंसक है, कार्ल मार्क्स के गुण गाते हैं, रवीन्द्रनाथ की कविता से आनन्दित होते हैं, अथवा गाँधी, सुभाष और नेहरू को अपना उद्धारक मानते हैं, तो केवल इसलिए कि इन सबने पुरानी लकीर को छोड कर नए मार्ग तलाश किए, जीवन का नया दर्शन प्रति पादित किया, अथवा नई परिस्थितियो के अनुसार परम्परित दर्शन मे आवश्यक परिवर्तन किए, और मानव जीवन को सुखमय और समुन्नत

बनाने के लिए नए आचार-विचार आविष्कृत किए। इनमें से कोई भी अपनी योग्यता को प्रदर्शित करने से पहले औसत आदमी से श्रेष्ठतर नही था। वे तभी ऊँचे उठे, जब उन्होने आत्म-विश्वास की शक्ति से काम लिया, और पुरानी डगर के विरुद्ध विद्रोह का सूर्यनाद किया। इसलिए फारसी मुहावरे के मुताबिक 'जो कुछ दिल में रखते हो, बाहर लाओ, और एमर्सन के इस कथन को हमेशा याद रखो कि 'ध्वनि बनो, न कि प्रतिध्वनि !"

प्रतिध्वनि बनने में कोई श्रेष्ठता नही है। दुनिया ऐसे लोगों से भरी पडी है, जो दूसरों के विचारों पर चलते हैं, दूसरों की कीर्ति पर गर्व करते है, परन्तु अपने मन की कहने का साहस नहीं करते। ऐसे लोग भी बहुत है, जो दूसरो के विचार चुराते हैं या उनकी व्याख्या करते हैं, और अपने पूज्य के विचारों से जरा भी विमुख होना महापाप समझते है। ऐसे लोग प्रायः विद्वान भी होते है, और विचारशील भी, परन्तु उनकी विचारशक्ति की एक सीमा नियत है, जिसको उल्लांघने का वे अपने को अधिकारी नही समझते। उनके ख्याल में हमारे पूर्वज हमारे लिए जो कुछ सोच और लिख गए हैं, वही पर्याप्त है, और अनत काल तक उसी को अपना जीवन-दर्शन बनाए रखना चाहिए। वे कहते हैं कि हमे अपने ऋषियो, महात्माओं और महापडितो के विचारो में सामयिक आवश्यकताओं के नाम पर सशोधन करने का कोई अधिकार नही है। परन्तु उनसे कहा जाए कि जेट विमान और आण्विक शक्ति तो आज के मनुष्य के आविष्कार हैं, और आर्थिक समता का सिद्धांत भी तो आज की उपज है, तो इसका कोई युक्ति संगत उत्तर उनके पास नही होता। परन्तु अन्ध-विश्वास और भेड़ चाल को त्यागने पर वे कभी तैयार नही होते। उनका विवेक निद्रामग्न और मस्तिष्क निष्क्रिय हो चुका है। इसलिए ऐसे लोगों से औचित्य की आशा व्यर्थ है। हाँ, उस

समूह का सुधार अवश्य सम्भव है, जिसका मूल रोग पुरातनवाद से ज्यादा कल्पित भय और अनुचित सकोच है। यह लोग भी जब अपने विचार करते है, तो इसी निष्कर्ष पर पहुचते है कि आज के विचारक को निःसदेह यह अधिकार प्राप्त है कि वह अतीत को विरासत का निरपेक्ष दृष्टि से अध्ययन करे। और यदि उसमे कही कोई त्रुटि या कमी पाई तो उसका निवारण करने में आनाकनी न करे। यहाँ पहुँच कर उनका जी चाहता है कि वे अपने मन मे उत्पन्न होने वाले विचारो को निर्भीक होकर सबके सामने रखदे परन्तु अज्ञात भय से मन की मन मे ही रह जाती है। इस श्रेणी के लोगो की स्थिति प्रतिध्वनि से ज्यादा नही है। ये लोग कभी सफलता को प्राप्त नही कर सकते। यदि आप इस श्रेणी मे खड़े होना पसन्द नही करते, तो एमर्सन का परामर्श शिरोधार्य कीजिए, और अपनी योग्यता पर भरोसा करते हुए अपने मनोबल, बुद्धिबल और उपायबल का प्रदर्शन कीजिए।

क्या आपने कभी कोई उत्तम पुस्तक या लेख पढते हुए अनुभव किया कि जिन विचारों की अभिव्यक्ति के लिए लेखक का नाम समस्त विश्व में सुप्रसिद्ध है, उसने स्वय आपके विचार बहुत कुछ भिन्न है। अब यदि कोई तटस्थ आलोचक लेखक के विचारों के साथ आप के विचारो का तुलनात्मक अध्ययन करे, तो बड़ी सरलता के साथ आपको उक्त लेखक से बड़ा विचारक सिद्ध कर सकता है। परन्तु यही काम यदि आप स्वय कर सके, अर्थात अपने विचारो को सगठित कर उचित रूप रीति से प्राकाशित कर सके, तो वही विचार, जिन्हे आप निम्न स्तरीय और मूल्य विहीन समझकर रद्द कर देते है,और उनकी अभिव्यक्ति का साहस तक नही करते, सुसगठित और सुव्यक्त होकर उच्च स्तरीय और मूल्यवान हो जाएंगे। इस स्थापना का समर्थन विश्वविख्यात

दार्शनिक एमर्सन इन शब्दो मे करते हैं."प्रत्येक रचनात्मक कार्य मे हमे अपने धुतकारे हुए विचार मिलते हैं। हमने उन्हे तुच्छ समझकर कोई महत्व नही दिया था। परन्तु जब वे किसी दूसरे के विचार बनकर हमारे सामने आते है, तो हम आत्मविभोर होकर रह जाते है।" एमर्सन के विचार मे कला के अमूल्य नमूने हमारे लिए इस दृष्टि से नितात शिक्षाप्रद है कि वे हमे हमारी महत्ता का स्मरण दिलाते है। उससे हमे यह सबक मिलता है कि मनुष्य को अपनी विचार-क्रिया के परिणामो को उपेक्षनीय नही समझना चाहिए। और उन्हे दुनिया के सामने पेश करने मे सकोच नही करना चाहिए। अन्यथा कल कोई नवागतुक उन्ही विचारो को शब्दो का रूप देकर दुनिया स उनकी कीमत वसूल कर लेगा, और हम, जो वास्तव मे उन विचारो के जन्मदाता है, मुँह देखते रह जाएँगे।

पिछले दिनों मुझे एक शिक्षित ग्रामीण युवक ने बताया कि राज्य की राजधानी मे आकर यहाँ के राजनीतिक, साहित्यिक और पत्रकारिता सम्बंधी क्षेत्रो मे भाग लेने और नेताओं, लेखकों और पत्रकारों से भेट करने के बाद मुझपर यह भेद खुला कि इन लोगों की श्रेष्ठता और विद्वता का जो आतंक मुझ पर छाया हुआ था, उसका वास्तविकता से कोई सम्बध नही है। इनमें से बहुत कम उतने प्रतिभाशाली निकले, जितना कि मैं उन्हे समझता था। मुझे ज्ञात नही कि इस देहाती नौजवान ने किन राजनीतिज्ञो, पत्रकारो और लेखकों से मिलकर अपनी धारणाओं में परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की, परन्तु इसमे सदेह नहीं कि कुछ लोग स्वय को अकारण ही हीन और नगण्य समझते है, और अपने समस्तरीय लोगों से दबे रहते हैं।

अब यदि आपने भय से मुक्ति प्राप्त करने का सकल्प कर लिया है, और भविष्य मे उपयुक्त अवसर पर आप अपने सोचे

समझे मत को अभिव्यक्ति करने मे सकोच नही करेंगे, तो आप को शीघ्र ही इस लाभदायक परिवर्तन का सुफल भी प्राप्त हो जाएगा। परन्तु इस तथ्य को न भूलिए कि विचाराभिव्यक्ति के पूर्व आपके व्यक्तित्व मे वह योग्यता भी होनी चाहिए, जिसके बिना विचारो को उच्चता और मत के औचित्य की कल्पना भी नही की जा सकती। यदि आप सुशिक्षित है, और ज्ञान-विज्ञान की जिस शाखा मे अपनी प्रतिभा दिखाना चाहते है, उस पर पूरा अधिकार रखते हैं, तथा उसके सम्बध मे जितना भी उत्तम साहित्य उपलब्ध है, उसका ध्यानपूर्वक अध्ययन कर चुके हैं और स्वय भी इन विषयो पर विचार करते रहते है और इनके सबध मे कुछ कहने के लिए आपके पास है, तो फिर अपने विचारो को पूरे विश्वास के साथ प्रस्तुत करने की योग्यता आप मे मौजूद है। और यदि इस योग्यता के बाद भी आप मौन धारण किए रहें, तो इसका अर्थ यह होगा कि आप अपने पर तो अत्याचार कर ही रहे हैं, अपने देश पर भी कर रहे हैं। इसके विपरीत यदि आपको अध्ययन से रुचि नही है और सोच विचार से आप कोसो दूर भागते है, तो फिर आप किसी गूढ विशय पर मताभिव्यक्त नही कीजिए तो बेहतर है, क्योकि इस प्रकार कम से कम आपकी योग्यता पर पर्दा तो पडा रहेगा, और आप भरी सभा मे उपहास का विषय तो न बनेगे!

कोई उच्च विचार उत्तम सुझाव अथवा अनूठी राय प्रस्तुत करने की योग्यता वर्षों के चिंतन और परिश्रम के बाद ही उपलब्ध होती है। जिस प्रकार मधुमक्खी नाना प्रकार के फूलो पर बैठती है और केवल उन्ही फूलो से रस लेती है, जिन मे मिठास होता है, और इस तरह हजारो फूलो से मधुकर उपलब्ध कर मधु की एक बूंद सग्रहित करती है, उसी प्रकार बिचारको को भी कोई नया विचार अथवा सिद्धात प्रतिपादित करने

के लिए वर्षों तक घोर परिश्रम करना पडता है। सैकड़ों ही पुस्तकें और ग्रंथ वे पढ डालते है, और निरंतर अनुसंधान की सिरदर्दी उन्हे सहन करनी पड़ती हैं। उन तर्कों का उत्तर भी उन्हें पहले से सोच कर तैयार रखना पड़ता है, जो उनके सिद्धांत के विरुद्ध उपस्थित किए जा सकते हैं। इस प्रकार जब वे इन सब बाधाओ को पार कर लेते हैं, और उन्हे विश्वास हो जाता है कि उनका विचार या सिद्धांत न केवल सही है बल्कि उसकी सत्यता को प्रदर्शित भी किया जा सकता है, तभी वे उसे दुनिया के सामने रखने का साहस करते है।

इसलिए यदि आप आत्मज्ञान का महत्व जान गए हैं, और अपने विचारो का प्रचार कर के अपनी योग्यता की धाक जमाना चाहते है, तो पहले ज्ञानोपार्जन किजिए। स्वाध्याय को अपना नित्य नियम बनाइए। सबसे बढ़कर स्वयं प्रकृति—जिसमे मानव-प्रकृति भी सम्मलित है—का पर्यवेक्षकण बड़े ध्यान से कीजिए और सोच-विचार के अभ्यस्त बनिए। इन तैयारियो के बाद ही आप अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने की स्थिति मे होंगे। तब भय और संकोच के बन्धन से मुक्ति लाभ कीजिए और दुनिया को दिखा दीजिए कि आप उन लोगो में से नहीं है, जिनकी कुल सम्पत्ति सुनि-सुनाई बातें या दूसरों के विचार है, बल्कि आप की गणना उन बौद्धिक महारथियों मे है, जो केवल अपने ही प्रवक्ता होते है, और दूसरों को अपने मौलिक विचारों से प्रेरणा प्रदान करते हैं।

यह जरूरी नही कि आप जो सुझाव पेश करें, वह शत प्रति शत मान्य ही हो, और सभी लोग उसके समर्थक हो जाएँ। या आप अपने विचारों के प्रचारर्थ जो लेख लिखें, उस पर किसी को कटु आलोचना करने का अधिकार न हो, क्योंकि आलोचना और आक्षेप के प्रहारो से तो कोई बडे से बड़ा विचारक, लेखक

या कलाकार भी सुरक्षित नही रह सका परन्तु इतनी बात जरूरी है कि आलोचना से खिन्न या क्रोधित होने की बजाए लाभ उठाने मे ही अधिक बुद्धिमता है। आलोचना का स्वागत करना चाहिए। इस परामर्श की आवश्यकता इसलिए अनुभव होती है कि बहुत से लोग बडे धूम-धडक्का, उत्साह, और साहस के साथ जीवन-क्षेत्र मे प्रवेश कर है, परन्तु वे इस उग्रता का प्रदर्शन तभी तक करते हैं, जब तक कि उन्हे आपत्ति और विरोध का सामना नही होता। विरोधात्म आलोचना होते ही उनका सारा जोश ठंडा पड जाता है, और वे कुछ ऐसे मौन और निष्क्रय हो कर बैठ जाते है, जैसे उनमें मुँह मे दबाना और अगों में क्रिया शक्ति ही न शेष रही हो। या फिर इतने भयभीत हो जाते है कि लोगो से मुँह छिपाते फिरते है। यही विश्वास शून्यता उन्हे ले डूबती है; वे फिर शायद ही दुबारा उभर पाते है।

सदैव आशान्वित रहिये

'मैं असुखद परिस्थितियो के विरुद्ध बीस वर्ष तक संघर्ष करता रहा हूँ। मैंने वित्तीय कठिनाइयो से मुक्ति-लाभ के लिए नित्य दस-दस घटे काम किया है। परन्तु मैं अपने लक्ष्य को प्राप्त करने मे सफल नही हुआ। छल कपट और धूर्तता इसके युग में सफल होना मेरे वस का रोग नही। मैं कुछ कर दिखाने की उत्कट भावना से जीवन के अधिकतर सुखो से वचित रहा। परन्तु अव मैं शाति और सतोप का जीवन व्यतीत करना चाहता हूँ। मैं वर्तमान परिस्थिति से सतुष्ट हूँ।"

ये विचार एक ग्रैजुएट के है जिसे मैं काफी समय से जानता हूँ जव कॉलिज मे पढता था, तो वड़ा ही साहसी और महत्व-काक्षी था। उसकी नस-नस मे जीवन की उमगे तरगित थी। वह एक मध्यमवर्गीय परिवार मे पैदा हुआ था, परन्तु वह कहा करता था कि वह उन्नति के शिखर पर पहुँच कर रहेगा। प्रसिद्ध व्यक्तियो की जीवनियो के अध्ययन से उसे विशेप रुची थी। जव वह विदेशी शासको के विरुद्ध आवाज़ बुलन्द करता था, तो उसकी वाणी से आग वरसती थी।

वह उच्चादर्शी और आत्मविश्वासी था। वह जिस कार्य को प्रारम्भ करता, उसे पूर्ण करके ही दम लेता था। नेपोलियन की तरह उसके शब्दकोप मे भी 'असम्भव' शब्द मौजूद नही था। उसने प्रतिकूल परिस्थितियो मे कुछ ऐसे कार्य सम्पन्न किये,

जो प्रकट में उसके सामर्थ्य से बाहर थे।

वह अभी युवा और स्वस्थ है, विद्याबुद्धि से सम्पन्न है, उस का ज्ञान-क्षेत्र विस्तृत और बोध-शक्ति प्रबल है, उसमें बल-तेज का वह भडार अब भी सुरक्षित है, जिसका संचय उसने युवावस्था मे किया था। वह पहले से ज्यादा अनुभवी और दूरदर्शी है, परन्तु अब उसके लिए जीवन मे कोई आकर्षण नही रहा, न वह पहले जैसा उत्साह और सकल्प-शक्ति ही शेष रही है। अब वह किसी के विरुद्ध सघर्ष नही करना चाहता। महामहिम देश नेता बनना तो दूर रहा, अब वह किसी छोटे से समूह का पथनायक भी नही बनना चाहता। अब वह केवल शाँति चाहता है, विश्राम और विराग का प्रार्थी है।

"यह असम्भव है कि निर्धन परिवार में जन्म लेने वाला मुझ जैसा व्यक्ति किसी क्रातिकारी आन्दोलन का प्रवर्त्तक बन सके। श्रेष्ठता और नेतृत्व के राजमुकुट निर्धनो के लिए नही है, 'जवाहरलाल' जैसे धनिक-पुत्रों के भाग्य मे ही लिखे गए है। मै 'जवाहर' से ज्यादा काम कर सकता हूँ। मैं देश व जाति की सेवा तथा समाज सुधार और राष्ट्रोन्नति की योजनाएँ सोचने मे अधिक निपुण हूँ। परन्तु दरिद्रता मुझे कुछ नही करने देती। सच बात यह है कि दरिद्र-नारायण का उपासक कोई महान कार्य कर ही नही सकता।'

ये विचार किसी अशिक्षित नवयुवक अथवा मामूली पढे-लिखे व्यक्ति के नही है, बल्कि एक ऐसे विद्वान के है, जो अपने निकट स्वय को 'विद्यासागर' समझते है। मैं उनकी इस विचार-धारा का परिचय पाकर आश्चर्यचकित रह गया।

तथ्य यह है कि विगत अर्धशताब्दी मे ऐसे कितने ही व्यक्तियो ने क्रांतिकारी आन्दोलनो की नीव रखी है, तथा राष्ट्रो का नेतृत्व-भार सभाला है, जिनका जन्म अत्यन्त ही

में हुआ था, और जिन्हे किसी सामान्य पाठशाला में भी शिक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त नही हुआ था। जब मैंने एक दर्जन से ज्यादा ऐसे विश्रुत व्यक्तियो के नाम गिनवा दिए, जो गरीब माता-पिता की 'भाग्यहीन सतान' होने पर भी उच्चतम पद को प्राप्त हुए, तो वह अपने दावे से हट तो गए, परन्तु मुझे उनकी आँखो मे कोई ऐसी आशा अथवा वाणी मे विश्वास की झलक दिखाई न दी, जिससे यह अनुमान हो सकता कि अब वह भी सफलता-प्राप्ति के लिये सघर्ष करेंगे, अथवा देश की प्रगति के लिए किसी नए उद्यत का प्रारम्भ करेंगे। वह एक वृहत् व्यापारिक सस्था से सम्बन्ध हैं, और उच्च वेतन पाने के अलावा अपनी कुछ सम्पत्ति भी रखते है। परन्तु वह आज भी यही कहते हैं कि यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हो जाएँ, और उन्हे 'कही से' कुछ आर्थिक सहायता मिल जाए, तो वह बहुत कुछ कर सकते हैं! परन्तु वह किसी प्रकार का खतरा मोल लेने को तैयार नही है।

इस श्रेणी के लोग सदैव परिस्थितियों के अनुकूल होने की प्रतीक्षा करते रहते है और अपनी वर्तमान अवस्था से असतुष्ट होने पर 'सतुष्ट' है, क्योकि वे कोई खतरा मोल लेने को तैयार नही है। वे केवल क्राति और परिवर्तन की बातें ही करते हैं। इसलिए नही कि वे स्वयं क्रांति का झंडा बुलन्द करने का इरादा रखते हैं, बल्कि इसलिए कि कोई दूसरा इस ओखली में अपना सिर दे दे, और जब सब कुछ हो चुके, तो वे परिवर्तन के सुपरिणामो में भागीदार बनने के लिए आ उपस्थिति हो।

ये लोग जीवन की बाजी हार चुके हैं। ये अपनी योग्यता की मुंह मांगी कीमत वसूल नही कर सके, और अब अपनी आकाक्षाओं का खून होते देख रहे है, पर कुछ कर नही पाते।

इसलिए नही कि भाग्य ने उनका साथ देने से इन्कार कर दिया, या समय ही उनका विरोध करने पर कटिबद्ध हो गया, बल्कि इसलिए कि वे अपनी सब से मूल्यवान वस्तु-अपनी महासम्पत्ति-आशा को त्याग बैठे। जब तक उन्हे सफलता की आशा थी, वे कठिनाइयो का धैर्यपूर्वक मुकाबला करते रहे, विपत्तियो के झझावात मे भी उनके कदम नही डगमगाए। परन्तु आशा-दीप के बुझते ही उन्हे अपने चतुर्दिक घोर अधकार दीखने लगा। वे सहज ही में पथ-भ्रष्ट हो गये। उनका देह-दुर्ग अभी तक सुदृढ है, परन्तु उसके भीतर की आत्म-रूपी रक्षक सेना निर्बल और निर्जीव हो चुकी है। उनके जीवन का सब से बड़ा दुःखांत काँड यही है कि अब वे उस शक्ति से काम नही ले सकते, जो सब सफलताओ की कुँजी और आधार है।

यदि आप जीना चाहते है और सफलता की अभिलाषा रखते हैं, तो 'अविश्वास' और निराशा को अपने पास फटकने न दीजिए। कभी हार न मानिए। याद रखिए, हमारा जोवन हमारे विचारो का प्रतिबिंब होता है। यदि हमने दुःख, निराशा और पराजय के विचारो को अपने मन व मस्तिष्क पर अधिकार जमाने का मौका दिया, तो हम सचमुच दुःख और निराशा की मूर्ति बन कर जाएगे।

"जैसे हम सोचते है, वैसे ही हम बन जाते है" यह एक प्रसिद्ध उक्ति है, और इसकी सत्यता से इन्कार नही किया जा सकता। एमर्सन कहते हैं कि मनुष्य वही कुछ बनता है, जो कि उसके विचार होते है। इसमे सदेह नही कि विचारो मे मानवी जीवन को बनाने अथवा बिगाड़ने की महान शक्ति है। इसलिए निराश, विश्वासहीनता, आत्मतुच्छता और आत्मतिरस्कार के विचारो से दूर का भी सम्बन्ध न रखिए। और परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही विकट और विपदपूर्ण क्यों न हो जाएँ, अपने

हृदय मे आशा-दीप को कभी बुझने न दीजिए। हमेशा आशान्वित रहिए और अपने को सदैव सफल समझिए।

सफलता के विचार चुम्बकीय प्रभाव रखते हैं। वे विरोधी परिस्थितियों को भी अनुकूल बनाने मे सहायक होते हैं। वे आप का साहस बढाते हैं, आप की क्रिया-शक्ति की वृद्धि करते है। और इस प्रकार सफलता की मजिल को निकटतर लाते हैं।

दुनिया में अधिकतर लोगों की असफलता का मुख्य कारण यह होना है कि उनके विचारो और कृत्यो मे संगति नही होती। वे अपने व्यवसाए मे सफलता-प्राप्ति के लिए पूंजी और श्रम को तो आवश्यक मानते है, परन्तु अपनी विचार-शक्ति और इच्छा-शक्ति से कुछ अधिक काम नही लेते। वे व्यापारिक संस्था तो स्थापित कर देते है, परन्तु उसे सफलतापूर्वक चलाने का विश्वास उन्हे नही होता। दूसरे शब्दो में वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति शारीरिक मानसिक एव भावनात्मक-सफलता-प्राप्ति के उद्देश्य की ओर केन्द्रित नही करते। परिणाम यह होता है कि वे असफल हो जाते हैं अथवा आंशिक सफलता हो प्राप्त कर पाते हैं।

मैं एक प्राथमिक पाठशाला के अध्यापक को जानता हूँ, जो पाँचवी श्रेणी के विद्यार्थियो को छात्र-वृत्तियाँ दिलाने का विशेषज्ञ माना जाता है। वह प्रतिवर्ष चार-पाँच छात्रों को वृति परीक्षा के लिए तैयार करता है, और प्राय. प्रति वर्ष हो उसके पढ़ाए हुए दो-तीन परीक्षार्थी वृति-प्राप्ति मे सफल हो जाते है। एक बार मैंने उससे इस आश्चर्यजनक कार्य-दक्षता का रहस्य पूछा, तो उसने उत्तर दिया कि वह अन्य अध्यापको से किसी रूप मे भी अधिक निपुण अथवा योग्य नहीं है। बात केवल इतनी है कि उसे अपने पर पूर्ण विश्वास है और वह सदैव आशान्वित रहता है। उसने कहा कि मैं यह कल्पना भी

नही कर सकता कि मेरे प्रयत्न कभी विफल भी हो सकते है। इस विश्वास के साथ मैं स्वय परिश्रम करता हूँ, और ठीक वैसी ही तैयारी करता हूँ, जसे कि स्वय मुझे छात्रवृत्ति प्राप्त करनी हो। ऐसी ही तैयारी मेरे छात्रो की भी हो जाती है। मेरी सफलता का दूसरा रहस्य यह है कि मै अपने अत्मविश्वास से अपने छात्रो में भी यह विश्वास पैदा कर देता हूँ कि वे सफल हो कर रहेंगे।

यह 'लोह-विश्वास , यह जदः। आत्मबल मनुष्य मे कब पैदा होता है ? जब वह सदैव आशान्वित रहे, जब उसकी मानसिक दुनिया मे आशा, आनन्द और आत्मनिष्ठा के दाप सर्वदा प्रज्वलित रहे, और जब वह नित्यप्रति कल्याण, सफलता और महत्ता के ही स्वप्न देखे। उसे हेमन्तकाल के बाद बसतऋतु के आगमन का विश्वास रहना चाहिए, और ग्लैडस्टोन के शब्दो मे यह कहते रहना चाहिए कि 'जीवन व्यर्थ का परिश्रम नही है, बल्कि एक शिष्टता-युक्त और भव्यशील अभियान है।"

आप भी किसी कार्य: व्यवसाय या प्रतियोगिता मे भाग लेने से पहले सफलता की कल्पना कीजिए, सफलता के विचारो को अपनी चेतना का अग बना लीजिए, यहाँ तक कि वे आपके अचेतन मन मे घर कर जाएँ। जब आप अपने लक्ष्य की कल्पना मे सर्वदा लीन रहने लगेगे, तो आपके लिए लक्ष्य तक पहुँचना सहज हो जाएगा, इतना सहज कि आप स्वयं हैरान रह जाएगे।

इस दुनिया के रग-मच पर ऐसे अगणित लोग प्रकट होते हैं, जो 'बी० ए० हुए, नौकर हुए पेंशन मिली, फिर मर गए, की प्रसिद्ध पक्ति को चरितार्थ करते हुए पैदा होते है, नाम मात्र की शिक्षा प्राप्त करते हैं, कोई छोटी-मोटी नौकरी या व्यापार कर लेते है, और जब मौत की घड़ी आ जाती है, तो चुपचाप चल बसते हैं। ऐसे ही लोगो की दयनीय दशा पर खेद प्रकट

करते हुए कवि ने कहा है—' ये लोग अपने गीतों समेत गहरी नीद सो जाते है !" अर्थात वह जब तक जीते है, अपनी योग्यताओ का उपयोग नही करते, और मरते समय उन्हें साथ ही ले जाते हैं। दुनिया को न उनके आने की सूचना मिलती है, न जाने का समाचार। उनका जन्म लेना और मरना समान रूप से महत्वहीन घटनाएँ है।

इन लोगो का यह खेदजनक अत क्यों होता है ? सम्भवतः इस लिए कि वे जीवन में जीने के उत्साह से प्रेरित नही होते। इनका जीवन-सिद्धात प्रायः यह होता है कि 'चलो तुम उधर को, जिधर की हवा हो।' वे कठिनाइयो और विपत्तियो के सामने छाती तान कर खड़े नही होते। उन्हे अपनी रचनात्मक शक्ति और आविष्कार-क्षमता पर विश्वास नही होता इसलिए उनमे मौलिकता और नवीनता के प्रति स्वाभाविक प्रवृत्ति का अभाव रहता है। उनकी इस जडता के कारण एक आशावादी कवि ने 'जिन्दा लाशों से' उनकी उपमा दी है।

ये लोग विवशताग्रस्ता, असहाय और निर्बल इसलिए नही हैं कि स्वयं स्रष्टा ने ही उन्हे शक्ति-सफूर्ति से विहीन रखा है, बल्कि असल कारण यह है कि वे जीने की प्रबल उत्कंठा नहीं रखते। जीने की उमंग के बिना जीवन व्यतीत करना मनु की प्रबुद्ध और स्वाभिमानी संतान को शोभा नही देता। इसलिए यह आपका मनुष्योचित कर्तव्य है कि आप जीने की गरमाहट को कभी मद न होने दें।

इगलेंड के एक प्रसिद्ध प्रधानमंत्री मि० रैमजे मैकडानलेंड की जीवन सगिनी जब मृत्यु शय्या पर पड़ी थी, तब इसने अपने अतिम क्षणो में पति को पास बुलाकर कहा कि आप मेरे मरने के बाद हमारे बच्चो के दिल मे जीवन के प्रति अभिरुचि और उससे आनन्दित होने की प्रबल इच्छा को जीवित रखें। इसके

लिए स्वय आप को बुढ़ापे और अकेलेपन के बावजूद आनन्दो-उल्लास के साथ जीवन व्यतीत करना चाहिए। उस बुद्धि सम्पन्न महिमा को मालूम था कि वृद्धावस्था मे, विशेषकर जब जीवन-साथी भी छूट जाएं, जीवन का उत्साह शिथिल हो जाता है। इसी लिए उसने वृद्ध पति से यह अनुरोध किया, ताकि उनकी सतान जीने की कला से अनभिज्ञ न रह जाए।

मार्शल फोश् का कथन है कि उत्साह मनुष्य का सब से उपयोगी अस्त्र है। 'स्टार नॉर्डन् लिखता है "जब तक मनुष्य में जीवन की गरमाहट और जीने की प्रबल उत्सुकता मौजूद है, वह जवान है।" विलियमसन् कहते हैं "सफल लोग विद्या-बुद्धि मे उन लोगों से श्रेष्ट नही होते, जिनके भाग्य मे केवल विफलता ही लिखी होती है। परन्तु पूर्वोक्त दल के लोगो मे जीवित रहने और सफल होने की अभिलाषा अपेक्षाकृत बहुत अधिक होती है वास्तविकता यह है कि भावना और उत्साह के बल पर समान्य योग्यता रखने वाले व्यक्ति भी तीक्षण बुद्धि वालो से अधिक सफल सिद्ध होते है। स्वय हमारे देश मे उर्दू कविता की यह पँक्तियाँ लोकोक्ति का स्थान प्राप्त कर गई है कि "जिन्दगी जिन्दादिली का नाम है, मुर्दा दिल क्या खाक जिया करते है।'

कुछ लोग मामूली कठिनाइयो से घबरा कर अपना काम छोड बैठते है, और किसी दूसरे काम की तलाश मे निकल खडे होते है। वे इस तबदीली का कारण यह बतलाते है कि पहला काम उनके स्वभाव और रुचि के अनुकूल नही था। परन्तु इस प्रकार की तबदीली यदि बार-बार की जाए, तो फिर किसी व्यवसाय या कलाकौशल में पूर्णता प्राप्त नही हो सकती। और पूर्णता के बिना सफलता की कल्पना करना भी कठिन है। फिर यह अस्थिरता और चँचल वृत्ति आत्मविश्वास की हानि करती है। ऐसे लोग जब भी किसी कार्य को प्रारम्भ करते है,

तो उनके मन मे यह शंका बैठी रहती कि सम्भव है इस काम मे भी सिद्धि न मिले। इस प्रकार वे किसी काम को पूरे विश्वास और सफलता की आशा के साथ शुरु नही कर पाते। परिणाम यह होता कि वे उम्र भर भटकते ही रहते है। इसलिए यह परमावश्क है कि मनुष्य अपने जीवन-लक्ष्य को बडी सावधानी के साथ सोच-विचार कर युवावस्था में ही निश्चित कर ले, और उसकी प्राप्ति के लिए तन मन से जुट जाए। अवश्य इसका यह अर्थ नही कि कोई व्यवसाए या सेवा क्षेत्र एक बार अपना लेने के बाद उस में परिवर्तन की गुंजाइश हो नही होनी चाहिए। यदि अनुभव से सिद्ध हो जाए कि कोई व्यवसाए विशेप प्रर्याप्त लाभ-दायक नही है, और उसमे उन्नति और सफलता भी कुछ अनिवार्य कारणों से असम्भव प्राय: है, तो उसका परित्याग कर कोई अन्य व्यापार आरम्भ करना बुद्धिमता के विरुध नही कहा जा सकता। परन्तु चेष्टा यही होनी चाहिए कि जीवन मे क्या करना है, इसका एक बार ही निश्चित रूप से निर्धारिण कर लिया जाए। कार्य-क्षेत्र के निरतर परिवर्तन से मनुष्य की निर्णय-शक्ति का ह्रास होता है, और आत्मविश्वास को अकथनीय हानि पहुँचती है।

जब आप अपनी रुचि और ध्येय के अनुसार किसी एक कार्य विशेप को अपना कर उसमे तनमय हो जाएँगे, तो उस से एक बडा लाभ यह भी होगा कि आपको मानसिक उलझनो से छुटकारा मिल जाएगा, और आप अपनी सारी शक्ति और ध्यान को एक दिशा मे केन्द्रित कर उत्साहपूर्वक कार्य कर सकेंगे। इस अवस्था में आपका मन भी आप के शारीरिक परिश्रम का साथ देगा। और परिणामतः आप शीघ्र ही सफलता के द्वार पर पहुँच जाएंगे।

बहुधा मनुष्य केवल इसलिए निराशाग्रस्त हो जाता है कि

वह किसी क्षणिक विफलता के कारण अपनी अच्छाइयों और योग्यताओं को भूल कर केवल कमजोरियों को ही देखने लगता है। इस प्रकार हीन भावना आत्मविश्वास को डॉवाडोल कर देती है। यदि आप इस रोग से आक्रात हैं, और सर्वदा अपनी कमज़ोरियो को ही स्मरण करते है, तो तत्काल इसका उपचार कीजिए। जो बाते आपके उद्देश्य से मेल नही खाती, सर्वदा उन्ही की कल्पना मे डूबे न रहिए, वल्कि उन बातो को ज्यादा अपने ध्यान मे रखिए जो आपके पक्ष मे हैं, उनकी एक सूची बनाइए, उन्हे कठस्थ कर लीजिए, और फिर उन्ही के सम्बन्ध में अधिक सोचिए। उनका विश्वास कीजिए, उन्हे अधिक प्रखर प्रभावी बनाइए। उदाहरण के लिए यदि आप मे कवि बनने की अपेक्षा निबध-लेखक बनने की योग्यता अधिक है, तो आप अपने मस्तिष्क से कविता की सनक को तत्काल निकाल दीजिए और अपनी इस 'योग्यता' पर एक आँसू भी न बहाइए। इसकी बजाए आप अपना सारा ध्यान एक निबंध लेखक बनने पर केन्द्रित कर दीजिए। इस प्रकार आप विफलता की आशंकाओं की वजाए सफलता की उज्ज्वल सम्भावनाओ को अपने समक्ष रख-कर सदैव आशान्वित रह सकेंगे।

उत्साहवर्द्धक और आशाप्रद विचार-धारा आध्यात्मिक सम्पन्नता की भूमिका ही नही, वल्कि भौतिक सफलता की आधर-शिला भी है। आप अपने कल्पना-जगत को आशा और उल्लास के फूलो से सजाएं, तो व्यावहारिक रूप से भी आप सफल और समृद्ध जीवन बिताने के योग्य बन सकेंगे।

दुनिया में ऐसे लोगों की संख्या अपार है जो अति हीन अवस्था में पालित पोषित होने पर भी केवल अपने ऊँचे सपनो और आशाओं के वल पर बड़े से बड़े पद तक पहुंचने मे सफल हुए। आप भी हमेशा उन्नति का स्वप्न देखा करे। आप भी पूण

विश्वास के साथ कहा करे कि आप का भविष्य भव्य और महान है। आप अपने भविष्य के सम्बन्ध में हमेशा आशान्वित रहें और स्थिति-चित्र के उज्ज्वल पक्ष को ही अधिक दृष्टिगत रखे। यदि आप इन बातो, का अभ्यास कर ले, तो फिर आप के लिए अपने लक्ष्य की प्राप्ति निश्चत और अनिवार्य हो जाएगी। फिर आप को दुनिया की कोई शक्ति सफलता महत्ता और प्रसिद्धि प्राप्त करने से वंचित नही रख सकेगी।

और यदि किसी समय संयोगवश परिस्थितियाँ प्रतिकूल हो जाएँ, और आप असुखद अवस्था मे जीवन व्यतीत करने पर बाध्य हो, तो उस समय आप अपने हृदय मंदिर में आशा-दीप को बुझने न दे, और विश्वास रखें, कि आपकी यह हीनता अथवा दुर्दशा सामयिक है। और वह दिन दूर नही, जब सब बाधाओं विपत्तियो के बादल छट जाएँगे और आप सफलता के मार्ग पर पुन: अग्रसर होगे। यह दृष्टिकोण, यह मनोवृत्ति और यह विचार-धारा आप के जीवन का निर्माण करने मे बड़ी सहायक सिद्ध होगी, और आपका भविष्य सचमुच बड़ा उज्ज्वल और वैभवशाली होगा।

विश्वास का पुनर्निर्माण

"मै समाप्त हो चुका हूँ। मेरा सर्वनाश हो चुका है। मै पन्द्रह वर्षो से जीवन-संघर्ष मे सलग्न हूँ। परन्तु अभी तक सफलता के दर्शन नही कर पाया। मेरा हर उपाय विफल होता है, मेरी हर योजना निष्फल रहती है। मेरा कोई हितैषी नही; कोई मित्र नहीं, कोई साथी नही। निर्दय काल ने मुझे कुचल कर रख दिया है। मेरे लिए जीवन का कोई सुख शेष नही रहा। मैं ससार का सर्वाधिक पीडित और आत्याचारित व्यक्ति हूँ। मैं अपना सब कुछ खो चुका हूँ।" यह सब कहकर वह सामने की कुर्सी पर लुढक सा गया। उसकी आँखो से अश्रु धारा बह निकली।

"सब कुछ ?" मैंने प्रश्न किया।

जी हाँ, सब कुछ उसने उत्तर दिया। "मेरी उम्र पैंतीस वर्ष है। परन्तु मैं बेरोजगार हूँ। मुझे कही काम नही मिलता। मेरे पास इतने पैसे भी नही है कि कोई छोटी-मोटी दूकान खोल कर बैठ जाऊँ। मैं अपने बच्चो के पालन-पोषण और शिक्षा का कोई प्रबन्ध नही कर सका। फिर मुझ सा आभागा और कौन होगा। अब मैं अपनी दशा सुधारने के लिए कुछ नही कर सकता।'

मैंने उससे सहानुभूति प्रकट की। उस समय इससे ज्यादा और कर भी क्या सकता था। उसने वास्तव मे बड़े कष्ट सहे थे। वह एक लम्बे समम से बेरोजगार था। कोई काम मिलता, तो चार दिन आराम से गुजरते। परन्तु बेरोजगारी उसे फिर

आ दबोचती थी। मुझे जब कभी उससे मिलने का सयोग हुआ। उसे यही रोना रोते पाया कि वह बेरोजगार है। वह घर से निकल कर किसी चायखाने मे जा बैठता। परन्तु जानकार लोग उसका दु:ख बटाने की बजाए उल्टा बाल की खाल निकालते। इससे उसे और भी लज्जित होना पडता है। आखिर उसने घर से निकलना ही छोड़ दिया क्योंकि—

मुसीबत का इक-इक से अहवाल कहना,
मुसीबत पै है यह मुसीबत ज्यादा।

इन सब कारणो से उस समय मैंने यही उचित समझा कि उसे लम्बे-चौड़े उपदेश देकर और ज्यादा परेशान न करूं। परन्तु कुछ दिनो के बाद मैंने उस से इस समस्या पर विस्तार के साथ बातचीत की। उसे बताया कि परिस्थितियों का सुधार असाध्य नही है। यदि वह निराशा और अविश्वास का परित्याग कर दे, तो अब भी अपनी बिगडी बना सकता है। वह सुशिक्षित है, और उसका स्वास्थ्य अभी भी ईर्षा-योग्य है। कोई कारण नही कि उसे कही अच्छी नौकरी न मिले। मैंने कुछ मित्रो के नाम बताए, जो उसकी सहायता कर सकते थे। इस प्रकार दिलासा देकर जब मैंने अनुभव किया कि उसके मन का बोझ कुछ कम हो चला है, तो मैंने उसे समझाया कि वह 'समाप्त हो चुकने और सर्वस्व खो बैठने के विचारो को यही समाप्त कर दे, और उसके स्थान पर अपने मन व मस्तिष्क को आशा, साहस और उत्साह के विचारो से भर ले। अपने पर, अपने बाहुबल पर और ऐश्वरीय सहायता पर विश्वास करे। अंधकारमय अतीत को सदा के लिए भूल जाए, और आज से नया जीवन आरम्भ करे।

मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, जब उसने मेरा धन्यवाद किया और वायदा किया कि वह नए सिर से जीवन को सार्थक

बनाने का प्रयाम करेगा। और प्रायः तीन वर्ष बाद जब उसने मुझे बताया कि उसकी विपत्तियो का अत हो चुका है, और अब वह सुख-शाति का जीवन व्यतीत कर रहा है, तो मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।

इसी प्रकार की घटना का वर्णन अमरीका के प्रसिद्ध मनो-विज्ञान-वेत्ता डा० पील ने अपनी एक पुस्तक मे किया है। वह बतलाते है कि किस प्रकार एक बावन-वर्षीय निराशाग्रस्त वृद्ध व्यक्ति के मन मे आशा का अकुर लगाया गया, जिस के बाद उसने फिर से जीना आरम्भ करके अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाया। डा० पील के देशवासी सच मे भाग्यवान है कि उन्हे शारीरिक रोगो के अलावा मानसिक व्याधियो के निराकरण की सुविधाएं भी प्राप्त है। हमारे देश मे भी मनोवैज्ञानिक चिकित्सा के महत्व का अनुभव किया जाना चाहिए। ऐसे लोगो की उपयुक्त सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए, जो दीर्घ काल तक कठिनाइयो और विपत्तियो के प्रहार सहन करते-करते जीवन से निराश और विरक्त हो चुके है। अवश्य इस का अर्थ यह नही कि आर्थिक सहायता का कोई मूल्य ही नही है जो लोग सामान्य आर्थिक सहायता अपने पैरो पर खडे हो सकते है उन्हे यदि कही से थोडी सी सहायता भी उपलब्ध न हो तो नि.सदेह बडी करुणात्मक बात है। परन्तु इस तथ्य को भी अस्वीकार नही किया जा सकता कि ऐसे लोगो मे अधिकतर केवल प्रोत्साहन और उचित पथदर्शक से ही अपनी बिगडी बना सकते है। इस दुनिया मे लाखो ही ऐसे लोग हैं, जो केवल हमारी सहानुभूति और सवेदना के ही अपेक्षी है, और जिन्हें आर्थिक सहायता के बिना भी सघर्ष करने पर उद्यत किया जा सकता है।

मुझे पिछले साल कालेज के एक विद्यार्थी का पत्र मिला वह

यक्ष्मा जैसा भयंकर रोग से ग्रस्थ था, और बम्बई के निकट किसी वड़े अस्पताल मे चिकित्सा करा रहा था। उसने अपने पत्र मे लिखा, "मै करीव एक साल से इस अस्पताल मे चिकित्सावीन हुँ। मैं जीवन की ओर से प्राय. निराश हो चुका था। परन्तु आप को पुस्तक "जीना सिखो" ने मुझे नया जीवन प्रदान किया। अब मै अनुभव करता हूँ" कि मेरा रोग असाध्य नही है। अब मैं जीवन के प्रति निराश नही रहा, और क्रमशः स्वास्थ्य लाभ कर रहा हूै।" इस नवयुवक की तरह हमारे देश के लाखो व्यक्तियो को केवल हमारी सहानुभूति की ही आवश्यकता है। उन्हे यदि वताया जा सके कि व्यर्थ की चिताओ से कैसे मुक्ति लाभ की जा सकती है, तो वे पुनः अपने जीवन का निर्माण करने पर तत्पर हो सकते हैं। मैं न मनोवैज्ञानिक चिकित्सक हूँ और न मनोविज्ञान विशेषज्ञ, परन्तु व्यवहारिक जीवन के शिक्षालय मे मैंने जो पाठ ग्रहण किया है, उसके आधार पर पूर्ण विश्वास के साथ यह कह सकता हूँ कि इस दुनिया मे अगणित ऐसे लोग वसते है, जिन्हे सहानुभूति कुछ प्रोत्साहन, कुछ आशाप्रद शब्दो और प्रेम भरे वाक्यो की धन से भी अधिक आवश्यकता रहती है। इन उपायो से उनके घाव भर सकते हैं, उनके मन की कली फिर से खिल सकती है, और वे पुनः संघर्ष के लिए तैयार हो सकते हे।

ऐसे लोगो की सब से वड़ी कठिनाई उनकी विश्वास हीनता है। वे समय की विपत्तियो का सामान करते-करते क्लात हो गए हैं, और अव नई कठिनाइयो को देखकर विचलित हो उठते है। यही लोग युवावस्था मे दृढ़ता और साहस की मूर्ति थे। परन्तु एक-दो वार की असफलता ने ही उन्हें साहसहीन बना दिया। वे अनुभव करने लगे कि सफलता उनके भाग्य मे ही नही है, इसलिए संघर्ष करना व्यर्थ है। अव उन्हे स्वयं पर दया

आती है, और वह अपनी दुर्दशा पर केवल आँसू ही बहाते है। अब यदि उन्हे किसी लाभप्रद व्यापार मे पूँजी लगाने को कहा जाए, अथवा साझेदारी का प्रस्ताव किया जाए, तो वह कानों को हाथ लगाते है ओर कहते है कि जब पिछले पन्द्रह बीस वर्षो के प्रयत्नो का कोई फल नही मिला, तो अब इतने विलम्ब से जीवन के पुनर्निर्माण की चेष्टा मूर्खता नही, तो और क्या है। जब-जवानी मे ही सफलता नही मिली, तो अब इस 'बुढापे' में क्या कर सकते हैं, और कैसे अपना जीवन बना सकते है।

इस अभिशाप से मुक्ति का एक मात्र उपाय है आत्मविश्वास का पूर्ननिर्माण। उन्हे बताया जाए कि खोया हुआ विश्वास पुनः प्राप्त किया जा सकता है। और असफलता को सफलता मे परिवर्तित किया जा सकता है। आधुनिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञों ने सर्वसम्पति से यह निर्णय दिया है कि यदि आप इस रोग से ग्रस्त है, अर्थात एक-आध बार की असफलता से ही इतने भयभीत हो गये है कि अब अपना जीवन बनाने का प्रयास तो दूर रहा, वर्तमान दशा के सुधार के लिए भी कुछ करने को तैयार नही; यदि आप अपने व्यवसाय को फिर से उन्नति की ओर ले जाने की कोशिश को अनावश्यक और अहितकारक समझते है; अपने सोए हुए भाग्य को जगाने के विचार मात्र से ही भयभीत हो उठते है, और स्वय को 'समाप्त' 'भाग्यहीन' और 'सर्वहारा' समझते है, तो अकाल मृत्यु के मुह मे जाने और अपने लिए खुद गढा खोदने की बजाए किसी मनोवैज्ञानिक चिकित्सक से तुरत परामर्श ग्रहण कीजिए। और उसकी सहायता से आत्म-विश्वास की पुन प्राप्ति के बाद जीवन के पुनर्निर्माण मे जुट जाइए।

इसे असम्भव न समझिए, इसे कठिन न जानिए। आप

खोया हुआ विश्वास पुनः प्राप्त कर सकते है, और अपने पर विश्वास करके अपनी क्षतिपूर्ति कर सकते है। आप जो कुछ गत दस, पन्द्रह या बीस वर्षों के संघर्ष से प्राप्त नही कर सके, उसे आगामी दो-चार वर्षों के प्रयास से ही प्राप्त कर सकते है। आपने आज से पन्द्रह-बीस वर्ष पूर्व जो स्वप्न देखा था, यदि वह आपके निरंतर प्रयत्नों से भी यथार्थ नही बन सका, तो निराश होने का कोई कारण नही है। आपके प्रयत्न विफल नही होंगे, आपने पन्द्रह-बीस वर्षों मे जो अनुभव प्राप्त किया है, वह अकारथ नही जाएगा।

सफलता के मदिर मे प्रवेश के लिए कोई समय नियत नही है, न उम्र की कोई कैद है। कुछ लोगो को युवावस्थ में ही सफलता मिल जाती है, तो कुछ को वृद्धावस्था में यह सौभाग्य प्राप्त होता है। कुछ लोगो के प्रयत्न शीघ्र ही अपना प्रभाव दिखाते है, तो कुछ की वडे विलम्ब से। तो फिर निराश क्यो हो ? हो सकता है कि आपके साथी अपने लक्ष्य तक पहुँच चुके हैं। इनमे से कुछ ऐसे भी होंगे, जिन्होने यह यात्रा आपके बाद आरम्भ की थी। उन्हे सफल देख कर आपका पिछडेपन पर दु खी होना स्वाभाविक है, परन्तु इसका यह अर्थ नही है कि आपकी वारी ही नही आएगी। यदि आप उन लोगो को देखते हैं, जो आप को पीछे छोड कर सफलता-शिखर पर पहुँच चुके हैं, तो तनिक उन लोगो को भी देखिए, जो आप से भी पीछे हैं, परन्तु इसके वावजूद पूरी तन्मयता और धैर्य के साथ कदम वढा रहे है। उन्ही की तरह आप भी निर्भय हो कर यात्रा जारी रखिए, और आत्मविश्वास को किसी अवस्था में भी हाथ मे जाने न दीजिए।

आत्मविश्वास नवयुवको के लिए मशाल का काम देता है, वृद्धो के लिए लाठी का। यह ऐसा धन है, जिसे कोई आप से

छीन नही सकता। इसका सग्रह आप के प्राणदान हृदय और ज्ञागवान मस्तिष्क मे रहता है। इसका उपयोग करना छोड़ दिया जाए, तो इसकी स्थिति उस धन-कोष जैसी हो जाती है, जो भूमि मे दबा पडा हो, और जब तक उसे बाहर न निकाला जाए, उसका कुछ भी मूल्य नही होता। इस लिए साहस न हारिए, अपने इस धन को बाहर निकालिए, और इससे काम लेना शुरू कर दीजिए।

यदि आप आत्मविश्वास की पुनर्स्थापना चाहते है, और अपनी दबी हुई शक्ति को पुनर्जीवित करना चाहते है, तो कठिनाइयो और विपत्तियो को भयकर समझना छोड दीजिए, उनसे बिल्कुल प्रभावित न होइये। कठिनाइयो को हमेशा इस दृष्टि से देखना चाहिए कि उन्हे दूर करने का क्या उपाय हो सकता है। और फिर पूर्ण विश्वास के साथ उन्हे दूर करने में लग जाए। उन्हे अपने से अधिक सबल समझने की भूल तो कभी न कीजिए।

कठियाइयो से निपटने का सही तरीका यह है उन पर काबू पाने का उपाय किया जाए, न कि राई का पहाड बना कर बैठ जाया जाए। यदि आप पहले से ही यह सोचे बैठे है, कि अमुक सस्था मे नौकरी की कोशिश बेकार है, क्योकि वहाँ का व्यवस्थापक भाई-भतीजा वाद के सिवा और किसी सिद्धात को नही मानता, या अमुक जगह आवेदन-पत्र देना फजूल है, क्योकि वहाँ का प्रधान सचालक स्वयं मूर्ख और मूर्खो का गुणग्राहक है, तो आप ही बताइए कि घर बैठे इस प्रकार के निर्णय कर लेने के बाद आप की बेरोज़गारी की समस्या कैसे हल हो सकती है? फिर आप को बेरोज़गारी की शिकायत करने का क्या हक है?

इस समस्या पर जरा गम्भीरता से विचार कीजि

पता लगाइए कि कही आप की कठिनाइयाँ भी कल्पना की उपज मात्र तो नही हैं। यदि आप चिंतन और विश्लेषण के बाद उसी निष्कर्ष पर पहुँचे, जिसकी ओर ऊपर संकेत किया गया है, तो यह निष्कर्ष स्वय मे आपके रोग का उपचार सिद्ध होगा। एक बार जब आपको विश्वास हो जाएगा कि आप की कठिनाइयाँ कल्पित है, तो आप स्वयमेव उनसे भयभीत होना छोड़ देंगे।

एक पांच वर्षीय बच्ची प्राय: नित्य ही रात के समय स्वप्न में एक भेडिए को अपनी ओर आता देख कर डर से जाग पड़ती थी, और रोना-चिल्लाना शुरू कर देती थी। माता-पिता ने उसे बहुत समझाया कि वह सपने के भेड़िए को वास्तविक न समझे। परन्तु अबोध बालिका पर उपदेश का प्रभाव न पडा। आखिर वे उसे एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सक के पास ले गये। चिकित्सक ने सब विवरण सुनकर बच्ची से भेडिए की सूरत शक्ल और दूसरी विशेषताओ के सम्बन्ध मे कुछ प्रश्न किए और उसके बाद कहा "अच्छा, तो यह वही भेडिया है, जो मेरे पास भी आया करता था। शुरू-शुरू में मैं भी इसे देखकर बहुत डरा करता था। परन्तु मुझे शीघ्र ही पता चल गया कि यह भेडिया दरअसल घर से निकाला हुआ एक गरीब कुत्ता है। अब यह बेचारा बच्चों से खेलने के लिए सपने मे उनके पास आ जाता है। इसके बाद जब भी मेरे पास आया, मैंने उसे पुचकारा, और प्यार किया। तब से वह मेरा दोस्त बन गया। आइन्दा जब वह तुम्हारे पास आए, तो तुम भी उसे प्यार करना। फिर देखना वह कैसे दुम हिला-हिला कर तुम्हारे पाव चाटता है।" डाक्टर की इस बात से बच्ची खुश हो कर हँसने लगी।

उस रात में जब वह अपने छोटे से बिछौने पर सोई, तो उसकी मां करीब ही एक कुर्सी बिछाकर बैठ गई ताकि यदि

बच्चो सपना देख कर रोने लगे, तो उसे सांत्वना दे सके। परन्तु उस रात मे बच्ची सुख की नीद सोती रही। केवल एक बार कुछ क्षणो के लिए उसके चेहरे पर घबराहट के लक्षण प्रकट हुए। परन्तु शीघ्र ही उसके होठों पर मुस्कान खेलने लगी इससे जाहिर था कि भेडिया उसके सपने में आया तो सही, परन्तु बच्ची ने उसके साथ दोस्ती कर ली।

आपभी विचार कीजिए कि आपकी 'कठिनाइयों के भेडिये' भी कही सपने के भेडिए तो नही है। यदि वे काल्पनिक ही है, तो भी आप उनसे दोस्ती कर लीजिए; उनसे डरना छोड दीजिए। वे न तो भयकर है, और न आप को हानि पहुँचाना चाहते है। बहुत सी कठिनाइयाँ तो आपकी दोस्त बनकर बड़ी सहायक सिद्ध हो सकती है।

उदाहरण के लिए, जिन व्यक्तियो को आप किसी युक्ति सगत तर्क के बिना अपना शत्रु समझ रहे है, उममे से कोई आप के प्रति शत्रुता की कोई भावना नही रखता। आपभी अपने मन को उनके प्रति विरोधात्मक विचारो से साफ कीजिए। फिर आप यह देख कर हैरान रह जाएँगे कि आपके अधिकतर काल्पनिक शत्रु वास्तव मे आपका अहित चाहने वाले नही है। उन के सम्बन्ध मे जितनी भी बाते आप के कान मे भरी गई है, वे सब मनघड़त कहानियाँ और झूठ का पुलन्दा है। आपका एक कल्पित शत्रु स्वय आपका 'जीवन' है, जिसे देख-देख कर आप भयभीत हो रहे है, और अकारण ही चीखते-चिल्लाते है। अपने इस जीवन को अपना मित्र समझिए, उसके उज्ज्वल पक्ष पर अधिक दृष्टिपात कीजिए। इस दुनिया मे सुखो की अपार राशि विद्यमान है। इससे आप लाभावित हो सकते है, बशर्ते कि आप अपनी काल्पनिक कठिनाइयो से भयभीत होना छोड दे, और जीवन के साथ मित्रता स्थापित करके राई का पहाड़ बनाने

की आदत का परित्याग कर दें। फिर 'कठिनाइयो के भेड़िए' आप के दोस्त बन सकते है, और उस बच्ची की तरह आपके होंठों पर भी मुस्कान खेल सकती है।

आत्मविश्वास का एक शत्रु आत्मलानि और अपने पर दया का भाव है। जब आप देखते है कि आप अपनी आशाओं के अनुसार उन्नति नही कर सके, या वर्षो की चेष्टा के बाद भी दरिद्रता और अभाव के बन्धनो से मुक्त नही हो सके, तो आप अपने को पीड़ित, अत्याचारित और दुर्दशा-ग्रस्त समझने लगते हैं, और एकांत मे अपनी दयनीय अवस्था पर आँसू बहाते हैं, यह 'आत्मकरुणा आपके लिए घातक है, क्योकि यह आपकी क्रियाशक्ति का अत कर देती है, और आप को इस योग्य नही रहने देती कि आप अपनी कठिनाइयों पर काबू पाने की कोई सफल योजना बना सके। यह एक प्रकट तथ्य है कि जो व्यक्ति सोचने समझने और कदम उठाने की शक्ति खो बैठता है, वह अपनी दशा कभी नही सुधार सकता। इस लिए आप अपने पर दया करने की आदत न डालिए। जो भी कठिनाइयाँ हो, धैर्य और साहस के साथ उनका मुकाबला कीजिए। और आखिर दम तक लड़ने और विजयी होने का संकल्प बनाए रखिए।

आयरलैंड के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता डी वलेरा के सम्बंध में बतलाया जाता है कि जब उसे स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान में बंदी बनाकर कारागार में ले जाया गया, तो उसने दरवाजे पर क्षण भर के लिए रुक कर अपनी पतलून की जेब से पाइप निकाला और उसे दीवार पर दे मारा। इस पर कारागार के अधिकारी ने कहा कि इसकी क्या जरूरत थी। आपके धुम्रपान पर प्रतिबंध लगाने का तो हमें ख्याल तक नहीं है। डी वलेरा ने उत्तर दिया कि आप लोग यह जानकर कि मैं बहुत ज्यादा

तम्बाकू पीता हूँ, मेरी इस कमजोरी से फायदा उठा सकते थे। इसलिए मै आपको इसका मौका ही नही देना चाहता।

स्वर्गीय मौलाना आजाद के सम्बन्ध मे भी एक ऐसी ही कथा है कि १९४२ में जब आपको दूसरे राष्ट्रीय नेताओ के साथ बदी बनाकर अहमदनगर के किले मे रखा गया, तो आपने अधिकारियो के कहने पर अपनी अवश्कताओ को सूची मे बहुत सी किताबो के नाम लिख दिए, जो आप अपने कलकत्ते के मकान से मँगवाना चाहते थे। परन्तु इसके बाद आपका ख्याल आय कि किताबो के विषय मे आपकी कमजोरी से विदेशी शासक अनुचित लाभ भी उठा सकते है, और किसी भी समय किताबों की सपलाई बन्द करके आपको परेशान कर सकते है। यह सोचकर आपने अपनी सूची से सब किताबो के नाम काट दिए। इस प्रकार आपने अपने आत्मविश्वास और आत्मसम्मान दोनों की रक्षा की है।

आत्मविश्वास को वनाए रखने का यही तरीका है कि अपनी कमजोरियो पर वीरतापूर्वक काबू पाया जाए, और अपने मन व मस्निष्क को निर्बलता, पतन और पराजय के विचारो से दूर रखा जाए। विरोधात्मक विचारो के होते आप कोई भी योजना तैयार नही कर सकते। और यदि कोई कार्यक्रम बना भी ले, तो उसे क्रियावित नही कर सकते। इसलिए यदि आप वास्तव मे सफलता चाहते है, तो सबसे पहले ऐसे सब विचारो का अत कीजिए, जो आपको अपनी ही दृष्टि मे तुच्छ और तिरस्कृत बनाते है। ऐसा करने के लिए आपठोस और क्रियात्मक विचार का सहारा लीजिए। अर्थात जब असफलता या पराजय के विचार सिर उठाएँ, तो आप तत्काल उनपर जवाबी आक्रमण करे, और मैं"मैं कर सकता हूँ," "मैं सफल होकर रहूंगा" "सफलता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है आदि वाक्यो को बार-बार दुहरा कर

उनके स्वरूप को अपने मानस पटल पर अंकित कर दीजिए। इन वाक्यों को अपना स्थायी मित्र बनाइए, इन से याराना गाँठिए। फिर देखिए, आपकी योजनाए किस तरह सिरे चढती हैं, और आप कितनी सहजता से सफलता प्राप्त करते है।

अपने मन मे अपना एक ऐसा चित्र बनाइए, जिसमे आप को सफल और सम्मानित दिखाया गया हो। यदि आप इस चित्र को सदैव अपनी कल्पना मे रखे और उसे किसी हालत में भी अपनी आतरिक दृष्टि से ओझल न होने दे, तो फिर स्वयं आपकी कल्पना-शक्ति उसे और स्पष्ट और प्रखर बना देगी। मानवी कल्पना-शक्ति की यह एक विशेपता है कि जिस प्रकार का चित्र उसके द्वारा निर्मित होता है, बाह्य-शक्तियाँ उसे यथार्थ रूप देने के लिए क्रियशील हो जाती है। इस लिए प्रकट परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही विकट और प्रतिकूल क्यो न हों, आप अपने 'आदर्श चित्र' को सदैव अपने सामने रखे। भारत के एक बहुत बड़े साप्ताहिक पत्र के सम्पादक ने मुझे यह दिलचस्प बात सुनाई कि उन्होने अपने पत्र की प्रकाशन सख्या एक लाख से भी ऊपर ले जाने मे जो आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है, उसका रहस्य 'एक लाख' का 'कल्पना-चित्र' है। उन्होने पहले ही दिन से, अर्थात जिस दिन अपना पत्र आरम्भ किया, अपनी प्रकाशन-सख्या एक लाख मानी। दस वर्षो तक वह इस कल्पनिक संख्या को यथार्थ मानते रहे, यहाँ तक कि आज वह सचमुच यर्थाय हा है।

आप भी अपने को सदैव उस स्थिति मे देख, जिसमे होने की प्रबल इच्छा आपके मन मे है। इस कल्पना-चित्र को आप कभी मिटने न दे, और उसे यथार्थ बनाने का प्रयास निरतंर जारी रखें। जब आप सफलता के चित्र को—अपने आदर्श-चित्र को—सदैव अपने सामने रखगे, तो आपकी सफलता बिल्कुल निश्चित हो जाएगी।

निर्णय-शक्ति

ब्रिटेन के प्रसिद्ध पत्र कार मि० व्युर्ले वैक्स्टर अपने साप्ताहिक पत्र मे अमरीकन राजनीतिज्ञ है रल्ड् स्टेसन के साथ अपनी एक भेट का उल्लेख करते हुए लिखते है कि तीन वर्ष पूर्व वह जलपोत 'कुइन् मेरी' मे यात्रा कर रहे थे कि रात के खाने पर उन की मुलाकात एक अमरीकन युवक से हुई। वह अमरीका और ब्रिटेन के सम्बन्धों पर उससे विचार विनिमय करने लगे। मि० वैक्स्टर न यह जानने के लिए कि द्वितीय महायुद्ध मे अमरीका को सहायता के लिए उसके वहुत कृतज्ञ है, कहा कि ब्रिटेन के लोग अमरीका के तत्कालीन राष्ट्रपति मि० रूजवेल्ट को वहुत सम्मान की दृष्टि से देखते है। क्योकि उन्होने मित्र राष्ट्रों को समयक सहायता प्रदान करके विनाश से बचा लिया। परन्तु उस अमरीकन युवक ने इस श्रद्धाजली पर प्रसन्नता प्रकट करने की बजाए विरिक्त-भाव से कहा, "मगर मै मि० रूजवेल्ट को विलम्ब का दोषी मानता हूँ।"

इस पर मि० बैक्स्टर ने तनिक सावधानी के साथ प्रश्न किया, "तो आपके विचार में सहायता देने का उचित समय कौसा था ?

"म्यूनिख का समय! (अर्थात जब ब्रिटेन के प्रधानमंत्री मि० चैम्बरलैन हिटलर से मिलने म्यूनिख गए और शांति के नाम पर चंकोस्लोवाकिया का बलिदान कर आए)।

"अगर मि० रूजवेल्ट उसी समय भूमध्य सागर में एक बेडा भेजकर घोषणा कर देते कि अमरीका ब्रिटेन और फ्रांस की सहायता करेगा, तो हिटलर के होश ठिकाने आ जाते, और वह पोलैंड पर आक्रमण करने से पहले सौ बार सोचता। शायद युद्ध न छिड़ता" मि० वैक्स्टर लिखते हैं कि मै उस अमरीकन युवक की बुद्धिमता से बहुत प्रभावित हुआ। इसमें सदेह नही कि यदि मि० स्टेसन् के मतानुसार अमरीका म्यूनिख के समय ही यूरोप की सहायता करने की घोषणा कर देता, तो सम्भवतः हिटलर को विश्व-शांति नष्ट करने का साहस न होता। इस दृष्टि से अमरीका का समयानुकूल निर्णय न कर सकना द्वितीय महायुद्ध का एक बड़ा कारण बना।

निर्णय करने में विलम्ब जहाँ सामुहिक रूप से मानवता के लिए हानिकर सिद्ध होता है, वहाँ व्यक्तिगत रूप से भी घातक हो सकता है। दुनिया मे बहुत से लोग अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने और अपने प्रयत्नो का पुरस्कार पाने में केवल इसलिए असफल रह जाते है कि वह दुविधा और आलस्य के रोगी होते है। ऐसा बुद्धिमता और योग्य युवक उन्नति के शिखर पर कैसे पहुँच सकता है, जो किसी विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण होने के बाद एक दीर्घकाल तक यही निर्णय नही कर पाया कि उसका जीवनलक्ष्य क्या होना चाहिए, और उसकी प्राप्ति के लिए उसे किस जीवन-क्षेत्र को अपना संघर्ष स्थल बनाना चाहिए। इस दोष का दायित्व स्वाभाविक भीरुता पर डाला जाए अथवा हमारी शिक्षा-प्रणाली पर, परन्तु यह है तथ्य कि हमारे देश के अधिकतर नवयुवक जीवन क्षेत्र मे प्रवेश करते समय निर्णय शक्ति से काम नही लेते। जब वे शिक्षालयों से उत्तीर्ण होते है, तो उनका सर्वप्रथम लक्ष्य किसी नौकरी तक सीमित होता है। मिलने वाली नौकरी उन्नति का साधन बन

सकती है या नही ? उस नौकरी से उनकी स्वाभाविक रुचि है या नही ? इन प्रश्नो पर वे विचार करने का कष्ट नही करते, न उसके माता-पिता ही इस दिशा मे उनका मार्गदर्शन करते है। अवश्य इसमे हमारे अधिकतर लोगो की आर्थिक विवशता का भी बहुत हाथ है, और ब्रिटिशकालीन परम्पराओ का भी परन्तु इस विवशता और इन परम्पराओ का इलाज भी यही है कि हजारो युवक निर्दिष्ट दिशा मे सोचना आरम्भ करे। इस समय परिस्थिति क्या है ? एक साइस ग्रेजुएट अखबार मे अनुवादक की आवश्यकता का विज्ञापन पडता है, और आवेदन पत्र भेज देता है। वह एक क्षण के लिए भी यह नही सोचता कि अनुवाद का कार्यक्षेत्र उसकी उन्नति का सोपान बन सकेगा या नही। वह उस परिश्रम और आर्थिक व्यय को भी भूल जाता है, जो उसने विज्ञान की शिक्षा ग्रहण करने के लिए वहन किया

अवश्य इस परिस्थिति का एक कारण हमारी वर्तमान सामाजिक व्यवस्था और उसके बने रहने मे सत्ताधिकारीयों का विशेष हित भी है। इस व्यवस्वथा के रहते बेरोजगारी का पूर्ण उन्मूलन असम्भव नही, तो कठिन अवश्य है। परन्तु इसमें भी सदेह नही कि व्यवस्था परिवर्तन के लिए हमारे युवको मे आत्मविश्वास और निर्णय की शक्ति होनी चाहिए। केवल योग्यता ही प्रर्याप्त नही है, उससे काम लेने का साहस भी होना चाहिए। यदि हमारे युवक अपने पर विश्वास करते हुए अपने भविष्य की योजना तैयार करे, और फिर अपने निर्णय के अनुसार जीवन-सग्राम मे भाग ले, तो उन्हे कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना तो अवश्य होगा, परन्तु वे अतत. सफल भी जरूर होगे। भारत जैसे देश मे, जहाँ कोरे ग्रेजुएटो की अपेक्षा वैज्ञानिको, डाक्टरो, इजीनियरो और विभिन्न क्षेत्रो के विशेषज्ञो की अधिक आवश्यकता है, कॉलेज की साधारण शिक्षा पर

पैसा समय और श्रम का अपव्यय क्यों सहन किया जाता है, यह समझ से बाहर है। यदि अधिकाधिक भारतीय नवयुवक हस्त-कौशल और उद्योग में प्रवृत्त हों, तो कोई कारण नहीं कि देश में सब लोगों के लिए काम के पर्याप्त अस्तित्व मे न आएँ।

जो लोग समय पर ठीक निर्णय करने के महत्व से अनभिज्ञ होते है, वे महत्ता के अधिकारी कभी नही बनते। दुनिया के कितने ही सुप्रसिद्ध वैज्ञानिकों, आविष्कारो और विद्वानो को अपने कार्य-क्षेत्र का चुनाव इसी प्रकार की प्रतिकूल परिस्थितियो में करना पड़ता था, जैसी कि आज हमारे युवक समुदाए के सामने है। परन्तु मानवता के ये महान उपकार कठिनाइयो को देखकर भयभीत नही होते थे। वे बडे से बडा मूल्य चुका कर भी अपनी योग्यता का परिचय देने पर दृढ सकल्प रहे। और उन्हे विश्वास हो गया कि एक विशेष कार्य-क्षेत्र मे उन्नति और प्रसिद्धि प्राप्त करने के अलावा मनुष्य मात्र के हितकारक भी बन सकते हैं, तो उन्होने अपनी सारी शक्ति और सारा ध्यान उसी क्षेत्र मे अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने मे लगा दिया।

महान विचारक कैसे अस्तित्व मे आते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए एक विद्वान लिखता है, "उन्हे चुनौती दीजिए, उनके आगे कठिन और विकट समस्याएँ रखिए", परन्तु इस चुनौती को केवल वही लोग स्वीकार कर सकते है, जो साहसी हों, और अपने वास्तविक महत्व से परिचित होने के अलावा अपनी योग्यता को प्रकट करने के लिए हर मुसीबत झलने को तैयार हों।

मनुष्य इस धरती को स्वर्ग कैसे बना सकता है? रोग, महामारी, अभाव और दरिद्रता मे कैसे मुक्ति-लाभ कर सकता है? उस पवित्र कर्तव्य को कैसे निभा सकता है, जो प्रबुद्ध जीव होने के नाते उसको सौंप दिया गया है? यह चुनौती हम सब के

लिए है। और हम सबका कर्तव्य है कि मानवता के गौरव और उत्कर्ष के लिए इस चुनौती को स्वीकर करे।

यदि आप ऐसे लोगों के व्यक्तित्व का विश्लेषण करें, जिन्हें अपनी क्रियाशक्ति पर विश्वास नही है, तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि उन्होने अभी अपने ज्ञानात्मक जीवन का प्रारम्भ ही नही किया। वे आजीवन दुविधा और संकोच में पड़े रहते है। उनके सामने जब कोई कठिन समस्या आती है, तो वे पलायन मार्ग ढूँढने लगते है। वे स्वय सोच विचार नही करते, बल्कि अबोध बालको की तरह दूसरो के मत और परामर्श के अपेक्षी रहते है। और यदि स्वय कोई निश्चय कर भी लेते है, तो उसे बराबर सदेह की दृष्टि से देखते है, यहाँ तक कि मुसीबतों का पहाड सिर पर आ गिरता है। उस समय उनकी दशा दर्शनीय होती है। उन्हे न तो अपनी इस योग्यता पर विश्वास होता है कि वे इन मुसीबतो का मुकाबला कर सकेंगे, और न वे पहले से यह सोच रखते है कि समय पर मुसीबतो का सामना कैसे करेंगे। परिणाम यह होता है कि वे मुश्किल को देखते ही हथियार डाल देते है। इस दल के लोग अपने बचाव के लिए हाथ-पाँव मारते भी है, तो सफल नही होते क्योकि अव्यवस्थित और दिशाविहीन प्रयत्न प्राय निष्फल भी होते है।

मैं एक सुशिक्षित युवक को मानता हूँ, जिसका जीवन विभिन्न क्षेत्रो मे असफलताओं की एक शृंखला है। वह सुबोध और साहसी है, परिश्रमी और महत्वकांक्षी भी है। वह कई वर्षो से बडी दृढता के साथ समय के उलट-फेर का मुकाबला कर रहा है। परन्तु जीवन मे सफलता उसे आज तक नहीं मिली। कारण, वह सदैव दुविधाग्रस्त रहा। उसने अपने वयस्क जीवन का प्रारम्भ करने से पहले अपने लिए कोई स्पष्ट और यत्नसाध्य कार्यक्रम निर्धारित नही किया।

शुरू मे उसने एक अर्ध सरकारी विभाग में नौकरी की। उसका विचार था कि इस विभाग से सम्बद्ध रखकर वह अपने जीवन-लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा। परन्तु कुछ वर्ष के बाद उसने यह विचार बदल दिया और एक दूसरे क्षेत्र मे नौकर हो गया। उसके बाद उसने लगभग एक दर्जन विभिन्न प्रकार की नौकरियाँ की। अवश्य हर वार अपना कार्य रूप बदलते समय उसके सामने अपना भविष्य ही होता था। परन्तु जो व्यक्ति दस वर्षों मे भी यह निश्चय न कर सके कि उसकी प्रवृति किस ओर है, अर्थात वह किस मार्ग से चलकर अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है, वह जीवन मे सफल कैसे हो सकता है।

यदि हमे अपरिमित समय तक जीने की सुविधा प्राप्त होती तो यह अनिश्चितता सम्भवत. इतनी हानिकर न होती। परन्तु मुश्किल यह है कि हमे एक सीमित समय तक ही जीने का अवसर प्राप्त है। और इस अल्प अवधि मे हमारे प्रयत्न तभी सफल हो सकते हैं, जब हम एक-एक क्षण को मूल्यवान जाने, और समय के उपयोग मे उदारता दिखलाने की मूर्खता न करें बार-बार अपना कार्य-क्षेत्र बदलने वाला व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कुशल कैसे हो सकता है और कार्य कुशलता के बिना सफलता कैसे प्राप्त कर सकता है ? यही कारण है कि स्थान-स्थान भटकने वाला व्यक्ति अपने लक्ष्य तक मुश्किल ही से पहुँच पाता है। अपने अल्प जीवन में हम मनोवांछित सफलता तभी प्राप्त कर सकते हैं, जब हम अल्पावस्था में ही अपने जीवन पथ का निश्चय करके दृढता पूर्वक उस पर चलते रहें।

मैंने कार्य-क्षेत्र, व्यापार या नौकरी मे बार-बार के परिवर्तन का जो विरोध किया है, उससे मेरा आशय यह नही कि एक बार जो मार्ग अपना लिया जाए, वह गलत या उन्नति में बाधक सिद्ध होने पर भी बदला न जाए। मेरा निवेदन केवल इतना है

कि अकारण' हो अथवा भावावेश मे आकर एक काम का परित्याग कर दूसरे को अपनाने मे कोई विशेष लाभ नही हो सकता। यदि आप किसी विभाग या कार्यालय मे कुछ वर्षो तक मेहनत और ईमानदारी से काम करने के बाद यह अनुभव करे कि वहाँ आप को उन्नति के पर्याप्त अवसर नही है, तो उस काम को छोड देना ही श्रेयस्कर है। परन्तु ऐसा निर्णय सामयिक अथवा भावनात्मक मात्र नही होना चाहिए, बल्कि सब तथ्यों पर अच्छी तरह विचार करने के बाद किया जाना चाहिए ताकि आप नए क्षेत्र मे पूरे विश्वास के साथ पदार्पण करे, और दृढ सकल्प हो कर उसमे निपुणता प्राप्त करने का प्रयास करे यह न हो, कि जब कभी आपकी किसी नए स्थान अथवा पद पर दस बीस रुपया ज्यादा की पेशकश कर दी जाए, आप अपनी प्रवृति या रुची आदि बातो को भूलकर तुरन्त तबादले के लिए तैयार हो जाएँ।

'नित्य जीवन का मनोविज्ञान' नामक पुस्तक का रचयिता अर्न्स्ट डचेज इस समस्या का प्रतिपादन करते हुए लिखता है कि जो व्यक्ति निर्णय-शक्ति नही रखता, उसके सामने कोई बडी समस्या आते ही वह व्यग्र हो उठता है, और वह व्यग्रता उसकी रही सही निर्णय शक्ति को भी समाप्त कर देती है। यही लेखक आगे चलकर लिखता है कि हम अपने जीवन के सम्बन्ध मे कोई महत्वपूर्ण निर्णय करते समय उन वाह्य तथ्यों और घटनाओ को तो दृष्टिगत रखते है, जो हमारे पक्ष या विपक्ष में होती है, परन्तु हम अपनी आतरिक मानसिक परिस्थितियों अथवा मनोभावो की बहुधा उपेक्षा करते है। उदाहरण के लिए हम नया जीवन आरम्भ करने के निश्चय से इस लिए बचना चाहते हैं कि कही हमारी दशा पहले से भी हीनतर न हो जाए कही नया वातावरण वर्तमान वातावरण से भी ज्यादा कष्ट

कर और हानिप्रद सिद्ध न हो। प्रकट है कि यह 'संदेह भाव' वास्तविकताओं पर आधारित नही होते। इसलिए नया मार्ग अपनाने का निश्चय करते समय हमारे सामने यह सिद्धांत होना चाहिए कि हमे नए मार्ग के उचित होने का पूर्ण विश्वास है या नही। तात्पर्य यह है कि हम जो भी निर्णय करें, पूरे सोच विचार, सावधानी और विश्वास के साथ करे, और एक बार दृढ निश्चय कर लेने के बाद दुविधा, संदेह और शका को अपने पास फटकने न दे। नए सघर्ष सफल होने का केवल यही एक उपाय है।

यदि मैंने मित्रों के परामर्श के विरुद्ध केवल अपने विवेक के अनुसार कोई निर्णय किया, और दुर्भाग्यवश वह निर्णय मेरे लिए हानिकारक सिद्ध हुआ, तो मैं किसी को मुंह दिखाने योग्य नही रह जाऊँगा—यह भय, मित्रो द्वारा उपहासित और समाज द्वारा तिरस्कृत होने का भय सफलता का शत्रु ही नही, सुख, शांति और मन की स्थिरता के लिए भी घातक है सामाजिक मर्यादाओं और परम्पराओका सम्मान तथा मित्र-मडली के सामान्य मत का आदर मानव का कर्तव्य है। परन्तु जहाँ तक व्यक्तिगत उन्नति के लिए सघर्ष करने अथवा अपने किसी क्षेत्र विशेष का चुनाव करने का प्रश्न है, इसमे स्वयं अपने सिवा किसी और के मत का भावनाओ को अत्याधिक महत्व नही देना चाहिए। अवश्य अपने जीवन पथ का निर्धारण करते समय आप मित्रो, सम्बन्धियो से परामर्श कर सकते हैं, और सम्बंधित पुस्तको आदि से भी लाभ उठा सकते हैं, परन्तु अंतिम निर्णय स्वय आपको ही करना चाहिए। यह बात पहले कही जा चुकी है कि जो कुछ भी आप हैं, अथवा कर सकते हैं, उसका पूर्ण ज्ञान केवल आपको ही हो सकता है। मित्रगण अथवा साधारण समाज आपके व्यक्तित्व और

योग्यता से पूर्णत: परिचित नही हो सकते। वे केवल आपके किसी एक पक्ष विशेष को ही देख पाते है। आपकी वास्तविकता केवल आप पर ही प्रकट हो सकती है। इस लिए आप स्वयं निर्णय करने मे केवल इस कारण कभी सकोच न कीजिए कि मित्रगण क्या कहेंगे, अथवा इस निर्णय पर साधारण समाज की क्या प्रतिक्रिया होगी। यदि आपने अपनो या परायो की टिप्पणी के डर से निर्णय करने मे आनाकानी की, तो आपकी प्रगति का मार्ग सदैव अवरुद्ध रहेगा।

आखिर आप भूल-चूक से इतने भयभीत क्यो है? भूल-चूक किस से नही होती, और कौन व्यक्ति है, जो ईमानदारी के साथ यह दावा कर सके कि उसका कोई निर्णय कभी गलत सिद्ध नही हुआ? फिर आप गलती के डर से अपनी नीद क्यों हराम कर रहे है? इसके अलावा क्या आप इस बात को अनुभव नही करते कि 'दुविधा और अनिश्चितता, त्रुटिपूर्ण निर्णय से भी ज्यादा अनिष्ठकर है, और अनावश्यक सकोच जीवन को असह्य बना देता है? फैसला न कर पाने अथवा बार-बार फैसला बदलने से मस्तिष्क पर दबाव पडता है, वह थक जाता है। इससे उसका हर नया फैसला पहले से भी ज्यादा गलत और खतरनाक हो जाता है, यहाँ तक कि ऐसी स्थिति आजाती है कि फैसला करने का सामर्थ्य ही शेष नही रह जाता। इसी लिए प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मि० बासल कोलिस कहते है कि जीवन के सुखो का लाभ उठाना है, तो निर्णयशक्ति से समुचित काम लीजिए। कठिन समस्याओ मे भी निर्णय करने से जी न चुराइए और निर्णय इतनी सावधानी के साथ कीजिए कि उसमे परिवर्तन की आवश्यकता ही न पड़े। यदि प्रयोग से निर्णय गलत भी सिद्ध हो, तो परवाह न कीजिए। अगली बार उससे लाभ उठाइए, और अधिक सुस्थित निर्णय कीजिए।

भारत के एक प्रसिद्ध न्यायाधीश का कथन है कि मैं बहुत सोच-समझकर निर्णय देता हूँ। परन्तु एक बार निर्णयोच्चारण के बाद फिर यह सोचने नही बैठ जाता कि मेरा निर्णय सही था या गलत। यदि हम यही सोचते रहें, तो जीना मुश्किल हो जाए।

आप कह सकते है कि जहाँ तक निर्णय शक्ति से काम लेने। समयानुकूल और उचित निर्णय करने तथा आलस्य और सकोच को त्यागने का सम्बन्ध है, आप मुझसे सहमत हैं, और आइन्दा इन नियमो का पालन करने की चेष्टा करेंगे। परन्तु ठीक समय पर निर्णय करने या न करने का आत्मविश्वास से क्या सम्बन्ध है? इस प्रश्न का सतोषजनक उत्तर मैं दे चुका हूँ। यदि आप बिना सोचे-समझे निर्णय करने के अभ्यस्त है, यदि आप अपने फैसलो को बार-बार बदलना बुरा नहीं समझते, और यदि आप मित्रों के उलाहनो के डर से निर्णय करने मे सकोच करते हैं, तो यह आदत आपको अपनी योग्यता पर विश्वास करने की स्थिति मे नही रहने देगी। और जब आप फैसला करने की शक्ति ही खो बैठेंगे तो आपको विश्वास हो जायगा कि आप किसी भी विषय में अपना मार्ग निर्धारित करने के योग्य नही है। और जब आप अपना मार्ग तक निश्चित नही करेंगे, तो उस पर चलने की क्षमता आप में कहाँ से आएगी? आप एक-एक पग पर दूसरों का अवलम्बन लेना चाहेंगे। इस प्रकार परतंत्र होकर आप कहाँ तक जी सकेंगे, यह कहने की आवश्यकता नही। इसलिए यह कहना अनुचित नही है कि जो लोग अपनी योग्यता और प्रतिभा का यथोचित पुरस्कार प्राप्त करना चाहते है, उन्हे समयक और सही निर्णय करने का अभ्याम करना चाहिए, ताकि वे आत्म-विश्वासी बन सकें, और जीवन-सघर्ष मे पुरुषार्थ कर सकें।

आज में रहिए

"मैं आँगन मे गुडिया लेकर खेल रही थी। गुडिया मेरे हाथ से छूट कर जमीन पर गिर पडी और उसके दो टुकडे हो गए। मुझे गुडिया के टूटने का बेहद दु.ख हुआ, और मैं रोती हुई अपने कमरे मे चली गई। मेरी माँ ने मेरे रोने की आवाज सुनी, तो वह तत्काल मेरे पास आई। उन्होने मुझे साँत्वना दी और प्यार करते हुए कहा, "प्यारी बेटिया। गुडिया के टूटने पर रोने का समय आज नही है। कल शायद तुम्हें इस घटना पर आँसू बहाने का अवकाश मिल जाए। लेकिन आज—आज तो हमे गुड़िया की मरम्मत करनी होगी, उसे फिर से जोड़ना होगा। और यह काम रोने-धोने से नही हो सकता। इसके लिए हमें थोड़ी सी गोद, अकल और मेहनत से काम लेने की जरूरत है।"

ये उत्साहप्रद शब्द सुनकर मेरे आँसू थम गए। और जब हम ने गुड़िया के दोनो टुकड़ो को फिर जोड़ लिया, तो मेरा शोक भी समाप्त हो गया। "प्रसिद्ध अभिनेत्री देविका रानी अपने बचपन की इस घटना का वर्णन करने के बाद लिखती है कि मैंने अपनी माँ से जो कुछ सीखा, उसे कभी भूल न सकी। मुझे जब कभी किसी आकस्मिक विपत्ति का सामना हुआ, अथवा कोई दु:खदायक घटना घटी, तो मैंने तत्काल ही अपने से कहा "कल शायद दुखी होने और अपने दुर्भाग्य पर आंसू

बहाने का अवकाश मिल जाए, लेकिन आज—आज तो मुझे इस विपत्ति का प्रतिकार करना है और इस दुर्घटना को सहन करने का उपाय ढूँढ़ना है।" इन शब्दों के चमत्कार से मेरा साहस पुनर्जीवित हो उठता था।

यदि हम इस विदुषी की तरह अतीत की भूलो और असफलताओ पर रोने-धोने और अपने को कोसने का काम कल पर उठा रखें, और कुछ करने की सोचे, कोई ऐसी योजना बनाएँ, जिसे क्रियांवित करने से हमारी क्षति-पूर्ति हो सकती हो तो, हमें बात-बात पर रोने और जीवन से ऊब जाने का अवकाश शायद ही मिले।

"जीवन एक जंजाल है, "यह दुनिया दुःखों का घर है, "जीवन निर्वाह एक महान कष्ट है" आदि वचन अक्सर लोगों की जबान पर रहते हैं। और जब हम मनुष्यों को असहाय और विवश पाते है, तो हमे इन वाक्यो के सत्य होने में सदेह कैसे हो सकता है ? परन्तु इस मे भी संदेह नही कि इन विपत्तियों का मुकाबला करने और उन पर विजयी होने का सीधा मार्ग अपने पर विश्वास करके उनका अत करने की चेष्टा करना है। और यह केवल तभी सम्भव है, जब हम 'आज मे रहे, अर्थात आज ही कठिनाइयो पर काबू पाने का प्रयत्न करे। यदि हम इस सिद्धांत को अर्थात आज का काम आज करने के नियम को अपना जीवन दर्शन बना ले, तो फिर हम शायद ही दुनिया को 'दु:खों का घर' कहे, अथवा सुख की खोज के लिए मारे-मारे फिरने पर विवश हो।

"आज हमें काम करना है। हाँ, कल—शायद कल हमे अपनी विवशता और असहायता पर आँसू बहाने का अवकाश मिल जाए"—इसे हम अपना जीवन-दर्शन बना लें, तो नि:संदेह हमें कल भी दु:खी और शोकग्रस्त होने का अवसर नही मिलेगा

क्योंकि जब हम कल सुबह नींद से जागे, तो वह 'कल' भी 'आज' मे परिणत हो चुकी होगी। और आज के लिए तो हम शपथबद्ध हैं कि इसे कुछ करने और व्यस्त रहने का दिन समझेगे । इस प्रकार हम परेशानियों से सदा के लिए अपना पिंड छुडा सकते है, कठिनाइयो का मुकाबला करने और आघात सहने के अभ्यस्त बन सकते है, और अपनी क्षति-पूर्ति के लिए सघर्षशील हो सकते है।

'आज' के जीवन सिद्धात को अपनाने में कभी त्रुटि नही करनी चाहिए। यह सिद्धात 'कल' की विपत्तियो को हमेशा हम से दूर रखता है। जब कभी हम पर मुसीबतो का पहाड़ टूट पड़े, कोई भारी आर्थिक हानि सहन करनी पड़े, अथवा किसी विकट समस्या का सामना हो जाए, तो हमें उस पर दुःखी होने और आँसू बहाने का काम 'कल' पर उठा रखना चाहिए, और 'आज' तो केवल उपाय करने क्षति-पूर्ति करने और समस्या का हल निकालने मे लग जाना चाहिए।

परन्तु 'आज नही, कल—शायद कल' के सिद्धात को अपनाने की योग्यता तभी पैदा होगी, जब आप 'आज मे रहना' सीख लेंगे और अतीत के गडे मुर्दों को उखाडने की आदत छोड़ देंगे। हमे अपनी पूर्व की असफलताओ से कभी यह निष्कर्ष नही निकालना चाहिये कि अब हम आइदा भी कभी सफल नही हो सकते और न इस भ्रम मे रहना चाहिए कि जब अतीत मे हमारे प्रयत्न निष्फल और व्यर्थ सिद्ध हुए है, तो भविष्य मे भी ऐसा ही होगा। वास्तविकता यह है कि व्यावहारिक जीवन में परिस्थिति इसके बिल्कुल उलट होती है। अतीत की असफलताओं से भविष्य के लिए ज्ञान और अनुभव बढता है। इस लिए आगे चल कर सफल होने की सम्भावना हमेशा अधिक रहती है। यदि आप 'आज मे रहने का गुर सीख ले, अर्थात न अतीत को भूला के

लिए पश्चात्ताप में पड़े रहें और न सुदूर भविष्य के कल्पित महल बनाएँ, बल्कि आज की वास्तविक परिस्थितियों के अनुसार अपना जीवन सँवारने की चेष्टा करें, और हर नए 'आज के दिन' आगे ही कदम बढ़ाते जाएँ, तो यह असम्भव है कि आप अपनी मनो-कामना के अनुसार सफल और सार्थक जीवन बिताने के समस्त साधन जुटाने मे असमर्थ रहें।

'भविष्य के सुहावने स्वप्न' देखने वालों के लिए कोई निश्चित नियम निर्धारित नही किया जा सकता। दुनिया के प्रायः सभी बड़े लोग अपने जीवन में किसी न किसी समय सुहावने स्वप्न देखते रहे है। फिर भी यदि हम चाहें, तो अपने लिए एक पथ-दर्शक नियम निश्चित कर सकते है, और वह यह कि 'ये स्वप्न बड़े सुखद और आशाप्रद है' परन्तु 'आज' तो मु े स्वप्न देखने का भी अवकाश प्राप्त नही, 'आज' तो मुझे उन योजनाओ को कार्यांवित करना है, जो मैंने इन्ही दिनो में अपनी व्यक्तिगत उन्नति के लिए तैयार की हैं। हाँ, 'कल'—शायद कल मैं सारा दिन इन योज-नाओ के सुफलो के सुहावने स्वप्न देखने मे बिता सकूंगा।"

जीवन की अभिलाषा है, तो 'आज' में रहिए। आज सब दिनो का दिन' है, परीक्षा और सघर्ष का दिन है। जीवन के यथार्थ स्वरूप मे आज को जो महत्व प्राप्त है, वह और किसी दिन को नही। कल आप ने जो महान कार्य सम्पन्न किया था उस से सतुष्ट और प्रसन्न होने का आप को अधिकार है। परन्तु खुशी मनाने मे भी आज के महत्वपूर्ण दिन को नष्ट करना बुद्धि-मानी नही, अथवा कल आप को फिर पश्चात्ताप और निराशा का शिकार बनना पड़ेगा। आज को आने वाले कल के भरोसे पर कभी नही छोड़ा जा सकता। यदि हम आज काम नहीं करेंगे, तो आने वाला कल भी हमारे लिए सुखों की भूमिका नही बन सकेगा। यदि हम आज का दिन मीठे सपने देखने मे

बिता देगे, तो कल भी इन सपनो को सुहावने स्वप्न ही पाएँगे और इस प्रकार हम जीवन भर केवल सपनो का जाल ही बुनते रहेगे, और स्वय उस जाल मे उलझ कर अभाव और दरिद्रता का जीवन बिता देगे।

पिछले दिनो मेरी भेट एक पुराने मित्र से हो गई। प्रारम्भिक शिष्टाचार के बाद मुझे उनसे यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि उनका व्यवसाए उन्नतिशील है, और वह उस समय लाखो मे नही, तो हजारो मे जरूर खेल रहे है। वह अपनी आर्थिक स्थिति से सतुष्ट थे। और सतुष्ट क्यो न हो, जबकि कुछ ही वर्ष पूर्व वह सम्भवतः केवल दो सौ रुपये मासिक वेतन पर किसी फर्म मे नौकर थे। पर आज उनकी अपनी फर्म थी अपना घर था और अपनी मोटर थी। परन्तु वार्तालाप मे मुझे यह अनुभव करके बडा आश्चर्य हुआ कि वह मानसिक और भावनात्मक दृष्टि से अब भी सतुष्ट न थे, बल्कि शायद पहले से भी कुछ ज्यादा अस्थिर और अशात थे। इस अशान्ति का एक मात्र कारण था उनकी राजनीतिक विचार धारा, जिसे वह कुछ वर्ष पूर्व विश्व की एक मात्र सत्य विचारधारा और मानव जाति के समस्त दु:खो का उपचार समझते थे। परन्तु उनके व्यावहारिक जीवन से अब उस विचार-धारा की सत्यता सदिग्ध हो गई थी। इस लिए वह और अधिक दृढता के साथ उसकी सत्यता को सिद्ध करना अपना कर्तव्य समझते थे। उन की व्यग्रता और स्थायी उत्तेजना का यही कारण था।

आखिर जब आप अपने पुराने सिद्धांतो के पक्ष में आध घटे तक धुँआ-धार भाषण कर चुके, तो मैं कहे बिना न रह सका, "परन्तु मित्र, आप अतीत को भुला क्यो नही देते ? आप आज की परिस्थितियो के अनुसार अपने विचारों मे परिवर्तन क्यो नही करते ? आपका राजनीतिक सिद्धात, जो वास्तव में आपका

अपना भी नही था, बल्कि दूसरों से लिया हुआ था, सही था या गलत, अब उस पर दुःखित होने की क्या जरूरत है ? परिस्थितियों ने स्वयं उसके विरुद्ध निर्णय दे दिया है । फिर इस प्रकार के राजनीतिक सिद्धातो को निर्पेक्ष सत्य का स्थान नहीं दिया जा सकता, ऐसी स्थिति मे क्या यह उचित नही कि आप उन मे आवश्यक परिवर्तन और सशोधन कर ले ? आज मे रहे, और परिस्थितियों को अधिकाधिक अपने अनुकूल बनाने का प्रयास जारी रखे ।"

यह तर्क कहाँ तक युक्तिसगत था, कहने की जरूरत नही परन्तु मेरे मित्र ने इसे युक्तिसगत ही समझा और कहने लगे कि "आप ने बात बडे पते की कही है । वास्तव मे हमे अपना ध्यान अतीत की घटनाओ पर दुखी होने के बजाए वर्तमान परिस्थिततियो को सुधारने पर केन्द्रित रखना चाहिए, और जहाँ तक हो सके, 'आज' मे रहना चाहिए ।

मेरे इस विचारशील मित्र की तरह दुनियाँ मे हजारो ही ऐसे व्यक्ति है, जो केवल इस लिए शोकग्रस्त और निराश रहते है कि वे अपने वर्तमान का बड़ा भाग भूतकाल मे व्यतीत करते है । इसका प्रभाव अनिवार्यत उनके नित्य जीवन और क्रियाशक्ति पर पडता है । आइए, एक और सुशिक्षित महाशय का परिचय प्राप्त करे, जिनके सम्बन्ध मे आप को यह भ्रम है कि वह बडे तत्वदर्शी और अनुभवी सज्जन है । आपके विचार मे ऐसे व्यक्ति को जीवन से सतुष्ट होना चाहिए, क्योकि मंदे और बेरोजगारी के इस जमाने मे भी वह लगभग एक हजार रुपया मासिक कमा लेते हैं । स्वस्थ और सबल है, और किसी प्रकार की शारीरिक, मानसिक अथवा आर्थिक कठिनाई से उन्हे दूर का भी सम्बन्ध नही । परन्तु जरा उनके 'उच्च विचार' सुनिए: अजी साहब क्या बताएँ, बस किसी न किसी तरह गुजर हो रही

है। लेकिन यह कोई जिन्दगी नही है। कोई वक्त था जब मेरे पास अपना निजी मकान था। मैं अपनी पसन्द का काम करता था और अपने विचारों का खुल कर प्रचार करता था। मगर आज मैं अपने को जेलखाने मे बन्द महसूस करता हूँ। मै अपने विचारो के अनुसार काम नही कर सकता। कभी-कभी तो मुझे ऐसे काम करने पडते है, जिन पर मेरा विवेक विद्रोही हो उठता है।

ऐसे ही एक और सज्जन मिलेगे, जो दु ख और निराश की मूर्ति दिखाई देगे। उनकी वाणी कुछ इस प्रकार होगी, "मैने अच्छे दिन भी देखे है, परन्तु अब तो जीना दूभर हो गया। अब हमारी योग्यता और कौशल का कोई गुणग्राहक नही रहा। कोई समय था जब लोग हमे झुक-झुक कर सलाम करते थे। परन्तु आज हमें देखकर मुह फेर लेते है। समय के इस उलट-फेर पर रोता हूँ। इसके सिवा और कर भी क्या सकता हूँ।" यदि आप उन्हे अतीत को भूला कर वर्तमान मे रहने का परामार्श दे, तो वह झट कह उठेगे। "अगर सुख-शाँति मेरे भाग्य मे होती, तो मैं इस दुर्दशा को पहुँचता ही क्यो ? मेरी सम्पत्ति विनष्ट क्यो होती ? मेरा सुयोग्य पुत्र अकाल मृत्यु का ग्रास क्यो बनता ?" उसके बाद वह आपकी ओर कुछ इस तरह देखेगे। जैसे कहना चाहते हो, 'न छेडो हमे हम सताए हुए है।'

इस प्रकार के वार्तालाप को आप जितना चाहे विस्तार दे लें, आपको प्राय. दु.ख और निराश की कहानियाँ सुनने को मिलेगी। ये कहानियाँ अधिकतर सत्य पर आधारित होगी। परन्तु वे होगी अतीत की कहानियाँ। वर्तमान से उनका कोई विशेष सम्बन्ध नही होगा। इससे प्रकट है कि 'आज' मे न रहने से मनुष्य अपने को अकारण ही कितना दु:खो और दयनीय बना लेता है।

हमारे समाज में ऐसे व्यक्ति बहुत भारी संख्या में मिलते है, जो केवल आत्मज्ञान और आत्मविश्वास के अभाव से अपने को अकारण ही कठिनाइयों में डाल लेते है और उनका मुकाबला करने मे स्वयं को असमर्थ पाते है वे न केवल आज की कठिनाइयों से परेशान रहते है, । बल्कि उन कठिनाइयों को वे अपने दिल से नही निकाल पाते, जिनका सम्बन्ध अतीत से है । इस प्रकार वे स्वय को 'सदा अभागे' समझकर अपनी दशा सुधारने का प्रयत्न नही करते ।

आपका अतीत बहुत उज्जवल था । आप को हर प्रकार की सुविधाएँ प्राप्त थी । सहसा ही एक विपत्ति ने आपको घेर लिया और आप का सर्वनाश हो गया । इस महान आघत से आप एक दीर्घकाल तक हतप्रभ से रहे । अब आपकी दशा कुछ अच्छी है। परन्तु जहाँ तक जीवन के पुर्ननिर्माण का प्रश्न है, वह आपके सार्मथ्य से बाहर हो चुका है । अब तो आप जीवन से ही ऊब गए है, शक्ति और स्फूर्ति खो बैठे है । अब आप प्रयत्न भी कर तो भी सफलता के दर्शन नही कर सकते । यह दर्शन यथार्थ जीवन का दर्शन नही है । यह मृत्यु और विनाश का पथ है ।

यदि आप महापुरुषो की जीवन कथाओं का अध्ययन करें, तो आप पर सहज ही मे प्रकट होगा कि उसमें से किसी ने भी विपत्तियो के कारण अपनी योग्यता पर विश्वास नही खोया । दुनिया ने उनका विरोध किया, उन्हे नीचा दिखाने के लिए कोई कसर उठा न रखी । परन्तु वे कभी शोकातुर न हुये, कभी भयभीत न हुए । उन्होने कभी हथियार न डाले, और सदैव बड़ी दृढता और साहस के साथ कठिनाइयों और विपत्तियों का मुकाबला करते रहे । फिर आज ही क्यो पराजय स्वीकार करें ? आपको चारो ओर घोर अंधकार दिखाई दे रहा है, तो केवल इसलिए कि आप वर्तमान मे रहते हुए भी अतीत मे भी मग्न

है; आप शक्ति-सामर्थ्य रखते हुए भी अपने को क्षुद्र और निर्बल ही समझते है। समय ने आप से जो व्यवहार किया है, वह निश्चय ही खेदजनक है, परन्तु उससे भी ज्यादा खेदजनक वह व्यवहार है जो आप स्वय अपने साथ कर रहे है। यह अपने साथ शत्रुता के समान है।

पिछले दिनो श्री जी० एल० मेहता ने, जो अमरीका में भारत के राजदूत रह चुके है, बम्बई के रोटरी क्लब में भाषण करते हुए कहा कि "अमरीका के लोग परिस्थितियो को अपने ऊपर विजयी होने का अवसर नही देते, बल्कि स्वयं उन पर विजयी होते है, उन्हें अपने पर पूर्ण विश्वास रहता है। और हर अवस्था मे आशान्वित रहते है, अमरीका की वर्तमान शक्ति और समृद्धि के पीछे वहाँ के लोगो की यही मनोवृत्ति क्रियाशील है।

आज मे रहने का बडा फायदा यह है कि व्यक्ति का साहस बना रहता है। वह घटनाओ और परिस्थितियो पर निर्पेक्ष दृष्टि डाल कर निश्चय कर सकता है कि उन्हे अपने अनुकूल बनाने के लिए कौनसा मार्ग अपनाना चाहिए। और इस प्रकार के सोच विचार से जब वह अपने कल्याणार्थ कोई योजना तैयार करता है, तो फिर उसे कार्यान्वित करने मे दुविधाग्रस्त नही होता।

अवश्य अतीत की गलतियों और त्रुटियो से लाभ उठाना चाहिए। "मैं अमुक व्यवसाए मे असफल क्यो हुआ ? अमुक कार्य को सम्पन्न करने में मुझसे क्या-क्या भूले हुईं—इन प्रश्नों पर विचार अवश्य कीजिए और आगे के लिए उस अनुभव से लाभ उठाइए। वास्तव मे हर असफलता से सफलता की सम्भावना अधिक उज्ज्वल होती, न कि इसके उलटा। उन लोगो की सफलता अधिक निश्चित है जो अतीत की असफलताओ

का कारण समझ लेते है, और भविष्य में उन पर नज़र रखते है। अतीत को भुला देने का तात्पर्य यह नही कि उससे आँखे ही मूंद ली जाएँ, वल्कि उससे सही निष्कर्ष निकालना है। वीते दिनो की कठिनाइयो और असफलताओ से भयभीत हो कर हताश और निष्क्रिय हो जाना जीते जी मर जाने के समान है।

कुछ लोग अतीत से भी नही डरते और वर्तमान को भी उन्नत वनाने की चेष्टा करते है। परन्तु उनके रास्ते मे वडी कठिनाई यह होती है कि वे भविष्य के सुखद सपनो मे अत्याधिक लीन रहते है। वे रात मे सोते समय ही नही, वल्कि दिन के उजाले मे भी स्वप्न ही देखते रहते है। उनके स्वप्न वड़े सुहावने और वड़े सुन्दर होते है। "वह दिन आएगा जव मैं सफलता के उच्च शिखर पर पहुँचूगा"—इस प्रकार के स्वप्न देखना बुरी वात नही है। वास्तव मे मैं तो ऐसे व्यक्ति को बुद्धियुक्त मनुष्य ही नही समझता, जो उन्नति और महत्ता के स्वप्न न देखता हो। ऐसे सपनो के विना उन्नति का प्रश्न ही नही उठ सकता। यदि ऐसे व्यक्ति पर महानता ठूस भी दी जाए, तो भी वह शीघ्र ही उसे गँवा वैठता है। दुनिया के सव वडे विचारक, वैज्ञानिक, लेखक और राजनीतिज्ञ ऐसे सपनो के वल पर ही महानता को प्राप्त हुए है। परन्तु सपनो के विषय मे स्मरण रखने की वात यह है कि आचरण के विना कोरे विचार व्यर्थ है। स्वप्न उन्हीं के चरितार्थ होते हैं, जो साध्यासाध्य का विचार करते हुए ही काल्पनिक महल वनाते है, और उन्हें यथार्थ में परिणत करने के लिए घोर संघर्ष करते हैं।

यह होने वाले व्यक्ति जव भविष्य में उड़ान करते है, तो वर्तमान से अपना सम्वन्ध विच्छेद नहीं कर लेते। यदि वे कल देश के नेता वनना चाहते हैं, तो आज अपना सारा ध्यान

और सारी शक्ति उन गुणों की उपलब्धि की ओर केन्द्रित करते हैं, जो एक आदर्श नेता मे होनी चाहिए। यदि वे महान लेखक और साहित्यकार बनना चाहते है, तो आज अपना अधिकांश समय उत्तम पुस्तकों के अध्ययन और साहित्यिक अनुशीलन में व्यतीत करते हैं।

साराश यह है कि यदि आप भविष्य के सपने देखते हैं, तो बडी अच्छी बात है, परन्तु सपने देखने मे ही उन लोगो का अनुकरण न कीजिए, जो केवल सपनो की दुनिया मे ही रहते हैं, और स्वप्न देखकर ही अपना भविष्य बनाना चाहते है। दुनिया में ऐसे लोगों की सख्या कुछ कम नही है। इन मे एक बड़ा समूह तो उन लोगों का है जो अपना समय शब्द-पहेलियाँ हल करने अथवा लाटरी के टिकट खरीद कर इनाम की प्रतीक्षा करने में व्यतीत करते है। इन क्रीडाओ मे यदि केवल मनोरजन अथवा देशोन्नति के लिए बचत का रुपया लगाने के विचार से भाग लिया जाए तो कुछ लाभ भी है। परन्तु पहेली अथवा लाटरी से धन कमा कर ही भविष्य बनाया जायेगा, ऐसी धारणा रखने वाला व्यक्ति मूर्ख ही नही पथभ्रष्ट भी है। सच बात यह है कि इन प्रणालियो से अनायास धन प्राप्त हो जाने पर भी कोई स्थाई लाभ नही हो सकता, यदि व्यक्ति मे धन का समूचित उपयोग करने की योग्यता न हो। इस लिए घूम फिर कर फिर वही बात आजाती है कि जीवन में सफलता के लिए योग्यता प्रधान है, न कि साधन।

सुहावने स्वप्न देखने वालो का एक और वर्ग समझदार और मेहनती लोगो का है। ये लोग भविष्य की सुन्दर कल्पनाओं में मग्न रहते है, तो उन्हे यथार्थ रूप देने के लिए परिश्रम भी करते हैं। परन्तु उनमें एक बड़ा दोष यह होता है कि वे बहुत ही शीघ्रता से अपने लक्ष्य तक पहुँचना चाहते है। वे अपनी

योग्यता और सामर्थ्य की तुलना मे अधिक शीघ्रगामी वनना चाहते है। परिणाम यह होता है कि वे वार-वार गिरते है। वहुवा तो ऐसी स्थिति आ जाती है कि गिरने के वाद फिर वही पहुँच जाते है, जहाँ से चले थे। यह वार-वार की असफलता अतत: उनके उत्साह और एकाग्रता का अंत कर देती है। फिर उनके जीवन मे एक समय ऐसा भी आजाता है, जव उन्हे अपनी योग्यता और क्रियाशक्ति पर विश्वास ही नही रहता। वे अपनी निरतर असफलताओ से यह निष्कर्ष निकालते है कि अपने भविष्य को उज्ज्वल वनाना उनके वस की वात ही नही है। अव यह तो प्रकट ही है कि जव कोई व्यक्ति अपने पर विश्वास ही खो वैठे, तो फिर उससे वडे कामों की वात तो दूर रही, इतने काम की आशा भी नही की जा सकती, जिससे वह कम से कम सम्मान के साथ जीवन ही व्यतीत कर सके।

कुछ लोग भविष्य की कल्पनाओ मे इतने अधिक विमग्न हो जाते है, और अपने लिए धन ऐश्वर्य और प्रसिद्धि प्राप्त करने के संघर्ष में इतने तन्मय रहते है कि जीवन के उन सामान्य सुखों से भी स्वयं को वचित कर लेते है, जिनका उचित मात्रा में आस्वादन उनके मार्ग मे किसी प्रकार भी वाधक नही हो सकता। यहाँ तक तो खैर ठीक है। शायद उनके निकट सघर्ष ही परमानन्द है। परन्तु आपत्ति की वात यह होती है कि वे सर्वदा वडे कामों मे व्यस्त रहने के कारण नित्य जीवन के छोटे-छोटे कामो की अवहेलना करते है। इसका कुप्रभाव उनके स्वास्थ्य, सांसारिक सुख-शान्ति और सतान की शिक्षा दीक्षा पर पड़ता है। मैं एक ऐसे सुयोग्य युवक को जानता हूँ, जो सफलता-प्राप्ति की उत्कट भावना के वशीभूत होकर अपने नित्य कर्तव्य से भी विमुख हो गया है। वह महानता के उच्च शिखर पर पहुंचने के लिए इतना व्याकुल और उन्मत्त-सा है, और अपनी समस्त

शक्तियों को उस एक उद्देश्य की ओर केन्द्रित करने में इस हद तक अपने को भुला बैठा है कि उसकी यह व्यस्तता और एकाग्रता रचनात्मक न होकर ध्वसात्मक सिद्ध हो रही है। ऐसी स्थिति मे यह कहना उनुचित न होगा कि भविष्य के सुन्दर स्वप्न देखने और उन्हे वास्तव मे परिणत करने की चेष्टा करने वाले लोगो की भलाई भी इसी मे है कि वे 'आज' की उपेक्षा न करे, अर्थात भविष्य की योजनाओ को कार्यान्वित करने की चेष्टाओ के साथ-साथ वर्तमान परिस्थितियो और आवश्यकताओं को भी ध्यान मे रखा करे।

वास्तव में सफल जीवन का रहस्य 'आज' मे रहने में है जो लोग 'आज' मे रहते है, अपनी वर्तमान परिस्थितियो को सुधारने पर ध्यान देते है, अतीत के अनुभवो से लाभ उठाकर अपने वर्तमान और भविष्य को उज्ज्वल बनाने की चेष्टा करते है, और काल्पनिक महल बनाने के साथ-साथ 'आज' धरती पर उन की नीव भी रखते है, वे अवश्य ही सफलता के दर्शन करते हैं। इसलिए आज' म रहने के सिद्धात की कभी उपेक्षा न कीजिए। हमेशा एक-एक कदम आगे बढ़िए, और जब एक चरण पूर्ण हो जाए, तभी दूसरे चरण का प्रारम्भ कीजिए। सराश यह है कि इस प्रकार धीरे-धीरे आगे बढिए कि आपके आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को आघात न पहुँचे, और आप केवल अनुभव ही न करे, बल्कि निश्चित रूप से कह सके कि आप व्यक्तिगत अध्यवसाए से अपना मार्ग प्रशस्त करसकते है। यही विश्वास, यही आत्मबल आपकी सफलता की भूमिका हैं। इनके सहारे आप निश्चय ही अपने लक्ष्य तक पहुचेगे।

प्रोत्साहन

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट अपनी कुछ विशेष परम्पराओं के कारण प्रसिद्ध है, और जनतन्त्री जगत के लिए प्रकाश-स्तम्भ का स्थान रखती है। जनतंत्रीय देशों मे इस ससद को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, और जनतन्त्र की रक्षा और विकास के लिए उसका अनुसरण किया जाता है। इस प्रतिष्ठित सभा की उत्तम परम्पराओ में एक यह भी हे कि इसके परिपक्व और अनुभवी सदस्य नवागतुकों को प्रोत्साहित करते हैं। जब कोई नया सदस्य अपनी पहली वक्तृता समाप्त करता है, तो पुराने सदस्य उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते है, और 'पिट के बाद सर्वोत्तम वक्तृता, आदि वाक्यो से उसका साहस बढाते है। यह सद्व्यवहार इन तरुण सदस्यो के लिए, जो बडी उमंगों के साथ पार्लियामेन्ट मे आते है, सजीवनी का काम करता है। वे अपनी पहली ही सफलता पर प्रसन्नता और सतोष का अनुभव करते हैं, तथा पहले ही दिन से संसद की कार्यवाही में साहस और विश्वास के साथ भाग लेने लगते है। उनमे जो युवकगण वास्तविक योग्यता रखते है, अथवा जो अपना सर्वस्व राजनीतिक जगत मे अपने लिए स्थान बनाने में लगा देते हैं; और दृढ संकल्प से काम लेकर कुछ बनकर दिखाना चाहते हैं वे अततोगत्वा अपने परिश्रम का पुरस्कार पाने मे सफल होते हैं।

यह प्रोत्साहन संसद के नए सदस्यो के लिए कितना लाभ दायक होता है, उसका अनुमान लगाने के लिए ब्रिटेन के प्रसिद्ध प्रधान मन्त्री मि० ग्लैडस्टोन् के अनुभव पढिए, जो आपने अपने भाषण पर ससंत्सदस्यों की प्रतिक्रिया के सम्बन्ध मे लिखे। आप लिखते है कि मैंने अपना पहला भाषण प्राय एक घटे तक किया। मैं नही जानता कि मैने कुछ कहा। परन्तु मै यह देख रहा था कि सभासद मेरे भाषण को बडे ध्यान और रुचि से सुन रहे थे। और जब मैंने भाषण समाप्त किया, तो पुराने सदस्यो ने मुझे बधाई दी और मेरे मित्रगण भी सतुष्ट दीखते थे। कहना अनुपयुक्त न होगा कि ग्लैस्टोन् की यही सफलता उनकी महानता की नीव सिद्धि हुई।

ब्रिटिश ससद के इतिहास मे बहुत कम अवसर ऐसे आए है, जब कुछ सदस्यो ने इस उच्च परम्परा का उल्लघन किया हो। एक बार जब तरुण बेंजमन् डिज्राइली अपना पहला भाषण करने के लिए खडा हुआ, तो कुछ सदस्यो ने व्यक्तिगत शत्रुता और जातीय पक्षाधता के वशीभूत होकर उसके भाषण में विघ्न डाला था। परन्तु स्वय उसके अपने दल के बड़े नेताओं ने इस भूल का प्रतिकार किया, और बठक की समाप्ति पर डिज्राइली को सात्वना दी। बाद मे विरोधी दल के सदस्यों ने भी अपनी अनैतिकता का अनुभव किया और उन्होने डिज्राइली से अपने अशोभनोय आचरण के लिए क्षमा-प्रार्थना की।

ब्रिटेन के अधिकतर सुविख्यात ससदीय वक्ता इस सभा की इन्ही उच्च परम्परओं का परिणाम है। और जब हम मानवी मनोविज्ञान का अध्ययन करते है, तो इस सिद्धांत की पुष्टि होती है कि मनुष्य वस्तुत. प्रशसा और प्रोत्साहन का इच्छुक रहता है, और अपने परिश्रम की स्वीकृति प्राप्त करके प्रसन्न और सतुष्ट होता है। तब वह अपनी योग्यता का और

अधिक परिचय देने पर उद्यत ही नही होता, बल्कि कुछ करके भी दिखाता है। आपका बच्चा औसत योग्यता रखता है। गणित मे वह कुछ कमजोर है। आप उसे स्वयं घर पर पढाते है, परन्तु आपके प्रयत्न बराबर निष्फल हो रहे है। गणित किसी तरह ही बच्चे की समझ मे नही आता। स्वाभाविक है कि आप बच्चे को मदबुद्धि और आयोग्य समझे। परन्तु ६० प्रतिशत हालतों मे बात यह नही होती, बल्कि बच्चे की आयोग्यता का कारण स्वय आपका अपना रवैया होता है। आप निश्चय ही डाँट-डपट से काम लेते है, बराबर उनके कान खीचते रहते है अथवा अपशब्द बोलते है। उनको 'मूर्ख, अयोग्य कहना तो आपका नित्य नियम बन चुका है। स्पष्ट है कि ये सब उपाय असफल हो चुके हैं। अब तनिक रवैये मे परिवर्तन करके उसके सुफल भी देखिए। बच्चे को गणित के नियम नर्मी और प्रेम से समझाइए। उसे कहिए कि जो बात समझ मे न आए, बार-बार पूछे। स्वय आपको भी समझाने का ढंग मालूम होना चाहिए। शिक्षा देना एक कला है। और सुयोग्य अध्यापक ही जानते हैं कि बच्चो को कोई बात किस तरह समझाई जाती है। आपको उस प्राणाली का ज्ञान होना चाहिए। इसके साथ ही जब आपका रुख स्नेहपूर्ण और नम्र होगा तो बच्चा शायद शुरू में तो इस परिवर्तन से कुछ विस्मित हो, परन्तु जब उसे विश्वास हो जाएगा कि आप सचमुच उसके सहायक और हितचिंतक हैं, तो वह आपसे कोई भी बात पूछने मे संकोच नही करेगा, और इसका परिणाम यह होगा कि गणित के वही नियम, जो बार-बार बताने और 'कान खीचने पर' भी उसकी समझ मे नही आते थे, अब न केवल उसके कठस्थ हो जाएंगे, बल्कि वह उन्हे यथास्थान प्रयोग मे लाने के योग्य हो जाएगा। इस प्रकार कुछ ही दिनो मे उसका 'पिछड़ापन' दूर हो जाएगा।

प्रोत्साहन के महत्व से केवल वही लोग इन्कार कर सकते हैं, जो या तो स्वयं मूर्ख और अयोग्य है, अथवा स्वार्थी है। अयोग्य व्यक्तियो को प्राय. फटकार सुनानी पडती है, या कम से कम उन्हे आदर-सम्मान तो कभी नही मिलता । इसलिए वे दूसरो की प्रशसा-प्रोत्साहन करना भी अनवश्यक समझते है । उल्टा निन्दा ही करते है, जिससे उनकी गुणशून्य आत्मा को कुछ तृप्ति मिलती है। दूसरी तरह के लोग वह है, जो सामुहिक जीवन का सम्मान नही करते, जो नितात व्यक्तिवादी और स्वार्थी होते है। यदि वे स्वय सुखी और सम्पन है, उनका व्यवसाय उन्नतिशील है, अथवा नौकरी सकट में नही है, तो उनके लिए 'सब ठीक' है। उन्हे इस बात से कोई मतलब नही होता कि समाज के दूसरे व्यक्ति किस हाल म हैं, और किसे कितनी सहायता की आवश्यकता है। इस वर्ग के लोग प्रायः निर्दयी होते है, और सहानुभूति के स्थान पर उपेक्षा और कठोरता का व्यवहार करते हैं। यदि कोई अभावग्रस्त व्यक्ति इनके पास सहायता के लिए जाए, तो वे उलटा उसके हृदय को व्यग्य और भर्त्सना के तीरो से छलनी करते है । इनमे कुछ तो ऐसे होते है, जिन्हे स्वय अपने समय मे इसी प्रकार का दुर्व्यवहार सहन करना पड़ा था, और सफलता-प्राप्ति के सघर्ष मे दूसरों से बहुत कम नि स्वार्थ सहायता अथवा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। इसलिए प्रतिशोध-भावना एक प्रकार से इन लोगो की प्रकृति बन गई है, और दूसरो को दुखी और पीडित देखकर ये लोग खुश होते है। दूसरे वे लोग हैं, जो प्रकृति से तो सभ्रात और सहृदय है, परन्तु सम्पन परिवार मे जन्म लेने के कारण, अथवा सौभाग्य से स्वय कभी विपत्तिग्रस्त नही हुए। वे जानते ही नही कि जीवन की कठिनाइयाँ क्या होती है , और समय का उलट फेर मनुष्य को किस प्रकार विवश और असहाय बना देता है। वे अनुभव ही

नही करते कि दुनिया में हजारों-लाखों व्यक्ति धिक्कार और तिरस्कार के नही, बल्कि सहायता और सहानुभूति के अधिकारी है।

यह अज्ञानता, विशेषकर उन लोगो की अज्ञानता, जो किसी के घाव पर सहानुभूति का फाहा रख सकते है, किसी के टूटे हुए दिल को प्रोत्साहन के शब्दों से जोड सकते है, वस्तुतः बड़ी खेदजनक है। दुनिया मे हजारो लोग ऐसे है, जिनकी जीवन नैया सफलता-तट तक पहुँचने से पहले आँधी और तूफ़ान में घिर गई है। ये लोग अपना जीवन बनाने चेष्टाओ मे सर्वस्व लुटा बैठे है। अब ये सहानुभूति के पात्र है। जीवन-पथ के इन क्लान्त यात्रियो के लिए साहस बढाने वाले दो शब्द नई शक्ति का स्रोत बन सकते है। यदि इन्हें यह 'वरदान' उचित समय पर मिल जाए, तो ये विनाश से बच सकते है, अन्यथा उनका दुःखद अत निश्चित है। तो क्या उन लोगो का, जो मार्ग की कठिनाइयो से भली भाँति परिचित है, अथवा जो कालचक्र की कठोरताओ से बचे हुए है, यह कर्तव्य नही कि वे अपने दृष्टि-कोण में परिवर्तन करे, और दुर्दशाग्रस्त लोगों को सहायता और प्रोत्साहन को अपना नित्य नियम बनाएँ? अवश्य है, उनका नैतिक, मानुषिक मनुष्योति बल्कि पवित्र कर्तव्य है।

कहते है कि प्रोत्साहन का प्रभाव वनस्पति तक पर पड़ता है वनस्पति पर सगीत का प्रभाव तो सर्वज्ञात है। सगीत चूँकि हर्ष वर्द्धक और आदनन्ददायक होता है, इसलिए सम्भवतः पौधे उससे प्रभावित होते है। जीव-जन्तुओ पर प्रेम-भरे उत्साहवर्द्धक शब्दों का प्रभाव तो स्पष्टत. देखा जा सकता है। आप पालतु पशुओं को प्यार करे; उनका साहस बढाएँ, तो वे प्रसन्न होकर उछ-लने कूदने लगते है। वे आपकी भाषा नही समझते, परन्तु आपके चेहरे के लक्षणो से आपकी आंतरिक भावनाओं को पढ़

लेते हैं। और जब उन्हे विश्वास हो जाता है कि आप वास्तव मे उनसे प्यार करते है, तो वे उत्तरस्वरूप आपके प्रति कृतज्ञता और श्रद्धा का प्रदर्शन करने में सकोच नही करते।

'प्रेम भाषा और शब्दो के आधान नही होता' अथवा दिल को दिल से राह होती है' प्रसिद्ध सूक्तिया है, और सत्य पर आधारित है। प्रेम का निवेदन और अभिव्यक्त के बिना भी विश्वास दिलाया जा सकता है। यही बात घृणा पर भी लागू होती है। आप किसी व्यक्ति के सम्बन्ध मे अपने मन की घृणा के विचारों से भर लीजिए, और चाहे आप अपनी इस मनो दशा से किसी को सूचित न कीजिए, परन्तु जिस व्यक्ति से आप घृणा करते है, वह आपके विचारो से प्रभावित हुए बिना नही रह सकेगा। तनिक विचार कीजिए कि जब मौन रहने की अवस्था मे भी आप अन्य अप्राणियो पर प्रभाव डाल सकते है, तो जब आप प्रकट रूप से अपने अच्छे या बुरे मनोभावो को अभिव्यक्ति करेंगे, तो लक्ष्य व्यक्ति प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकेगा। जब चेतनाहीन वनस्पति और बुद्धिहीन जीव-जन्तु भी प्रोत्साहन का प्रभाव ग्रहण करते है, तो भावनायुक्त मानव उससे प्रभावित हुए बिना कैसे रह सकता है। तो फिर क्या हमारा यह कर्तव्य नही कि यदि हम किसी को फूल नही दे सकते, तो कम से कम उस पर कॉटे तो न फेंके।

निराशा, विकलता, भय और उदासीनता वर्तमान युग के चार अभिशाप है। इसमे सदेह नही कि भौतिक प्रगित ने हमें जितनी भी सुविधाएँ प्रदान की है, उनसे ज्यादा इन कुपरिणामो ने मानवी जीवन को सकटमय बना रखा है। कोई समय था, जब गरीब लोग 'खाल मस्त' रहा करते थे। परन्तु अब न धनिक चैन की बसी बजा सकते है और न निर्धन सतोष का जीवन बिता सकते है। आज पैसे वाले चिता मे घुले जा रहे हैं कि जाने

कल भी इज्जत सलामत रहेगी या नही । और साधनहीनों को रात दिन यही फिक्र खाए जा रही है कि जीवन की आवश्यकताएँ कब पूरी होगी । सारांश यह है कि जिसे देखिए, चिन्तित, दुखी और अशांत है । परन्तु सुख शान्ति और सतोष का कही पता नही। विशेषज्ञों ने इस व्यापक अशान्ति का कारण ढूंढने की कोशिश की, तो वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वर्तमान युग क्रांति और परिवर्तन का युग है । इसलिए इस युग मे मानसिक विशृंखलता स्वाभाविक है । यदि यह परिस्थति किसी एक वर्ग तक सीमित नही । अमीर गरीब सभी परेशान है, इसलिए आज मनुष्य को आध्यात्मिक सहयोग की पहले से भी अधिक आवश्यकता है ।

यदि आप पूंजीपति है, धन सम्पत्ति के स्वामी है, तो अपनी पूजी और धन के वरदानों के उन श्रमिको को भी सम्मिलित कीजिए, जिनके खून-पसीने की कमाई से आपके पास पूजी संग्रह हुआ है । यदि आपके पास रहने के लिए भव्य राज-प्रसाद है, तो इस बात का भी ध्यान रखिए कि आपके कर्मचारियो कार्यकर्ताओ को सदैव इतना काफी पारिश्रमिक दीजिए, जो उपस्थित परिस्थितियो मे जीवन विताने योग्य हो, अन्यथा पूंजी और श्रम का स्वाभाविक सघर्ष अपने चरम बिन्दु पर पहुँच कर स्वय आपकी वैसी ही दशा कर देगा । इसके अलावा आप गरीबों, अपाहिजो और असहाय लोगो की निःस्वार्थ सहायता भी कीजिए । धनवान होना पाप नही है । धन का दुरुपयोग और धन समेटने की लालसा मे गरीब मजदूरों और किसनों के अधिकारों को पद-दलित करना ही पाप है । और यह पाप ऐसा है जिसका दड परलोक मे नही, इसी दुनिया मे मिल जाता है ।

पूजी और श्रम का सघर्ष वास्तव मे स्वार्थपरता और अभाव का सघर्ष है । जहाँ पूँजी इतनी लोभी और श्रम इतना अभाव ग्रस्त नही, जैसे अमरीका और इगलैड, वहाँ यह सघर्ष

भी इतना उत्कट और भयकर नही है। कही तो सघर्ष का स्थान सहयोग ने ले लिया है। याद रखिये, आजका श्रमक विगत शताब्दी का दीन-हीन और निर्बल श्रमिक नही है कि मुटठी भर साधनयुक्त व्यक्तियो को धन समेटते देखकर उसे भगवान की इच्छा मात्र और अपनी दरिद्रता को पिछले जन्म के पापों का दुष्यपरिणाम समझे। आज वह वास्तविकता का ज्ञाता, शिक्षित, सबल और सगठित है। इसलिए आज पूँजीपतियो के एकाधिकार का समय नही रहा। आज यदि पूँजी पतिको जीवित रहना है, तो उसे समय के लेखे को पढना होगा, और बदली हुई परिस्थितियो के अनुसार अपने आचार-विचार मे परिवर्तन करना होगा। जिन समुन्तर देशो के पूँजीपति इस तथ्य को समझ गए है वे श्रम के सगठन और नित्य बढते हुए जीवन स्तर से भयभीत नही होते, बल्कि हैनरी फोर्ड की तरह उसे समाज की सर्वांगीण प्रकृति और समृद्धि की मुख्य प्रणाली मानते है। हैनेरी फोर्ड का कहना था कि श्रमिको को सदैव उच्चतम वेतन देना ही हितकर होता है। लोगो की क्रय-शक्ति जितनी ज्यादा होगी, उतना ही उत्पादन और बढेगा, विक्रयण अधिक होगा, और परिणामत पूँजी का लाभ और राशि बढेगी। हैनरी फोर्ड के इस सिद्धांत का ही परिणाम है कि आज अमरीका मे हर पाँच व्यक्तियों मे से तीन के पास मोटर कारे है। यदि हमारे देश के पूँजोपति भी इस सिद्धात को अपना ले, तो वर्ग-सघर्ष का आज हो अन्त हो सकता है, और शायद फिर सार्वभौम युद्ध की सम्भावना भी सदा के लिए समाप्त हो जाए।

आज की अशाति का यदि निर्पेक्ष भाव से विश्लेषण किया जाए. तो ज्ञात होगा कि इसका मुख्य कारण द्वितीय महायुद्ध है। अणु उदजन बम, भूख बेरोजगारी और सामाजिक कलह सब इसी युद्ध के 'उपहार' है। युद्ध से पहले जो वस्तु एक रुपय मे मिलती थी, अब चार रुपय मे भी दुर्लभ है। इस महगाई और

अभाव से मानवी शरीर के अलावा उसकी आत्मा भी भीषण रूप से प्रभावित हुई है। और इस परिस्थिति पर काबू पाने का एक मात्र उपाय है सात्वना और प्रोत्साहन। आप किसी की आर्थिक सहायता कर सके या न कर सके, पर उसका प्रोत्साहन करने मे कृपणता से काम न ले। और जहाँ तक सम्भव हो सके उसे निराशा अस्थिरता, भय और उदासीनता के चंगुल से मुक्ति लाभ करने मे सहायता दें।

प्रोत्साहन जीवन के हर क्षेत्र में और हर स्थल पर उपयोगी हैं। नन्ने बच्चे प्रोत्साहन से चलना सीखते है और जब पाठशाला में जाने लगते है, तो प्रोत्साहन से परीक्षाओं मे उत्तीर्ण होते हैं। वयस्क होने पर जब किसी कार्यलिय, व्यापारिक संस्था या प्रशासनिक विभाग में काम करते है, तो उस समय भी प्रोत्साहन ही उनका मार्गदर्शक होता है। यदि आप किसी व्यापारिक संस्था के मालिक या व्यवस्थापक हैं, तो आपने जरूर अनुभव किया होगा कि कोई नवयुक जब पहलो बार आपके यहाँ काम शुरूकरता है, तो प्रारम्भ मे वह कुछ हिचकिचाता सा रहता है और अपनी पूर्ण योग्यता का परिचय नही देता। उसे अशंका रहती है कि कही कोई भूल-चूक न हो जाए। और परिणाम-स्वरूप उसे नौकरी से जवाब ही मिल जाए। इसलिए वह अपनी सूझ-बूझ के अनुसार काम करने से कतराता है, और हर कदम पर निर्देशण का अपेक्षी रहता है। परन्तु यदि उसको प्रोत्साहन दिया जाए, तो वह शीघ्र ही संभल जाता है। उसे अपने पर विश्वास हो जाता है, और कुशल कार्यकर्त्ता सिद्ध होता है यदि आपने कभी इसका अनुभव नही किया, तो अब .सका प्रयोग करके देखिए। आपकी यह शिकायत निश्चय ही दूर हो जाएगी कि आपको काम के आदमी नही मिलते। बात यह है कि जब आप मे काम के आदमी तैयार करने का उत्साह ही नही है, तो फिर आप उनके न मिलने की आशा क्यों रखते

हैं ?

सुयोग्य विद्वानो ने हतात्साहन को मानव जाति का सब से बडा शत्रु कहा है। इसमे सदेह नही कि हतोत्साहन मनुष्य की योग्यताओं का नाश करने का सबसे प्रभावी साधन है। यदि आप किसी योग्य और अनुभवशील व्यक्ति के पीछे पड जाएं और सब मिलकर उसे हर वक्त मूर्ख और अयोग्य कहना शुरु कर दे, तो निश्चय ही उसकी सब चतुराई समाप्त हो जाएगी। उसे अपने पर विश्वास नही रहेगा, और वह अनुभव करने लगेगा कि उसका कोई सुझाव सही और युक्ति सगत नही हो सकता। इसलिए या तो वह अपनी समझ से कोई सुझाव प्रस्तुत करने का साहस ही नही करेगा, या अगर कर्तव्य पालन के विचार से कुछ कहेगा भी, तो उसकी बात तुरत रद्द कर देने के योग्य होगी। कारण, भय और उद्विग्नता की अवस्था मे मस्तिष्क मे उत्तम विचार नही आ सकता। जीवन-क्षेत्र मे ये जितने भी दुर्दशाग्रस्त लोग आपको दिखाइ देते है, इनमे से अधिकतर के दुर्भाग्य का दायित्व उनके माता-पिता, अध्यापको अफसरो या दोस्तो पर है, जो प्रोत्साहन की बजाए हतोत्साहन मे अधिक रस लेते थे। इसलिए यदि आप चाहते है कि आप मानवता के मान दड पर खरे सिद्ध हो, तो प्रोत्साहन को अपना जीवन दर्शन बनाइए, ताकि आप अपने कर्तव्य का उत्तम रीति से पालन कर सके। आप अपने बच्चो, दोस्तो और अधीनस्थ कर्मचारियो को अथवा जिन लोगो का कार-बार के सिलसिले मे आपसे मिलना जुलना होता है, उन्हे आशा और साहस का उपहार देने मे अनुदार न बने। उत्साह, दान से आप की कोई हानि नही होती, और दान पाने वाले का जीवन सार्थक हो सकता है।

यदि आप प्रोत्साहन के महत्त्व से परिचित है—प्रेम और सहानुभूति के शब्दो से पीड़ित हृदय को सात्वना दे सकते है ;

यदि आप उन नवयुवको का जीवन बनाने में सहायता करते हैं, जो आपके अधीनस्थ हैं, और अपने बच्चों को भी आत्मविश्वासी बनाना अपना कर्तव्य समझते हैं, तो फिर एक और व्यक्तित्व को भी अपनी स्नेह-दृष्टि का पात्र समझिए। वह व्यक्तित्व स्वयं आपका है। जहा आप दूसरो को प्रोत्साहित करते है, वहाँ कभी-कभी अथवा जब भी आवश्यकता हो, स्वयं अपने को प्रोत्साहित करना भी जरूरी समझिए। आपको यह सुझाव शायद कुछ विचित्र दिखाई पडे, शायद आपके विचार में स्वयं अपना प्रोत्साहन सम्भव ही नही। जो व्यक्ति स्वयं शोकग्रस्त हो; जिसे निराशा और असफलता ने पगु बना दिया हो, वह आप अपनी सहायता क्या कर सकता है? प्रकट मे आप की यह आपत्ति उचित ही है, परन्तु यदि आप यह सकल्प कर ले कि ऐसे अवसरो पर जब आपको चतुर्दिक अधकार ही दिखाई देगा, जब आप किसी उद्देश्य की पूर्ति मे असफल रहेगे अथवा जब आपको पराजय का मुँह देखना पड़ेगा, तो आप उत्साहवर्द्धक विचारों की सहायता लेंगे, और निराश व आत्मतुच्छता को अपने मन पर आधपत्य जमाने का मौका नहीं देंगे, तो इस आचरण से आप अवश्य ही अपने को सहारा दे सकेंगे, और अपने मित्रों सम्बन्धियों की अपेक्षा स्वय अपनी अधिक सहायता कर सकेंगे। कारण यह है कि मित्रगण आप के प्रति सहानुभूति तो प्रकट कर सकते है परन्तु वे कभी यह नही जान सकते कि आपका घाव कितना गहरा है। इसलिए उनके शब्दो को प्राय: औपचारिक ही समझा जाता है। परन्तु स्वय आपकी सहानुभूति सच्ची और निष्ठायुक्त होगी, क्योंकि आप से ज्यादा कौन जान सकता है कि आपके दु ख और अशाति के कारण क्या है। इसके अलावा साहसप्रद विचारो के आगमन से शोकमय विचारों का ह्रास होत है।

कुछ गुणी और सहृदय पुरुष दूसरो से सहानुभूति करने और उनको प्रोत्साहन देने मे तो कभी त्रुटि नही करने, परन्तु स्वय अपने को इस कृपा का पात्र नही समझते। उन पर कोई विपत्ति आ पडे, कोई असफलता उनका दिल तोड दे, तो वे अपने को साहस प्रदान करने का कष्ट नही करते। वे अपने लिए वैसे ही उत्साहवर्द्धक शब्दो का प्रयोग नही करते, जिन से वे दूसरो का ढाढस बाँधते है। वे स्वय अपने को धीरज रखने और सकट मे पुरुषार्थ करने का उपदेश नही करते। कभी नही कहते कि 'इस बार पराज्य हो गई, तो क्या हुआ। मै जान लगा कर लडा तो सही! इस असफलता से लाभ उठाऊँगा और उस समय तक लडता रहूँगा, जब तक विजय प्राप्त नही कर लेता। इससे भी ज्यादा दुर्भाग्य की बात यह है कि ये लोग अपनी सहायता और प्रोत्साहन की बजाए उलटा अपने को हतोत्साहित करते है। ये लोग असफलता पर अपने को कोसते है, कोई दुर्घटना हो जाए, तो आँसू बहाने बैठ जाते है। ये कभी हानि का प्रतिकार करने पर उद्यत नही होते, बल्कि जरा सा विघ्न पड जाने पर अपने को यह परामर्श देते है कि अब सफलता के लिए सघर्ष करना व्यर्थ है। इस प्रकार ये अपने विनाश को निकटतर लाते है।

सदेह नही कि ये सज्जन जो इस प्रकार का आचरण करते है, ऐसा अज्ञानतावश करते है। यदि उन्हे ज्ञात हो जाए कि ऐसे संकटमय अवसरो पर अपना प्रोत्साहन भी उतना ही आवश्यक होता है, जितना कि दूसरो का, तो वे ऐसे आत्महत्यासदृश आचरण के अपराधी कभी न बने। प्रश्न यह है कि ऐसी घातक अज्ञानता को रहने ही क्यो दिया जाए ?

यदि आप मनुष्य मात्र से अन्याय नही करते, तो आपका मानवतावाद वस्तुत प्रशंसनीय है। मनुष्य वही है जो दूसरो के काम मे आए। यदि वह किसी की सहायता न कर सके, तो कम से कम इतनी सावधानी तो जरूर बरते कि उसके कारण किसी

की हानि न हो। परन्तु मैं आपसे थोड़ी सी और उदारता की माँग करता हूँ। जहाँ आप दूसरो से अन्याय नही करते, वहाँ स्वयं अपने पर भी तो अत्याचार न करे। यदि आप अपनी अधिक सहायता नही कर सकते, तो अपने को कम से कम उतनी कृपा का अधिकारी तो समझे ही, जितनी कि आप दूसरो पर करते है। अर्थात अपने को आकरण ही नुकसान तो न पहुँचाएँ। यदि आप अपना प्रोत्सासन नही कर सकते, तो कम से कम अपने को सर्वदा हतोत्सासित भी तो न करते रहे।

'अपना सम्मान स्वय कीजिए' एक प्रसिद्ध उक्ति है। इस प्रकट सत्य का खडन कभी नही किया जा सकता। मनुष्य मात्र को यह परमार्श इमलिए दिया गगा है कि जव वह स्वय अपना सम्मान करेगा, तो अन्य लोग भी उसे सम्मान दृष्टि से देखेंगे। यही सिद्धान प्रोत्सान के विपय में भी सत्य है। अर्थात आप को सर्वदा अपना प्रोत्साहन करते रहना चाहिए, ताकि लोग आप का उदाहरण दे कर कहा करे कि देखो, कितना साहसी पुरुप है। इस चर्चा से स्वयं आपका साहस और उत्कृष्ट होगा और लोग भी आपका अनुमरण कर अपना साहस बनाए रखने की चेष्टा करेंगे।

मेरे एक मित्र हर ववत अपना दुखड़ा रोया करते थे। एक दिन कहने लगे कि "सहानुभूति तो इस युग मे रही नही। अव कोई किसी के दु ख दर्द मे भाग नही लेता। अब तो स्वार्थपरता कटुता और कठोर हृदयता का चलन है। अब तो किसी के मुँह से सांत्वना के दो शब्द भी सुनने को नही मिलते। इसका कटु अनुभव मुझे इन्ही दिनो मे हुआ। यह तो आप जानते ही है कि मैं आजकल आर्थिक कठिनाइयो मे घिरा हुआ हूँ। इसलिए जव घर बैठे-बैठे जी घबरा जाता है, तो काफ़ीहाउस मे जा बैठता हूँ। परन्तु दु.ख वहाँ भी पीछा नही छोड़ता। मित्र-गण व्यग्य-

बाण चलाते हुए आते है। वे मेरा ढाढस नही बधाते, मुझे दृढ़ रहने का परामर्श नही देते, बल्कि मेरी दरिद्रता और विश्वास का उपहास करते है। इससे मेरी पीडा कई गुणा बढ जाती है। जब वह अपनी आत्मबीती सुना चुके, तो मैने उनसे कहा कि वह अपने मित्रो को कोसने की बजाए स्वय अपने को दोषी समझे, क्योकि जब आप स्वय अपने को प्रोत्साहन नही देते, तो किसी को क्या पडी है कि आपको सात्वना देने मे अपना समय नष्ट करे। इसके बाद मैने उन्हे परामर्श दिया कि वह मित्रो मे पीडित 'शरणार्थी बनकर जाया करे, हर वक्त लोगो से यह आशा न रखे कि वे आपका बोझ अपने कधो पर उठाएगे। साधारणत किसी पर प्रकट नही होने देना चाहिए कि आप पोडित और असहाए है। विशेषकर जब आप मित्रमन्डली मे जाएँ, तो अपने दुखडो को घर पर ही छोड जाएँ। यदि आप ऐसा करेंगे, तो आप को मित्रो की निर्दयता की शिकायत नही रहेगी। और यदि आप इतने ही शोकातुर है कि मित्रो के सामने प्रसन्नचित रहना आपके बम की बात नही, तो फिर आप मित्रमडली का वातावरण दूषित करने की बजाए किसी उद्यान मे जा बैठे, जहाँ फूल खिले हो, शीतल वायु मद गति से चल रही हो, और पक्षियों का हल्का कलरव सुनाई दे रहा हो वहाँ किसी एकात स्थान पर बैठकर फूलो की सुगधि का आनन्द लीजिए, स्वय को उस सुन्दर वातावरण मे तल्लीन कर दीजिए, दु ख और निराशा के विचारो को अपने मन से दूर कर दीजिए, और उनके स्थान पर आशा और प्रसन्नता के विचारो का बीजारोपण कीजिए। यह काम कठिन जरूर है, पर एक दम से असम्भव नही, बशर्ते कि आप धैर्य-दृढता की सहायता ले। स्मरण रखिए, आप शोक मय विचारो से उस समय तक मुक्ति-प्राप्त नही कर सकते, जब तक कि आप इच्छाशक्ति से काम न ले और अपने को

प्रोत्साहन न दे।

अपने को प्रोत्साहन देने का केवल यही लाभ नहीं होता कि मनुष्य दुःख और शोक से मुक्ति प्राप्त कर लेता है, बल्कि इससे आत्मविश्वास की भावना को भी बल मिलता है। मनुष्य को विश्वास हो जाता है कि वह कठिनाइयो पर काबू पाने की शक्ति रखता है, उसमे परिस्थितियों को अनुकुल बनाने मे और सघर्ष करने का सामर्थ्य है, यह मनोवृत्ति व्यक्तिगत उन्नति के लिए परमावश्यक है इसलिए जब कभी आप पर विपत्तियो का पहाड़ टूट पडे, और आपके कदम डगमगाने लगे, तो उसी क्षण अपनी महत्ता का स्मरण कीजिए। इस अनुभव को पुनर्जीवित कीजिए कि आप इस धरती के विजेता मनुष्य है, आपको कोई परास्त नही कर सकता। इस विचार से आप का साहस पुनर्स्थापित हो जायेगा आपका अपने पर फिर से विश्वास हो जाएगा। जब आप कठिनाइयों के आगे नत होने की बजाए वीरतापूर्वक उनसे दो-दो हाथ करने के लिए आगे बढ़ेगे। और आप यह देख कर स्वय चकित रह जाएँगे कि आपके इस संकल्प मात्र कठिनाइयो का किस तरक प्रभाव होता है। कठिनाइयाँ उसी समय तक भयानक होती है, जब तक आप उनसे डरते रहें। ज्यो ही आप उन्हे तुच्छ समझ कर पाँव तले रोदने के लिए आगे बढ़ेंगे, आपका पलड़ा भारी हो जाएगा और कठिनाइयाँ एकाएक स्वयं मेव समाप्त होनी जाएँगी।

अपने को प्रोत्साहन कैसे दिया जा सकता है, और चारों ओर निराशा को घटाएँ छाई हों, तो आशा की किरण कैसे देखी जा सकती है? इसके लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं। परन्तु उनसे लाभ तभी उठाया जा सकता है जब आप 'कर्म-मार्ग' पर अग्रसर हो। केवल सुन्दर विचारो और उत्तम सुझावों से कोई उद्देश्य कभी सिद्ध नही हुआ, न भविष्य मे होने की

सम्भावना है। इस लिए जो भी सुझाव रखे जाएँ, उन्हें कार्यान्वित करने का दृढ सकल्प कर लीजिए। फिर यह सम्भव नही कि आप इस अभियान मे सफल न हो।

यदि आप दुनिया मे पुरुषोचित जीवन व्यतीत करना चाहते है, यदि आपकी इच्छा है कि विकटतम परिस्थितियो मे भी आपके कदम न डगमगाएँ, तो फिर आप अपने को कभी भी तुच्छ, नगण्य, निर्बल और असहाय न समझिए। आप अपने मन व मस्तिष्क को इस विश्वास से पुष्ट बनाइए कि आप हर मुश्किल, हर विपत्ति और हर सकट का मुकाबला कर सकते है। केवल मुकाबला ही नही कर सकते, बल्कि उन्हे अपने सामने से हटा भी सकते है। याद रखिए, मनुष्य साधारणतः अपनी शक्ति और योग्यता के एक अल्प अश से हो काम लेता है। इस बात को बार-बार दुहराइए, ताकि आपको विश्वास हो जाए कि अभी आपके पास अतिरिक्त शक्ति का भडार मौजूद है। जब आप किसी महत्वपूर्ण समस्या को हल करने मे लगे हो, अथवा कोई कठिन काम सम्पन्न करना चाहते हो, तो तत्काल यह सकल्प कीजिए कि आप इस समस्या को हल करने अथवा कार्य को सम्पन्न करने के लिए इसके अतिरिक्त शक्ति-भडार से काम लेंगे, जो अभी तक व्यवहार मे नही आया। इसके बाद आप अपनी सफलता का विश्वास रखिए।

महापुरुषों की जीवनियो का अध्ययन भी आत्मविश्वास को सुदृढ बनाने और अपने को प्रोत्साहन देने के लिए उपयोगी होता है। जब हम साहसी और पराक्रमी पुरुषो के जीवन-वृत्त का अध्ययन करते है तो हमे ज्ञात होता है कि दुनिया मे कोई कठिनाई ऐसी नही, जिसका हल न निकाला गया हो। हम यह भी अनुभव करते है कि हमे दुख और पीडा सहन करनी पड़ती है, तो यह कोई नयी बात नही है। मनुष्यमात्र सृष्टि के पहले दिन

से ही विपत्तियो का मुकावला करता आ रहा है, और उसने कभी पराजय स्वीकार नही की।

अपने को प्रोत्साहन देने के लिए उत्साह वर्द्धक वाक्यों की पुनरावृत्ति भी उपयोगी होती है। "जाको राखे साइयाँ" साहस है, तो आस है, "सफलता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है" आदि वाक्यों को आत्मसात कर लीजिए। उन्हें अपने मानस पटल पर इस तरह अकित कर लीजिए कि निराशापूर्ण विचारो की वाढ भी उन्हे मिटा न सके। उन्हे केवल कठस्थ हो न कीजिए वल्कि उनके अभिप्रायः को अपने अत.करण का अग वना लीजिए, उनकी सत्यता पर पूर्ण विश्वास कीजिए। एक नोट वुक रखिए, जिममें प्रसिद्ध लेखको और कवियो की उत्साहवर्द्धक सूक्तियाँ और सुभाषित लिखते जाएँ। इन्हे प्राय. पढ़ा कीजिए, यहाँ तक कि वे आपके अचेतन मन मे घर कर जाएँ। जव कभी आप अनुभव करे कि पतन के विचार आप पर आक्रमण करने लगे हैं, तो इन सूक्तियो को आवृत्ति कीजिए। इन्हें वार-वार दुहराने से आप की नसो मे नवजीवन की स्फूर्ति का सचार होगा।

भय और आतंक

"मैं बालपन मे बडा डरपोक था। मैं उस पर लज्जा भी अनुभव करता था। मैं कई वर्ष तक कोई काम न कर सका, क्योकि मैं समझता था कि दूसरे लोग हर काम को मुझसे बेहतर जानते हैं। दरअसल मुझ मे आत्म विश्वास का अभाव था। और यही मेरा दुर्भाग्य था। मै स्वय को ससार का सब से बडा मूर्ख और अज्ञानी व्यक्ति समझता था।" ये विचार जार्ज बर्नाड्शा के है, उस विश्वविख्यात कवि और नाटककारशा के, जिसने अपना अमर कृतियो मे अपने विचारो की अभिव्यक्ति अपूर्व निर्भयता के साथ की है। उसने जिन विचारो का प्रचार किया, उनका एक बडा अंश उसके देशवासियो की रुचि के अनुसार भी नही था। फिर भी वह बोसवी शती का सर्वोत्तम अग्रेजी साहित्य-कार के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। अपने को मूर्खतम व्यक्ति सम-झने वाला बर्नाडशा जीवन के अंतिम दिनो वर्तमान युग के महापुरुषों मे गिना गया।

बर्नाड्शा की तरह एक और निर्भीक विचारक और स्पष्ट भाषी दार्शनिक बर्टरन्ड रसल भी स्वीकार करता है कि जब उसकी अवस्था तेरह-चौदह वर्ष की थी, तो वह बहुत ही लज्जालु और डरपोक था। वह लिखता है कि एक बार ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ग्लेडस्टोन् हमारे यहाँ पधारे। उस समय घर मे मेरे सिवा

और कोई नहीं था। मैं इतना आतंकित और विह्वल हो चुका था कि उनके सामने जाने की कल्पना से ही मेरे प्राण उड़े जा रहे थे। आखिर जब मुझे विवश होकर उनके सम्मुख उपस्थित होना पड़ा, तो मैं उनके एक भी प्रश्न का उत्तर न दे सका।" यही रसल् बाद मे अपनी स्वतन्त्र विचार पद्धति और नैतिक साहस के लिए प्रसिद्ध हुआ। और आज भी जब इसकी अवस्था ६० वर्ष के लगभग है, वह किसी न किसी नए आन्दोलन का नेतृत्व सँभालता रहता है। जाने कितनी बार उसे अपने विचारो के दडस्वरूप कारावास को यातना सहन करनी पड़ी है। परन्तु उसने कभी इतनी परवाह नही की। एक बार जेल से रिहा होने पर उसने लिखा कि 'जेल मे मुझे जो शान्ति मिली, वह और कही उपलब्ध नही हो सकती।'

अधिनायको मे मसोलिनी ने अपनी आत्मकथा मे साफ-साफ लिखा है कि भाषण करने से पहले उसे अपनी स्वाभाविक भीरुता पर विजय प्राप्त करनी पडती थी। इसी प्रकार सरोजनी नायडो ने भी स्वीकार किया है कि "मैं बचपन मे अपनी बाह्य कुरूपता के कारण हीन-भावना से ग्रस्त थी। अधिक स्पष्ट शब्दो मे यो कहा जा सकता है कि मैं भीरु थी।" सरोजनी नायडो भारत की सर्वश्रेष्ठ महिला वक्ता और कवियत्रियो के रूप मे प्रसिद्ध हुई। इनसे बढकर स्वय राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने अपने अनुभवों मे लिखा है कि जब वह पहली बार न्यायालय मे वकालत करने के लिए खडे हुए, तो उन के मुँह से एक भी शब्द न निकला इस पर उन्होने अपने मवक्किल से लिए हुए फ़ीस के रुपये तत्काल लौटा दिए परन्तु देखने की बात यह है कि गाँधीजी जैसे परम वीर पुरुष भी प्रारम्भ मे कितने भीरु थे।

राजनीति के अलावा दूसरे क्षेत्रों मे भी ऐसे व्यक्तियो का

अभाव नही है, जो किशोरावस्था मे लज्जालु, संकोची और हीन भावना-ग्रस्त रहे है, परन्तु बाद में उन्होने सदैव अदम्य साहस का प्रदर्शन किया। ऐसा लगता है कि शुरु मे भीरुता का परिचय देने वाले ही आगे चल कर विशेष साहसी सिद्ध होते है। सम्भवतः इसका कारण यह है कि अत्यधिक अनुभवशील होने के कारण वे शीघ्र ही समझ लेते है कि उन्हे जिस चीज से डर लगता है, उसका वास्तव मे कोई अस्तित्व नही है। और एक बार जब उन्हे विश्वास हो जाता है कि डरने का कोई कारण नही है, तो वे बडी आसानी के साथ अपनी प्रतिक्रियाओ पर काबु पा लेते है।

इतनी बात स्वयसिद्ध है कि भय आतक, भीरुता और हीन भावना किसी असाध्य रोग का नाम नही है। इस बीमारी से बडे-बडे महारथी भी बचपन और युवावस्था मे ग्रस्त रहे है। परन्तु ज्यो-ज्यो उनकी उम्र, ज्ञान और अनुभव की वृद्धि हुई, उन्होने इस निर्मूल भावनाओ से मुक्ति प्राप्त कर ली न केवल यही, बल्कि उन्होने ऐसे-ऐसे महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न किए कि दुनिया उनकी वीरता और साहसिकता पर चकित रह गई।

अब प्रश्न यह है कि यदि भय और घबराहट पर काबू पाया जा सकता है, तो इन्सानो की बहुत बडी सख्या उनसे मुक्ति लाभ करने मे कठिनाई क्यो अनुभव करती है ? मनोविज्ञान के विशेषज्ञो का कहना है कि भय और आतक के विषय मे वास्तविक कठिनाई यह है कि लोग इन्हें 'स्वाभाविक' समझते है, अर्थात जिस प्रकार बचपन मे अविकसित बुद्धि के कारण वे किसी बात से डरते थे, उसी प्रकार वयस्क होने पर भी डरते रहते है। ऐसे लोग शारीरिक दृष्टि से वयस्क हो जाने पर भी मानसिक और भावनात्म दृष्टि से बालक ही बने रहते हैं। वे जब जीवन क्षेत्र मे प्रवेश करते है, तो बचपन की आदत उनका

पीछा नही छोडती। उन्हे एक-एक पग पर अज्ञात भय के कारण कठिनाई अनुभव होती है। यदि वे तीक्ष्ण बुद्धि वाले हों,तो उन्हें शीघ्र ही इन कठिनाइयो की अस्तित्व-हीनता का ज्ञान हो जाता है, और वे उन की ओर से निश्चिंत हो जाते हैं। अन्यथा वे जीवन-सग्राम मे वीरतापूर्वक भाग नही ले सकते, और परिणा-मत उन पुरस्कारो से वचित रहते हैं, जो उनसे भी कम योग्यता रखने वाले लोग केवल अपने साहस और आत्मबल के सहारे प्राप्त कर लेते है।

आधुनिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञ आत्मज्ञान, अर्थात अपने अतीत के अध्ययन और निरीक्षण पर इस लिए जोर देते है ताकि मनुष्य को यह अनुभव हो सके कि उसकी असफलता का दायित्व उसकी परिस्थितियो और कठिनाइयो से ज्यादा स्वयं उसके विचारो और मिथ्या धारणाओ पर है। और यह कि वह स्वय अपना सुधार करके अपनी परिस्थितियों का भी सुधार कर सकता है।

यदि आप भय और आतक अथवा पराजय-वादी मनोवृत्ति का शिकार है, और किसी महत्वपूर्ण कार्य मे केवल इस डर से भाग नही लेते कि कही आपको असफलता का मुँह न देखना पडे, तो आप अवश्य ही दु खी और शोकग्रस्त रहते है। आप इस मनोदशा के कारणों का पता लगासकते है। उसके लिए आपको अपने अतीत का सिंहावलोकन करना चाहिए। आप अपने बच-पन की अवस्थाओ और घटनाओ को स्मरण कीजिए। यदि आपने निर्पेक्ष होकर अपने अतीत की पड़ताल की, तो आप पर प्रकट होगा कि आप आज भरी सभा मे बोलने का साहस इस-लिए नही करते, कि जब आप प्राथमिक शिक्षालय मे पढते थे, और कभी अपने सहपाठियो के सामने बोलना चाहते थे, तो अध्यापक आप को टोक दिया करते थे, और सहपाठी आप पर

हँसा करते थे। या यदि आप हीनभावना से ग्रस्त हैं, तो केवल इसलिए कि माता आप से दूसरे बच्चो की अपेक्षा कम प्यार करती थी, और आपके बडे भाई-बहन बात-बात पर आपको पीटा करते थे। यदि आप सकटो का सामना करने से डरते है, तो उसका एक कारण यह हो सकता है कि आप अपने माता-पिता के लाडले रहे होगे, और आपने बचपन मे सकट और विपत्ति का नाम तक न सुना होगा। यदि आप जीवन-क्षेत्र मे अपना मार्ग स्वय बनाने की कला से अनभिज्ञ हैं, तो उसका कारण यह है कि बचपन मे माता-पिता ने आपकी हर कामना पूरी की और आपने जो कुछ भी चाहा, वह आपको बिना प्रयास के मिल गया। साराश यह कि जब आप अपने अतीत का ध्यानपूर्वक विश्लेषण करेगे, तो अपने वर्तमान दोषों का सम्बध बाल्यावस्था की किसी आदत या घटना से जुडा हुआ पाएँगे।

इस आत्म-निरीक्षण से आप पर यह तथ्य स्पष्ट हो जाएगा कि यदि आप आज कठिनाइयो से डरते है, तो उसका कारण यह नही कि उन पर विजय प्राप्त करना वास्तव मे बडे जोखिम का काम है, अथवा आप इनपर काबू पाने की योग्यता नही रखते, बल्कि असल कारण एक अस्पष्ट सा भय है, एक मिथ्या धारणा जिसने बचपन मे उस समय की परिस्थितियो के अनुसार जन्म लिया था, परन्तु जो अब बिल्कुल निराधार और निरर्थक होकर रह गई है। इस तथ्य को समझ लेने के बाद आप अपना सुधार बडी सहजता से कर सकते हैं। अब आप बच्चे नही रहे, जो किसी के सहारे के अपेक्षी हो, बल्कि अब आप स्वय दूसरो के लिए सहारा है। इस प्रकार आप अपनी वास्तविकता से अवगत होकर अपने पर विश्वास करने के योग्य बन सकेगे और अपने जीवन का निर्माण कर सकेगे।

बाल-सुलभ भावनाओ के अतिरिक्त समाज के डर से भी

मनुष्य बहुधा अपने को पहचानने मे असमर्थ रहता है। "यह बात अच्छी नही, क्योकि लोग इसे अच्छी दृष्टि से नही देखते या अमुक काम किया गया, तो लोग क्या कहेगे", आदि इस प्रकार के विचार भी मनुष्य को बहुधा अपनी पसन्द का काम करने से रोक देते हैं। दूसरो की भावनाओ और समाजिक मर्यादाओं का आदर करना अच्छी बात है। परन्तु इस विषय में मध्यम मार्ग को अपनाना ही उचित होता है। समाज में रहते हुए समाज के केवल उन्ही नियमो का पालन करना चाहिए, जो देशोन्नति के लिए हितकर हों, और आत्मज्ञान और आत्मोत्थान के मार्ग में बाधक न हो। समाज मे बहुत सी रूढियाँ और कुप्रथाएँ भी चलती है, और व्यक्ति पर कुछ ऐसे प्रतिबंध भी रहते है, जिनका पालन किसी दृष्टि से भी श्रेयस्कर नही हो सकता। ऐसे नियमों अथवा प्रतिबंधो को शिरोधार्य नही करना चाहिए, समाज की कुछ परम्पराएँ पतनोन्मुख होती है। ऐसी परम्पराओ का अनुसरण कैसे प्रशसनीय हो सकता है ? यदि समाज उन्नतिशील भी हो, तो भी बिना सोच-विचार के भेडचाल चलने मे कोई बड़ाई नही है। लकीर के फकीर बनकर आप अपने भीतर के महान पुरुष को कभी जागृत नही कर सकेगे। यही बात परम्पराओं के विषय मे भी सही है। एक बच्चे को बचपन हो से परम्पराओं के सम्मान और अनुसरण का पाठ पढाया जाए, तो वह सियाना होकर बुराई को देखते हुए भी कुछ बोल नहीं सकता। उसके विरुद्ध प्रतिवाद नही कर सकता। ऐसी अवस्था मे वह कोई मौलिक बात कैसे पैदा कर सकता है ?

कुछ लोग अपने जीवन की दशा नही बदल सकते, कोई नया विचार प्रस्तुत नही कर सकते, अथवा किसी अच्छे सिद्धांत को स्वीकार करने मे संकोच करते है, क्योंकि वे पुराने विचारों और अन्धविश्वासों का परित्याग करना नही चाहते, उन्हें उन विचारों

और सिद्धांतो के मिथ्या होने का विश्वास हो भी जाए तो भी वे उनसे चिमटे रहते है, ताकि कोई यह न कहे कि यह लोग भ्रष्ट हो गए है, और समाज मे बैठने योग्य नही रहे है।

अब इस आइने मे अपना चेहरा और उसकी विशेषताओं को देखिए। यदि आपको एक ऐसे मनुष्य का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, जो आत्मविश्वासी, वीर और साहसी है, जो अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है, जिसके चेहरे पर भय आतक का चिन्ह तक नही, जो 'असम्भव' शब्द से अनभिज्ञ है, जो पराजय स्वीकार नही करता, हथियार नही डालता, जो आखिर दम लडता है, जो स्वय को एक महान शक्ति का साझीदार समझता है,और अपना पूरा हक लिए बिना समझौता नही करता, तो फिर आपको अपने पर गर्व करने का पूर्ण अधिकार है। और मुझे विश्वास है कि आप अपने लक्ष्य तक पहुँच कर ही रहेगे, और मनुष्य होने के नाते आप पर जो दायित्व है, उसे पूरा करके ही रहेगे।

परन्तु यदि यह चित्र किसी ऐसे इन्सान का है, जो देखने मे तो जवान है, परन्तु उसके चेहरे पर धैर्य-दृढता के लक्षण नही, उसकी रगो मे जीवन का गर्म लहू तरगित नही, जो भावनाओ और विचारो की दृष्टि से अभी अबोध बालक ही है, जो एकात प्रिय है , किसी सभा-समाज मे जाता है, तो सबसे अलग-अलग अतिम पक्ति मे बैठता है, जो दूसरो के सहारे जीना चाहता है, और सहारा न मिले, तो हताश हो जाता है—यदि यह चित्र आपका है, तो आइना तोड़ने की कोशिश न कीजिए, और मनोवैज्ञानिको को बुरा भला न कहिए। यदि आइने मे आप को किसी हारे हुए दुर्दशा-ग्रस्त मानव की आकृति दिखाई देती है, तो यह आइने का कसूर नही, आइने का तो काम ही यह है कि वह आपको आपकी वास्तविक आकृति दर्शादे। इसलिए आइने को शत्रु समझने की बजाए अपना मित्र समझिए, ऐसा मित्र, जो

आपको धोखा नही देता ; आप झूठ नही बोलता। इसके सिवा आपको और कौन बतलाएगा कि आप अपनी हीन भावनाओं और भ्रांत अचारण से एक अच्छे भले इन्सान को विनाश मार्ग पर लिए जा रहे है।

मनोविज्ञान के ज्ञाताओं ने यदि आपको अपने अतीत का दर्पण देखने का परमार्श दिया है, तो इसलिए नही कि आप लज्जित और दुखित हो, बल्कि केवल इसलिए कि आप अपने सम्बन्ध मे यथार्थ से परिचित हो जाएँ। जीवन का रहस्य जानने वाले ये विशेषज्ञ आप को दुःख देकर खुश नही होते, बल्कि वे आपके सहायक और पथदर्शक बनना चाहते हैं। वे आपको बताते हैं कि जीवन-तरणि को मझधार से निकाल कर सफलता तट तक कैसे ले जाया सकता है। इसलिए उन से झगडने की बजाए उनका सहयोग लीजिए। और उनकी सहायता से इन खडहरो पर, जो आपको अपने अतीत के दर्पण में दिखाई देते है, भव्यशाली नए भवन का निर्माण कीजिए।

इस लेख के प्रारम्भ में मैंने कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियो के उदाहरण देकर यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि भय और आतङ्क तथा हीन-भावना का प्रतिकार किया जा सकता। यदि आप चौबीसो घटे भयभीत रहते है, और जरा से कष्ट पर हतप्रभ हो जाते हैं, तो अनुसधान कीजिए कि आप पर इस मनस्थिति का आक्रमण कब और कैसे हुआ। और जब आप अपने अतीत पर दृष्टि पात करेंगे, तो आप पर प्रकट होगा कि इसका उत्तरदायी आपका बचपन है। यह निश्चय कर लेने के बाद अपने से कहिए, "पर यह तो उन दिनो की बात है, जब मैं निर्बल और अबोध बालक था। अब तो मैं वयस्क हूँ, सबल और सबुद्धि हूँ। अब मैं अच्छे-बुरे का विचार कर सकता हूँ। फिर मैं क्यो अपने को हीनतर और तुच्छ समझुं। इस मौखिक प्रयास के बाद आप

क्रियात्मक प्रयास भी कीजिए। मित्रमन्डली में मन की बातखुल कर कहिए। जब किसी सभा मे बैठिए, तो वार्तालाप और विचार-विनिमय मे भाग लीजिए। अपना मत नि सकोच व्यक्त कीजिए, आलोचना से भयभीत न होइए। मित्रो और विपक्षियो से अकारण ही आतकित रहने की आदत पर सयत्न काबू पाइए। यदि आपके नगर मे कोई विचार गोष्ठि है, तो उस के सदस्य बन जाइए और वाद-विवाद मे खुल कर हिस्सा लीजिए शुरू-शुरू मे आपको अवश्य कुछ भय अनुभव होगा, परन्तु एक —दो बार की चेष्टा के बाद ही आप यह देख कर स्वय आश्चर्य करने लगेंगे कि दूसरों को अपनी बात सुनाना कितना सहज और स्फूर्तिदायक होता है।

प्रसिद्ध सेनापति डग्लस् मैकार्थर ने लिखा है कि वीरता का तात्पर्य यदि यह है कि भय और डर का अनुभव तक न हो, तो फिर मैंने आज तक कोई वीर पुरुष नही देखा। ससार मे शायद ही कोई इन्सान हो, जो भय से पूर्णतया मुक्त हो चुका हो। हाँ, वह मनुष्य अवश्य शूरवीर है, जो भय के बावजूद अपना अभियान जारी रखने का सामर्थ्य रखता हो, "इस तथ्य को हृदयंगम कर लीजिए, और सकट का मुकाबला करते समय अपने सामने रखिए। आप में और 'बडे लोगो, मे इसके सिवा और कोई अतंर नही कि उन्होने युवावस्था मे प्रवेश करने के बाद बालपन की आदतो का परित्याग कर दिया, जब कि आप अभी तक उनके प्रभाव से मुक्त नही हो सके। आप अभी तक बच्चो की तरह डरते, बच्चो की तरह साचते और बच्चो की तरह घबरा उठने हैं। आदमी उम्र की दृष्टि से जवान हो सकता है, परन्तु जरूरी नही कि वह भावनाओ और विचारो की दृष्टि से भी परिपक्व हो चुका हो। इसलिए आप सबसे पहले अपने इस दोष को दूर कीजिए, और पूर्णदर्शी बनिए। जीवन को व्यर्थ न

समझिए, अपने को क्षुद्र और निर्बल न जानिए। अपने जीवन उद्देश्य से अवगत होइए, और उसकी पूर्ति के साधन जुटाइए।

मनोविज्ञान के विशेषज्ञों का सर्वसम्मत निर्णय है, कि मानवी जीवन का उच्चतम लक्ष्य "मनुष्यता की पूर्ति है" और इस लक्ष्य की प्राप्ति तभी हो सकती है जब मनुष्य दृष्टिसम्पन्न हो। ऐसे मनुष्य की परिभाषा यों की गई है कि वह अपने मस्तिष्क से काम लेता है, अपने को क्षुद्र और निर्बल नही समझता और जीवन से जाने अनजाने निराश नही होता। इसलिए यदि आप सफलता के अभिलाषी है,तो दृष्टिसम्पन्न बनिए। किसी भी उद्देश्य की पूर्ति और किसी भी प्रयास मे सफलता निर्भर करती है आत्मविश्वास पर। परन्तु जिस मस्तिष्क पर भय का साम्राज्य होगा, वहाँ आत्मविश्वास के लिए स्थान कहाँ? इसलिए यदि आप वर्तमान दुर्दशा, दरिद्रता और दुश्चिंता से मुक्ति प्राप्त करने के इच्छुक है, तो सबसे पहले भय और आतंक पर विजय प्राप्त कीजिए। और इसका एक मात्र उपाय यह है कि जीवन सग्राम मे क्रियात्मक भाग लीजिए। अपने को सबल समझिए, अपनी स्थिति और योग्यता का मूल्यांकन कीजिए। अपनी त्रुटियों और दोषो का सुधार कीजिए और एक-एक पग आगे बढने की पद्धति अपनाइए। कठिनाइयो से कभी न डरिए, क्योंकि डर कर आप उन से बच नही सकते। संकटो का सामना कीजिए, अपनी योग्यता और क्षमता के अनुसार अपना लक्ष्य निर्धारित कीजिए और उस तक पहुँचने के प्रयत्नो मे लग जाइए। यदि आपका लक्ष्य ठीक है, तो आपके सफल न होने का कोई कारण ही नही हो सकता।

स्वभाव में परिवर्तन

आत्मविश्वास की पुनर्स्थापना के लिए स्वभाव मे परिवर्तन का बडा महत्व है। कुछ लोग अपनी वास्तविकता से परिचित होते है। उन्हे पता होता है कि वे अपने पर विश्वास करके बड़ी से बडी सफलता प्राप्त कर सकते है। परन्तु स्वभाव और प्रवृतियाँ उनकी उन्नति मे बाधक हो जाती है। अपनी कुछ आदतों के कारण वे उन्नति की कोई योजना ही तैयार नही कर पाते। और यदि इस कठिनाई को पार कर भी जाएँ, तो याजनाओं को कार्यान्वित नही कर सकते।

मै एक लेखक को जानता हूँ, जिसने आज से बीस वर्ष पूर्व निबन्ध लेखन आरम्भ किया था। उसके लेख देश की उच्च कोटि की पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते थे, और उन्हे बड़े आदर की दृष्टि से देखा जाता था। उन दिनो मे, जब कि अभी हमारे देश मे पत्र-पत्रिकाओ की ओर से पारिश्रमिक देने का रिवाज नही पड़ा था, उस से कितने ही सम्पादिक उचित पारिश्रमिक के प्रस्ताव के साथ लेख भेजने का अनुरोध किया करते थे। इस को अपनी योग्यता पर गर्व भी था, और अपनी लेखनी पर अटल विश्वास था। उसके आत्मविश्वास का कुछ अनुमान इस घटना से लगाइए कि एक बार उसने एक पत्रिका की लेख प्रतियोगिता मे भाग लेते हुए अपने मित्रो को पहले ही से कह दिया था कि स प्रतियोगिता मे प्रथम पुरस्कार उसका होगा और वास्तव

में ऐसा ही हुआ । जब पुरस्कार पाने वालों के नाम प्रकाशित हुए, तो सबसे ऊपर उसी का नाम था ।

जिस लेखक का प्रारम्भ इतना आशावर्द्धक हो, उसका अंत कितना भव्य होना चाहिए, यह आप स्वयं सोच सकते है। परन्तु आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस लेखक को आज भी बहुत कम लोग जानते हैं, वह बीस वर्ष तक लेख लिखते रहने के बावजूद प्रसिद्ध लेखक नही बन सका। आज उसके घनिष्ठ मित्रों के सिवा और कोई भी नही जानता कि उसे बीस वर्ष पहले भी अपने लेखों का परिश्रमिक मिलता था ।

इस लेखक की इस निराशाजनक स्थिति का कारण क्या है ? एक शब्द मे कहना हो, तो यह उसका आलस्य है । वह स्वभाव से ही आलसी और आरामतलब है । जब उसका एक लेख किसी पत्रिका मे प्रकाशित हो जाता था, तो फिर महीनों तक वह नया लेख लिखने का ख्याल भी नही करता था। इस बीच किसी सम्पादक का पत्र मिलने पर वह जी कडा करके कुछ बैठ भी जाता, तो नया लेख तीन-चार महीने से पहले पूरा होने में नही आता था। कभी-कभी तो वह साल-साल भर तक एक पंक्ति भी नहीं लिखता था। सभी अच्छे लेखक कुछ लिखने के लिए नई सूझ की प्रतीक्षा करते है। परन्तु ऐसा बहुत कम होता है कि एक कुशल लेखक को साल भर तक कुछ सूझे ही नही । यह लेखक तो लिखने की बात सिरे से सोचता ही नही था। इसका परिणाम वही हुआ, जो हो सकता था। अर्थात वह आज भी वही है, जहां से चला था, जबकि उससे कहीं कम योग्य और अपरिपक्व लेखक देश के प्रतिष्ठित साहित्यकारों में गिने जाते हैं ।

अभी पिछले दिनों एक पुराने जानकार से संयोगवश भेंट हो गई। पन्द्रह वर्ष पूर्व जब वह सेना में भरती हुआ था, तो

उसकी चतुराई, असाधारण बोध-शक्ति, अपार साहस और आकर्षक व्यक्तित्व का विचार करते हुए मेरा विश्वास था कि वह पाँच-सात वर्षो मे ही किसी ऊँचे पद पर पहुँच जाएगा। परन्तु मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह दुर्दशा और निराशा की मूर्ति बना हुआ था। पूछने पर पता चला कि वह आजकल कोई भी काम नही कर रहा है, और कई हजार रुपये का देनदार है। बाद मे उसके एक मित्र से सारी कहानी सविस्तार सुनने को मिली। उसने एक साल के भीतर ही सेना से त्याग-पत्र देकर अपने गॉव मे खेती बारी शुरू की थी। परन्तु शहरी आदतो के कारण वह खेती-बारी मे सफल न हो सका। इसपर उसने अपनी पैत्रिक भूमि को बेच, करीब के कस्बे मे कपडे की दुकान कर ली। परन्तु छ महीने भी बीतने न पाए थे कि दुकान बेच कर पुलिस मे भरती हो गया। वहाँ किसी अफसर से झगड़ा होने पर नौकरी छूट गई, तो जीवन-बीमा का काम शुरू कर दिया। उसमे असफल हुआ, तो ऊनका कारबार आरम्भ किया। इसी ऊन के धन्धे मे उसे हजारो का घाटा हुआ। और तभी से

जब मुझे यह व्योरा मालूम हुआ, तो उसकी दूरावस्था पर मेरा आश्चर्य दूर हो गया। मुझे सभझते देर न लगी कि वह अपने दुर्भाग्य के लिए स्वय ही उत्तरदायी था। इसलिए नही कि उसने अपना जीवन बनाने की चेष्टा नही की, बल्कि इसलिए कि वह स्थिरमन नही था, और किसी काम को भी मन लगा कर नही कर सकता था।

दुनिया मे कितने ही लोग केवल इसलिए सफल नही होते और उन्हे अपनी योग्यता और चेष्टाओ का उचित पुरुस्कार नही मिलता, क्योकि वे कुछ ऐसी आदतों के गुलाम है, जो उन्हें अपने पैरो पर खड़ा होने नही देती। उनका पालन-पोषण और शिक्षण सही ढग से नही हुआ, इसलिए उनके चरित्र मे कुछ ऐसी

त्रुटियाँ रह गई है, जो उनकी उन्नति के लिए बाधक बनी हुई है। उनका सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि वे न तो अपनी आदतों को बुरा समझते है और न उनमे सुधार और परिवर्तन ही करने के लिए तैयार है।

कुछ लोग, जो जीवन के उद्देश्य और अपनी योग्यताओ का ज्ञान रखते है, और बडे काम करना चाहते है, वे जब देखते हैं कि उनकी कुछ आदते उनकी प्रगति मे बाधक हो रही है, तो वे उनका परित्याग करने का सकल्प कर लेते है। परन्तु जब थोड़े दिनो के प्रयत्न से आदत नही छूटती, तो वे उतावलेपन से समझ लेते है कि आदतों से पिड छुडाना असम्भव है। इस प्रकार अपनी योग्यता का उचित मूल्य प्राप्त नही कर सकने।

जो लोग अपने को नही पहचानते, कोई उज्ज्वल ध्येय अपने सामने नही रखते, वे यदि आजीवन आदतो के गुलाम रहे, और इस दासता को किसी प्रकार भी अपमानजनक न समझें, तो ऐसे लोगो को सचमुच क्षम्य समझना चाहिए, परन्तु जो लोग अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाना चाह . है, और यह भी जानते हैं कि वे अपने बाहुबल से स्वयं अपना भाग्य बना सकते हैं, वे भी अपनी आदते बदलने मे असफल क्यों हो, जबकि वे भली-भाँति जानते है कि सफलता-प्राप्ति के लिए आदतो मे परिवर्तन आवश्यक है, और वे उसके लिए क्रियात्मक प्रयत्न भी करते हैं? इसका उत्तर यह है कि उनमे से अधिकतर इस भ्रांति मे पड़े हुए है कि आदतो मे परिवर्तन सम्भव ही नही। उन्होंने कहीं से यह वचन सुन रखा है कि आदते इन्सान के साथ मरघट तक जाती हैं, और वे इसे सत्य मानते हैं। इसलिए वे आदतों में परिवर्तन की कोई कोशिश नही करते। बस जब कभी जोश मे आते हैं, तो बिना सोचे-समझे फ़ैसला कर डालते है कि अब आइन्दा । क आदत से दूर का भी सम्बन्ध नहीं रखेंगे। परन्तु जब उस

पर अमल करने का समय आता है, तो वे उसे कल पर टालते जाते है, अथवा अनिच्छा से डरते-डरते कद म उठाते हैं। आप जानते ही है कि जो काम डरते-सहमते किया जाए, उससे कभी मनो-वाछित फल नही मिल सकता। ये लोग चूँकि असफलता के विचारो को अपने मन से निकाल नही सकते, इसलिए वे आदतो पर विजय पाने के प्रयास मे विरले ही सफल होते है।

इसमे सदेह नही कि आदतो को बदलना अति कठिन है। परन्तु यह सोचना कि किसी आदत से पीछा छुड़ाया ही नही जा सकता, अज्ञानता तो है ही, आत्मवचना भी है। और इस प्रकार के तर्क केवल वही लोग उपस्थित करते है, जो अपनी किसी आदत को लोक-प्रसिद्ध कम्बल की भाँति स्वय ही नही छोडना चाहते। जो लोग आदतो की दासता से मुक्ति-लाभ करके अपने जीवन मे उचित और हितकर परिवर्तन करना चाहते है, उन्हे सबसे पहले अपने इस सिद्धात अथवा विश्वास को तिलाजली देनी होगी कि आदतो मे परिवर्तन सम्भव ही नही है। इस शिला को तोडने के बाद उन्हे ध्यानपूर्वक यह देखना चाहिए कि कौनसी आदत उनकी उन्नति की सम्भावनाओ को अधकारमय बना रही हैं। इस अनुभव की उपलब्धि के लिए यथार्थवाद से काम लेना चाहिए, और अपने सब आचार-विचार की अच्छी तरह समीक्षा करनी चाहिए। कुछ आदते प्रकट मे हानिकर नही दीखती, और नैतिक दृष्टि से भी उन्हे निन्दनीय नही समझा जाता, परन्तु जरा गहन दृष्टि डाली जाए तो पता चलता है, कि वे उन्नति की स्वाभाविक गति को मद करती है इसलिए उन्हे भी त्याज्य आदतो की सूची मे रख लेना चाहिए, जब यह सूची तैयार हो जाए, तो नई आदतो से शुरू करके धीरे-धीरे पुरानी आदतो तक पहुँचना चाहिए, और एक वक्त में अपना सारा ध्यान किसी एक आदत विशेष को छोड़ने पर

केन्द्रित रखना चाहिए। एक साथ सारी आदतो को वदल देना वहुत मुश्किल होता है इसलिए एक-एक करके शत्रु को परास्त करना ही वुद्धिमता है। इस काम में उतावला कभी नही होना चाहिए।

आदतो पर विजय पाने में असफलता का सवसे खेदजनक पहलू यह है कि उसके वाद व्यक्ति को अपने पर विश्वास नही रहता। वे समझने लगता है कि वह स्वयं अपना कर्त्ता नही है, वल्कि परिस्थितियाँ और घटनाएँ तथा उसकी आदतें ही सव कुछ है, वह तो केवल उनके आदेशो का पालन करने वाला सेवक मात्र है। इस प्रकार आदतो के परित्याग का रोज-रोज सकल्प करने और उसको कार्यन्वित करने मे असफल रहने से फायदे की वजाए, उल्टा नुकसान हो जाता है। इसलिए आदतों को वदलने मे जल्दी न कीजिए और खूव सोच-समझ कर जव एक वार किसी आदत को छोडने का इरादा करें, तो उसे पूरा किए विना दम न ले। सकल्प करके पूरा न करना सकल्प न करने से भी ज्यादा अहितकर है। इसलिए आदतो के विपय में कभी अपना संकल्प न तोडिए, अन्यथा आदत तो और सुदृढ होगी ही उल्टा आपके आत्मविश्वास की अपार हानि होगी।

आदतो का परित्याग करने के विपय मे वहानेवाजी से कभी काम न कीजिए। कुछ लोग अपनी किसी आदत को हानिकारक तो समझते है, पर उसे छोड़ने पर तैयार नहीं होते। जव उनसे इसका कारण पूछा जाए, तो झट उत्तर देते हैं कि इस आदत को छोड़ने से उनके स्वास्थ्य पर वुरा प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। मेरे एक मित्र अपने अत्यधिक धुम्रपान की शिकायत करते रहते हैं। परन्तु जव उनसे कहा जाए कि इस आदत को छोड़ क्यों नहीं देते, वह सहज ही मे उत्तर देते हैं कि छोड तो दूँ, लेकिन डाक्टर कहते हैं कि तमाकू छोड देने मे मुझे हृदय

रोग होने की आशका है । आदतो से चिमटे रहने वाले बहुत से लोगो का ऐसा रवैया होता है । वे किसी आदत को छोड़ने की हामी भर लेते है, लेकिन उसे पूरा नही करते, और पूछने पर अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए कोई न कोई बहाना घड लेते है । यह बहानेबाजी उनके चरित्र को दूपित कर देती है, उनके आत्मविश्वास की हानि करती है और उन्हे कर्ममार्ग पर अग्रसर होने से रोक देती है । बल्कि सच बात यह है कि वे अपनी दूसरो हानिकर आदतो मे एक और बहानेबाजी की वृद्धि कर लेते है, जो पग-पग पर उनका रास्ता रोकती है । जब भी वह किसी काम को हाथ मे लेने का सकल्प करते है, तो यह नई आदत तत्काल बीच मे आ खडी होती है, और उन्हे सहारा देती है कि उस काम को कल पर या फिर किसी दिन के लिए उठा रखे ।

निमित्त-साधन की तरह आत्मवचना भी आदतो के परित्याग मे बाधक होती है । आदतो को छोड़ने मे बहुत बार केवल इसलिए सफलता नही मिलती कि आत्मवचना हमे सात्वना देने के लिए मौजूद होती है । आप रोज़ सिनेमा देखते है और कभी कभी ख्याल आता है कि यह पंसे और समय दोनो का अपव्यय है । परन्तु तभी आत्मवचना दिलासा देती है कि हिन्दुस्तानी फिल्मे देखना तो शायद फजूलखर्ची है, क्योकि उनमे बकवास के के सिवा और कुछ नही होता, लेकिन अग्रेजी फिल्मो के बारे मे यही बात नही कही जा सकती । उनसे साधारण ज्ञान की वृद्धि होती है, और आदमी घर बैठे सारी दुनिया की सैर कर लेता है । फिर मनोरजन ही तो है । यदि दिन भर की मेहनत के बाद शाम को थोडा सा आराम भी न किया, तो फिर कमाने की जरूरत ही क्या है । यदि आप अपना सुधार करना चाहते है, तो आत्मवंचना के इस भ्रमजाल को तोड़ दीजिए, और अपने किसी

कृत्य का औचित्य मिथ्या सांत्वना मे तलाश न कीजिए। अपनी कमज़ोरियो का निर्पेक्ष निरीक्षण कीजिए, और उन्हें दूर करते समय 'केवल एक बार' या 'बस आज' की रिआयत से फायदा न उठाइए। क्योकि यदि आप ने 'एक छूट' या 'एक दिन की क्षमा' की आड ली, तो फिर आपका जी चाहेगा कि इसी छूट या क्षमा से फिर एक बार लाभ उठाएँ और इस तरह आपका 'केवल आज' रोज-रोज आकर 'सदा' का पर्याय बन जाएगा।

हानिकारक आदतो से पिंड छुड़ाने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि उनके स्थान पर लाभदायक आदतें अपनाई जाएँ,ताकि पुरानी आदतो के फिर से जड़ पकडने की सम्भावना ही न रहे। बहुधा मनुष्य क्षुद्र विचारो अथवा अहितकर आदतो से केवल इसलिए मुक्ति लाभ नही कर पाता कि वह छोडने के बाद भी उनकी जगह खाली छोड़ देता है। आदते जब देखती है कि उनकी जगह लेने वाला कोई नही आया, तो वे पुनः लौट आती है। इसका इलाज यह है कि एक बुरी आदत को छोड़ कर उसकी जगह एक अच्छी आदत अपनाई जाए। उदाहरण के लिए यदि आपका अधिकांश समय कल्पना के महल बनाने मे व्यतीत होता है, तो इस आदत को छोड़ने के लिए कोई अच्छी किताब पढिए, अथवा किसी विषय पर कुछ लिखने की चेष्टा कीजिए। यदि आप अर्थाभाव का शिकार है और हर वक्त इसी ग़म मे घुले जा रहे हैं, तो अवकाश के समय मे कोई लाभदायक व्यवसाए सोचिए। इस तरह आप हवाई किले बनाने की आदत से छुटकारा हासिल कर सकते हैं।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ, जो पन्द्रह-बीस वर्ष पहले गर्मियो में कि जब सब कोठियों वाले पहाडों पर चले जाते थे, घूम फिर कर खाली कोठियों का निरीक्षण किया करता था। एक बार मैंने उससे इस आदत के बारे में पूछा, तो कहने लगा

कि वह कोठियो की बनावट को'देखता है, ताकि जब वह शीघ्र ही अपनी कोठी वनवाए, तो उसका नक्शा सबसे अच्छा हो। मैं उसको महत्वाकाक्षा की प्रशंसा किए बिना न रह सका।

लेकिन पिछले दिनो मुझे उन सज्जन से मिलने का फिर सयोग हुआ। आप एक सप्ताहिक पत्र जिसका सम्पादन भी शायद आप स्वय ही करते थे बाजार मे बेच रहे थे। आप उस पत्र के मालिक नही थे, बल्कि वैतनिक कर्वचारी थे, और वेतन भो आप को नकद नही, बल्कि 'माल' के रूप मे मिलता था। अर्थात आपको प्रति सप्ताह पत्र की साठ प्रतियां मिल जाती थी जिन्हे बेच कर आप अपना गुजारा कर रहे थे। मैंने उन्हे उनकी पुरानी आदत की याद दिलाई, तो कहने लगे कि हॉ, कोठियों के चक्कर तो मैं अब भी लगाता हूँ। दरअसल मेरा पत्र बिकता ही कोठियो मे है। इसका सम्पादक-पद सभाले अभी मुझे थोडे ही दिन हुए है। मगर पत्र दिन दूनी रात चौगनी तरक्की कर रहा है। बस अब दिन दूर नही, जब मै अपनी पसन्द की कोठी बनवा लूँगा।" कह कर वह चलते बने।

मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ कि इस आदमी के मस्तिष्क मे कोई विकार नही है। केवल इतनी बात है कि वह सपनो की दुनिया मे रहता है। उसने अपने लिए सपनो की एक दुनिया बना रखी है, जो बहुत ही सुन्दर और बहुत ही सुखद है। परतु कल्पना जगत मे रहते हुए वह अपने लिए कोठी तो दूर, एक झौपडो भी नही बना सका। इस उदाहरण से प्रकट है कि उन्नति के लिए केवल सपने देखना ही काफी नही है। कल्पना महलो की ठोस धरती पर नीव रखने और दीवारे खडी करने की जरूरत है,

बीसियो काम ऐसे है, जिन्हे आप अपने खाली समय मे करके अपनी आप की वृद्धि कर सकते है आपके देखते ही देखते क्लर्कों

ने शाम के समय कालेज में पढ़कर वकालत पास करली है, और अव सफल वकीलो मे गिने जाते हैं। कितने ही नार्मल पास अध्यापकों ने घर बैठे डिग्रियाँ प्राप्त की है, और अव कालेजों मे प्रोफेसर हैं, या सरकारी अफ्सर बन चुके है। इसलिए बुरी आदतों के स्थान पर अच्छी आदतें अपनाने मे त्रुटि न कीजिए।

मनोविज्ञान के विशेषज्ञो का कहना है कि आदतों में परिवर्तन के लिए अपने सकल्प की घोषणा करते रहना भी उपयोगी होता है। इसमें सदेह नही कि व्यक्ति जव अपने मित्रो और सम्बंधियो के सामने कोई शपथ ग्रहण करता है, तो यथासाध्य उस पर दृढ रहने की चेष्टा भी करता है। मनुष्य स्वभावतः इस वात को पसन्द नही करता कि उसे हठी और अविश्वसनीय समझा जाए। अवश्य इस विषय में कुछ लोगो की दृढता हठधर्मी की हद तक भी वढ़ जाती है, जो फायदे का वजाए उल्टा नुकसान करती है। इस लिए व्यर्थ की कस्में नही खानी चाहिएँ, और यदि कभी भावावेश मे ऐसा हो जाए, तो बुद्धिमता से काम लेकर उसमे परिवर्तन करने की क्षमता होनी चाहिए।

इतनी बात हमेशा याद रखिए कि आप मनुष्य हैं, और आप को विचार और संकल्प की असीम शक्ति प्रदान की गई है। आप जो चाहें कर सकते हैं, और जिस आदत को चाहें वदल सकते है। आप किसी काम को सम्पन्न करने, अथवा उद्देश्य को सिरे चढ़ाने का संकल्प करले, तो दुनिया की कोई ताकत आपको सफलता प्राप्त करने से रोक नही सकती। आदतों में परिवर्तन तो मामूली वात है, आप चाहे, तो कठिन से कठिन अभियान में भी सफल हो सकते है। जरूरत केवल इतनी है कि आप दृढ़ता से काम लें।

सोचिए और आत्मविश्वासी बनिए

सोच विचार और आत्मविश्वास मे अटूट सम्बध है। मनुष्य को तब तक अपने पर विश्वास नही हो सकता, जब तक कि वह किसी काम को उत्तम रीति से करने की योग्यता न रखता हो। और योग्यता तभी पैदा हो सकती है, जब वह अपनी समस्याओं का हल और अपनी सफलता के उपाय ढूढ सकता हो। दुनिया मे ऐसे लोगो की कमी नही जिनके पास पूजी भी है,और वे सुशिक्षित भी है। परन्तु वे कोई उल्लेखनीय उन्नति नही कर सके, जबकि उनके मुकाबले पर कितने ही ऐसे लोग मौजूद है, जो उक्त सुविधाएँ नही रखते, अर्थात न तो किसी विश्वविश्द्यालय के सनातकोत्तर शिक्षा प्राप्त किए हुए है, न जीवन क्षेत्र मे प्रवेश करते समय उनके पास पूजी होती है। परन्तु वे कला-कौशल, विज्ञान व उद्योग अथवा व्यापार-जगत मे प्रसिद्धि प्राप्त करते है। उन में से कुछ ऊँचे पदो पर पहुँचते है, और कुछ बडे-बडे कारखानो के मालिक बनते है। अतीत के महापुरुषों मे बहुसंख्या उन लोगो की है, जो निर्धन परिवारो मे जन्म लेने के बावजूद अपने मह।न कृत्यों के कारण प्रसिद्ध हुए है, और आज तक उनका नाम सम्मान के साथ लिया जाता है, जबकि उनके समकालीन घनिको और सृष्टिपुत्रो के नाम तक से कोई परिचित नही है। इस अंतर का कारण केवल यह है कि उत्तरोक्त श्रेणी के लोग

सोच-विचार का कष्ट नही करते थे, जबकि पूर्वोक्त लोग चितन-मनन को अपने जीवन की बहुमूल्य निधि समझते थे, और उसी के सहारे प्रसिद्धि-शिखर पर पहुँचने में सफल हुए।

यों तो इस दुनिया मे ऐसे व्यक्तियों की संख्या कम ही होगी, जिन्हे प्रसिद्धि और नाम, यश की लालसा न हो, परन्तु मुश्किल यह है कि अधिकतर लोगो को यह मालूम ही नही होता कि वे अपने को पहचान कर और अपनी योग्यता से काम लेकर बड़े-बडे काम कर सकते हैं। इसकी बजाय वे स्वयं को सदैव तुच्छ, निर्बल और अयोग्य ही समझते रहते हैं। उनके विचार मे कोई उपयोगी आविष्कार अथवा उत्कृष्ट कल्पना उनके बस की बात नही, इसलिए वे सदैव दूसरो पर निर्भर किए रहते हैं, और दूसरो की योग्यता देख ईर्षा अनुभव करते है।

उन्हे कहा जाए कि यदि वे सोचने-समझने का कष्ट करे, और परिश्रम का मार्ग अपनाएँ तो दुनिया के बडे से बड़े सफल व्यक्ति के समतुल्य बन सकते है, तो वे तुरन्त उत्तर देते हैं कि यह असम्भव है हम जैसे अज्ञानी अयोग्य व्यक्ति महापुरुषो की पक्ति मे कैसे बैठ सकते हैं, विशेषकर जब हमें महानता प्राप्त करने के अवसर ही प्राप्त नही है। इन बेचारों को पता ही नही होता कि सृष्टिकर्त्ता ने प्रत्येक मनुष्य को सोचने समझने की शक्ति प्रदान कर रखी है, जिससे यदि सही काम लिया जाए, तो मनुष्य आश्चर्य-जनक कार्य कर सकता है। दरअसल यह उनकी अज्ञानता ही है, जो न तो उन्हे अपनी वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त करने देती है, और न अपने पर विश्वास करके कोई मूल्यवान कार्य करने के योग्य बनने देती है। इसलिए वे दुनिया के बाजार मे तुच्छ, अयोग्य और निर्धन बनकर रहते हैं, और इसी अवस्था में अंतिम यात्रा करते है।

'जो सोचते है, वे करते हैं', 'जो चिंतन मनन के अभ्यस्त होते

है। वे सफलता के द्वार मे प्रवेश करते है। अपने मन मे डूबकर पाले सुरागै जिन्दगी, 'सोचिए और धनवान बनिए' इत्यादि कथनो की सत्यता से केवल वही लोग इन्कार कर सकते है, जो स्वय सोच-विचार के अभ्यस्त नही है, और जो नही जानते, कि मनुष्य को प्रकृति ने असाधारण बौद्धिक शक्ति प्रदान की है। परन्तु जो लोग मानवी महानता को स्वीकार करते है, उन्हे इन उक्तियो की सत्यता पर विश्वास करने मे आपत्ति नही होनी चाहिए, और उन्हे केवल इस तथ्य को स्वीकार ही नही करना चाहिए, बल्कि स्वय भी सोच-विचार की आदत डालनी चाहिए। ताकि अपने परिश्रम का उपयुक्त पुरस्कार प्राप्त कर सके।

वास्तविकता यह कि हमारा जीवन हमारे विचारो का प्रतिबिम्ब होता है। हमारा सुख-असुख, सफलता या असफलता हमारे विचारो पर निर्भर करती है। जो लोग अपना कार्य मार्ग सोच समझ कर चुनते है, अपने व्यवसाय को उन्नत करने के विषय मे गहन विचार करते है, वे अवश्य ही सफल होते है। उन्हे चूंकि विश्वास होता है कि उन्नति का जो मार्ग उन्होने अपनाया है, वह सीधा सफलता के रग-महल को जाता है, इस लिए वे सघर्ष मे कोई कसर नही उठा रखते। परन्तु जो लोग सोच-विचार को कोई महत्व नही देते, और बिना सोचे-समझे किसी कारबार मे पूंजी लगा देते है, वे शायद ही कभी सफलता का मुँह देख पाते है। परन्तु याद रखिए, मनोवाछित परिणाम केवल उसी सोच-विचार के हो सकते है,जो स्वस्थ और सुस्थित हो, और जिस से लाभ उठाने के लिए आवश्यक सामग्री भी जुटाई गई हो। इस बात को समझने के लिए एक उदाहरण लीजिए।

मोहन यह लेख पढ़ता है, और सोच-विचार के प्रभावित होता है। इसके बाद [illegible] दी इस

विचार शुरू कर देता है कि उद-जन् बम से भी ज्यादा विनाश-कारी अस्त्र कैसे बनाया जा सकता है। मोहन विज्ञान का विद्यार्थी नही है। उसे यह भी मालूम नहीं कि 'आण्विक शक्ति' क्या होती है, और कहाँ से और कैसे उपलब्ध की जा सकती है। न उसे यह पता है कि उदजन् बम क्या होता है, और उसे कैसे तैयार किया जाता है। परन्तु वह विचार करने लगा है उदजन बम से भी ज्यादा विध्वंसक बम बनाने की समस्या पर अब आप ही बताइए कि ऐसे सोच-विचार का क्या परिणाम निकल सकता है। वह चाहे घटो इस समस्या पर सिर खपाता रहे, पर उसकी मेहनत अकारथ ही जाएगी। इसलिए नही कि मोहन सोच-विचार की क्षमता नही रखता, अथवा बौद्धिक योग्यता में किसी से हीनतर है, बल्कि इसलिए कि मोहन ने इस प्रकार की समस्याओ पर विचार करने के लिए आवश्यक सामग्री अर्थात उपयुक्त ज्ञान उपलब्ध नही किया। अब वह हजार सिर पटके, लाख विचार सागर में डुबकी लगाए, पर 'नए आविश्कार' के मुक्ता उसके हाथ नही आएँगे।

मनोविज्ञान के विशेपज्ञों का कहना है कि मानवी मन की दो दशाएँ अथवा परते होती है। एक दशा वह है, जिसकी गति-विधि से हम अवगत रहते है। इसे ज्ञान अथवा चेतना कहते हैं। इसके माध्यम से हम वस्तुओ के सम्बन्ध मे जानकारी अथवा अनुभव प्राप्त करते है, और अपनी इच्छा, संकल्प अथवा विचार की अभिव्यक्ति करते हैं। जब हम जागृत अवस्था मे होते है, तो हमारी चेतना क्रियाशील रहती है। दूसरी दशा को अचेत मन कहते हैं। इस की प्रक्रियाओं से हम अनभिज्ञ रहते हैं। परन्तु इसी के द्वारा हमारे शरीर की विभिन्न आतरिक क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं।

हमारा चेतन मन इन्द्रियों द्वारा जो ज्ञान उपलब्ध करता

है, वह अचेतन मन में संचित होता रहता है, जहाँ से उन्हें आवश्यकता पड़ने पर चेतना स्तर पर लाया जा सकता है। अचेतन मन एक प्रकार का गोदाम है, जहॉ जीवन की अनुभूतियाँ, स्मृतियाँ और अभिलाषाएँ सुरक्षित रहती है। इस गोदाम के एक कोने मे एक 'कार्यालय' है, जहाँ विचारो का निर्माण होता है। इन विचारो के लिए 'कच्चा माल' वे अनुभूतियाँ और जानकारी है, जो अचेतन मन मे सुरक्षित रहती है। इस से स्पष्ट है कि अचेतन मन में जिस प्रकार की सामग्री सचित रहेगी, वैसे ही हमारे विचार होगे। यदि कपडे के कारखाने मे अच्छी रुई प्रयुक्त होगी, तो अच्छा कपडा तैयार होगा। इसके विपरीत यदि कपास घटिया किस्म की होगी, तो उत्तम कोटि का कपडा तैयार होने की आशा नही की जा सकती। इसी तरह हमारे विचार उतने ही अच्छे या बुरे हो सकते है, जितनी अच्छी अनुभूतियाँ और सद-ज्ञान हमारे अचेतन मन मे सगृहीत रहेगे।

यदि आप चाहते है कि उत्तम विचार, और सुझाव सोच सकें, तो फिर अपने अचेतन मन के संग्रहालय को सद-ज्ञान से पूर्ण करने मे खूब परिश्रम कीजिए। जिस समस्या का हल आप मालूम करना चाहते है, पहले उनके सम्वन्ध में पूरी जानकारी प्राप्त कीजिए। और फिर उस पर सचेत रूप से खूब सोच-विचार कीजिए। उसके बाद अपनी सारी जानकारी और चिंतन के परिणामो को अचेतन के सुपुर्द कर दीजिए। बाकी काम वह स्वयं ही कर लेगा।

दुनिया मे जितने भी प्रसिद्ध वैज्ञानिक, विद्वान, आविष्कारक और साहित्यिक हो गुजरे है, उनको सफलता और महानता का रहस्य यही है कि वे अपने अचेतन मन को उत्तम कोटि की सामग्री उपलब्ध कराते थे। वे वर्षो तक गहन अध्ययन में सलग्न रहते थे, और ज्ञान-विज्ञान की जिस शाखा में उन की

रुचि थी, उसके सम्बन्ध मे उन्होंने प्राय: सभी प्राप्य जानकारी उपलब्ध की, प्रामाणिक पुस्तको का अध्ययन किया, अपने समकालीन विद्वानो से विचार-विनिमय किया, अनिर्णत समस्याओं पर दीर्घ काल तक चिंतन किया, और उसके बाद अपने सारे ज्ञान और निष्कर्षों को अचेतन मन के समर्पित कर दिया जहाँ से वे नए आविष्कारो और रचनाओं का अंतिम रूप धारण करके चेतना पटल पर प्रकट हुए । इन महानुभावो को सफलता इस तरह मिली ।

ज्ञान-विज्ञान की तरह व्यवसाए में सफलता के लिए भी इसी सिद्धांत पर आचरण किया जाता है, भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक और उद्योगपति श्री विश्वेश्वरिया लिखते है कि उत्तम विचारों और दुर्लभ सुझावो की सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए अधिकाधिक जानकारी उपलब्ध करने का प्रयत्न कीजिए । अपने अचेतन मन के लिए उत्तम कोटि का कच्चा माल संचित कीजिए, और उसपर देर तक विचार कीजिए । यदि आप ने अपने जीवन-पथ का चुनाव करने मे गलती नही की, अपने काम मे रुचि लेते हैं, और उसे सम्पन्न करने की योग्यता रखते है, तथा अपनी समस्याओ को हल करने मे इस सिद्धांत पर चलते हैं, जिसका स्पष्टीकरण ऊपर किया गया है, तो फिर आप कठिन से कठिन समस्या का भी हल निकाल सकते हैं ।

इस विवरण से यह निष्कर्ष निकलना अनुचित न होगा कि प्रसिद्ध और महानता किसी की जागीर नहीं है । जो लोग संघर्ष करेंगे, अपने अचेतन मन को उत्तम प्रकार का 'कच्चा माल, उपलब्ध कराएगे, और अपने मनपसन्द विषय अथवा व्यवसाए मे उन्नति और सफलता की सम्भावनाओं पर विचार करेंगे, वे कठिन समस्याओ का समाधान करने मे असफल नहीं होंगे । यही इस तथ्य को भी दृष्टिगत रखना चाहिए कि अचेतन

मन तक प्रत्येक मनुष्य की पहुँच सम्भव है। इसका प्रमाण यह है कि कभी कभार आप को ऐसी कठिनाई आ पडती है कि उस से निकलने का कोई मार्ग ही सुझाई नही देता। परन्तु अंततः आप अपने सामर्थ्यानुसार कोई रास्ता निकाल ही लेते हैं। इससे भी ज्यादा सरलवोध प्रमाण यह है कि किसी प्रिय मित्र का नाम भूल जाते है। आप दिमाग पर जोर देते है, और नाम याद करने की लाख चेष्ठा करते है, परन्तु आप के सब प्रयत्न विफल होते है। कुछ दिन वाद बाग मे टहलने अथवा स्नान करते ममय आप को अनायास ही वह नाम याद आजाता है। जिसका अर्थ वह है कि यह नाम आपके अचेतन मन में सुरक्षित था, और वहाँ से आप को हर वक्त सहायता मिल सकती है। इसलिए इम भ्रम मे कभी न रहिए कि अचेतना तक पहुँच केवल महापुरुपो के वश का वात है। इस चेतावनी की आवश्यकता है क्योकि दुनिया मे अधिकतर लोग केवल इसलिए अपनी योग्यता का प्रदर्शन नही कर सकते, और कोई वडा काम सम्पन्न नही कर सकते क्योकि उनके ख्याल मे ज्ञान-विज्ञान और मौलिकता के जगत मे नाम अर्जित करना प्रत्येक व्यक्ति का काम नही। यह योग्यता ईश्वर-दत्त ही होती है, और इस में व्यक्तिगत चेष्टा का कोई हाथ नही होता।

इम भ्रम मे कभी मत पडिए। आप चाहे, और परिश्रम करें तो पिछले महापुरुपों की तरह आप भी मौलिकता और नवीनता के क्षेत्र मे अपने अपूर्व कृत्यो से सारी दुनिया को आश्चर्यचकित कर सकते हैं। परन्तु आपको यह सम्मान तभी प्राप्त होगा, जव आप पहले अपने अन्दर आविस्कार-क्षमता पैदा करें, विश्वविख्यात वैज्ञानिकों और विद्वानो की तरह ज्ञानोपार्जन करें, और अपने प्रिय विपय पर सोच विचार करें। यदि अब तक आप कोई महत्वपूर्ण कार्य नही कर सके, तो इसलिए नही कि

आप असमर्थ या अयोग्य हैं, और आविश्कार की क्षमता नहीं रखते, बल्कि इसलिए कि अभी तक आपने उस निधि का उपयोग नही किया, जो प्रकृति ने आपको बडा उदारता के साथ प्रदान की है। इस धारणा की पुष्टि न्यूटन की सफलता से होती है।

सर आईजिक न्यूटन ने जब एक पके हुए सेब को धरती की ओर गिरते देख कर गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का आविष्कार किया था, तो उस समय तक हजारों व्यक्ति दरख्तो से फल गिरते देख चुके थे। परन्तु किसी ने कभी उसका कारण मालूम करने का कष्ट नहीं किया था। उन लोगों ने अपने अचेतन मन को ऐसा 'कच्चा माल' उपलब्ध नहीं कराया था, जिसकी सहायता से वे पके हुए फल को टूट कर गिरते देख अपने से प्रश्न करते कि ऐसा क्यों होता है। उनके लिए इस मे कोई अचभे की बात नही थी। इसलिए उनके अचेतन मन ने इसका उत्तर देने की आवश्यकता भी अनुभव नही की। परन्तु न्यूटन 'क्यो' कहे विना न रह सका कारण वह वर्षों से अपने ज्ञान-भंडार को भर रहा था, और उसने अपने अचेतन मन के गोदाम को उत्कृष्ट प्रकार के 'कच्चे माल' से परिपूर्ण कर रखा था। अत: जब उसने अपने मन से प्रश्न किया, तो उसे सही उत्तर मिलने मे देर न लगी।

मि० बर्टरेंड रसल कहते हैं कि जब मैं किसी गूढ विषय पर लेखनी उठाना चाहता हूँ, तो पहले उसपर अच्छी तरह विचार करता हूँ, और अपनी पूरी बौद्धिक योग्यता तो उसके सब रहस्यो की जानकारी प्राप्त करने पर लगाता हूँ। उसके बाद उस विषय और उस पर अपने सोच-विचार के परिणामों को अचेतन मन के सिपुर्द कर देता हूँ। इन उदाहरणों से प्रकट है कि न्यूटन और रसल की सफलता उनके सोच-विचार की देन है। और सोच-विचार की शक्ति अमीर-गरीब सबके लिए

प्राप्य है।

सोच-विचार के लिए चुनाव अत्यन्त महत्व रखता है। इस अध्याय के प्रारम्भ मे मोहन का उदाहरण दिया गया है, जो विज्ञान का विद्यार्थी न होने पर भी अपनी विचार शक्ति एक ऐसी समस्या पर व्यय करता है, जिस का उसे कुछ भी ज्ञान नही है। परिणामत कुछ भी उसके पल्ले नही पडता। इसलिए यदि आप सोच-विचार करने को तैयार है, तो मोहन का अनुसरण कीजिए। और केवल उसी विषय या काम मे अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने की चेष्टा कीजिए, जिसके सम्बन्ध मे आपको पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो, अन्यथा आपको सफलता नही मिलेगी। यदि न्यूटन गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत आविष्कृत करने की बजाए कोई नाटक या महाकाव्य लिख कर प्रसिद्धि के रग-महल मे प्रवेश करने की चेष्टा करता, तो शायद आज उसका नाम भी किसी को मालूम न होता। इसलिए पहले अनुकूल जानकारी प्राप्त कीजिए, और उसके बाद अपनी सारी शक्ति और साधन उसमे सफल होने पर लगा दीजिए। उदाहरण के लिये यदि आप उच्च कोटि के साहित्यिक बनने की योग्यता रखते है, तो आपको राजनीति पर अत्यधिक विचार आरम्भ नही करना चाहिए, बल्कि साहित्य का अध्ययन करना चाहिए,

सोच-विचार के अच्छे परिणाम कभी-कभी इसलिए नही निकलते कि व्यक्ति किसी समस्या पर विचार आरम्भ करता है तो बीच मे कोई और काम आ पडता है, जिसे टाला भी नही जा सकता। उससे निवृत्त होकर जब फिर विचार शुरु करता है। तो विचारो की शृ खला जोड़ने मे बडी कठिनाई होती है। इस उलझन से बचने का उत्तम उपाय यह है कि जब आप किसी महत्वपूर्ण विषय पर विचार करने बैठे, तो अपने विचारों को लिपि-वद्ध करते जाएं। बेहतर तो यह है कि दो

भागों में बांट ले, और उन में अनुकूल और प्रतिकूल दोनों तरह के विचार लिखते जाए। ताकि जब पुनर्विचार का समय आए, तो एक ही नजर मे मालूम हो जाए कि आप कहाँ तक पहुँच चुके थे। यह क्रम यदि कई दिन तक जारी रहे तो भी कोई हर्ज नही। ऐसे विचारो को अवश्य रद्द कर देना चाहिये, जो बाद के सोच-विचार से त्रुटिपूर्ण सिद्ध हो, और उन के स्थान पर नए विचार लिखने चाहिए। जब आप अनुभव करें कि नवीन विचारो का क्रम रुक गया है, तो एक बार फिर अपने सब विचारो की समीक्षा करे—और फिर इस सारी सामग्री को अपने अचेतन के सपुर्द कर दें, और कुछ दिनो के लिये उस समस्या को बिल्कुल भूल जाएँ। कुछ विशेषज्ञो का कहना है कि लिपिबद्ध विचारो के मसोदे को फैंकना नही चाहिये, बल्कि किसी सुरक्षित स्थान पर रख देना चाहिये, ताकि आवश्यकता पडने पर उसका अध्ययन किया जा सके।

यहाँ पहुँच कर चेतना का कार्य समाप्त हो जाता है। अब अचेतन मे विचार परिपक्व होते हैं, और किसी भी समय समस्या का हल या सही सिद्धांत चेतना स्तर पर प्रकट हो सकता है, यदि कुछ दिनो तक आपके प्रयत्न सफल न हो, तो घबराने की कोई जरूरत नही है। हताश होने की बजाए अपने विचारों पर फिर एक बार दृष्टिपात कीजिए। हो सकता है कि इस तरह कुछ और पक्ष प्रकाश में आए, और वही निर्णयक सिद्ध हों।

ठोस सोच-विचार के लिए मित्रों, सम्बंधियो और सहयोगियों के साथ विचार-विनिमय भी लाभप्रद होता है। बडी-बड़ी सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओ की ओर से सम्मेलन और विचार-गोष्ठियां इसी उद्देश्य के दृष्टिगत आयोजित की जाती हैं, विचार-विनिमय के समय सब पक्षो की बात ध्यान से सुनिए उनके मतो का विश्लेषण कीजिए। आपके सुझाव पर जो

आपत्तियाँ उठाई जाएँ, उनका उत्तर देने की चेष्टा कीजिए। इस विधि से सोचने पर आपके अचेतन को निर्णय करने में बडी सुविधा होगी।

जब किसी समस्या पर देर तक विचार करने से मस्तिष्क क्लान्त हो जाए, और अधिक विचार करने को जी न चाहे, तो दिमाग पर अकारण जोर न डालिये, बल्कि तत्काल अपना ध्यान किसी दूसरे कार्य मे लगाइये। थकावट सोच-विचार की दुश्मन है शिथिल मस्तिष्क से यह आशा नही रखनी चाहिये कि वह सोच-विचार का काम उत्तम रीति से कर सकेगा। अचेतन तभी काम कर सकता है जब मस्तिष्क स्वस्थ अवस्था में हो।

यह काम प्रारम्भ में बहुत कठिन मालूम होगा। यह भी सम्भव है कि प्रारम्भ मे आपके इच्छा के अनुसार कोई सुखद परिणाम न निकले परन्तु ज्यो-ज्यो आपको सोच-विचार का अभ्यास होता जाएगा, त्यो-त्यो आप अपना काम सरल पाएंगे, और सहज ही मे अपनी समस्याओ का हल निकाल लेगे।

"खूब सोच-विचार के बाद समस्या को भूल जाइये, आमोद प्रमोद, पयटन या और किसी मनोरजक क्रीडा मे भाग लीजिए—मै इस बात को फिर दुहारता हूँ, और आपको परामर्श देता हूं कि विश्राम, मानमिक शांन्ति और चिताशून्यता को कभी महत्वहीन समझिये। इन्ही क्षणो मे आपकी विचार शक्ति पुनर्जीवत होगी। चन्द क्षणो मे जब आप आरामकुर्सी पर लेटे होगे और अतीत की किसी सुहावनी अनुभूति अथवा सुखद घटना स्मृति से मन बहला रहे होगे—अवकाश और बेकारी के यही क्षण आपके लिये हितकर सिद्ध होगे।

इस सिद्धांत को सभी मनोविज्ञान-विशेषज्ञ पुष्टि करते हैं। वे कहते है कि कोई अछूता विचार या नवीन सुझाव का आविष्कार करने के लिए आवश्यक है कि जब मनुष्य समस्या पर

संतोषजनक रूप से विचार कर चुके, तो कुछ देर के लिए उसे भूल जाए, और अपना ध्यान किसी और दिशा मे लगाए। एक पाश्चात्य विद्वान लिखता है कि "बुद्धिमान् विचारक किसी शास्त्रीय समस्या पर इतना विचार नही करता कि मस्तिष्क की शक्तियो का अन्त हो जाये, और न किसी समस्या पर विचार करने के तुरन्त बाद किसी कठिनतर समस्या पर आरम्भ करता है।" दूसरे विचारको और उपाय-शास्त्रियों के कथन और आचरण से भी इस दृष्टि-कोण की पुष्टि होती है।

अमरीका के भूत पूर्व प्रधान मि० ट्रूमैन अपनी डायरी में लिखते हैं कि मैं क्षोभ से साधारणत· कम ही प्रभावित होता हूँ। परन्तु प्रधान रूज़वेल्ट की मृत्यु से मुझे वस्तुतः बहुत ही आघात पहुचा। और यह देखते हुए इसकी और वृद्धि हुई कि प्रधान-पद का भारी बोझ अब मेरे कधों पर पडने वाला था। मुझे मालूम नही था कि जिस व्यक्ति को सारा देश देवता समान पूजता है, उसके निधन पर देश-वासियो की क्या प्रतिक्रिया होगी, और न मुझे इस बात की जानकारी थी कि इस महान दुर्भाग्य का युद्ध की गति, युद्धोपयोगी सामग्री की तैयारी और अन्य महत्त्व-पूर्ण समस्याओ पर क्या प्रभाव पडेगा। यह तो मैं जानता था कि स्वर्गीय प्रधान ने मि० चर्चिल और मार्शल स्टालिन से कई बार भेट की थी। परन्तु इन सम्मेलनो मे कौनसी समस्याओ और क्या-क्या विषयो पर वार्ता हुई, और क्या निर्माण किए गए इसका मुझे कुछ भी पता नही था। मैं इन चिन्ताओं का सामना करने मे स्वय को बिल्कुल असमर्थ पा रहा था। अतः मैं चिताओं मे डूबने की बजाय सीधा अपने घर चला गया। सगीत से आनन्दित होता रहा। फिर अपने परिवार के साथ खाना खाया और सो गया।

यही कार्य-विधि मि० ट्रूमैन की समस्या का सही हल थी।

इसकी उपयोगिता की आप कभी न उपेक्षा कीजिए। विश्राम और मनोरजन मानसिक उलझनो का सर्वोत्तम उपचार है। ये नवीन और उत्कृष्ट विचारो के आगमन के लिए उपयुक्त वातावरण की सृष्टि करते है। शायद ही किसी वैज्ञानिक को कोई नया विचार अथवा नवीन सिद्धान्त उस समय सूझा हो, जब वह अपनी प्रयोगशाला मे कार्यरत हो। सभी बडे आविष्कार विश्राम के समय हुए है, अथवा किसी दूसरे कार्य मे सलग्न होने की अवस्था मे। न्यूटन द्वारा गुरुत्वाकर्षण और प्राचीन यूनानी दार्शनिक अर्शमिदश द्वारा जल मे वस्तुओ का भार घटने के सिद्धान्त का आविष्कार इसके दो प्रकट उदाहरण है। विश्व के महान विचारको, दार्शनिको और महाकवियो का सर्वसम्मत निर्णय है कि जब नवीन विचारो का आगमन रुक जाए, तो सोचना छोड कर बगीचे मे टहलना चाहिए।

हमारे राष्ट्रीय नेताओ मे महात्मा गाँधी से लेकर वर्तमान प्रधान मत्री प० नेहरू तक सभी इस नियम का पालन करते रहे है। गाँधीजी अपनी जिस शक्ति को 'आन्तरिक ध्वनि' कहते थे, वह वास्तव मे उनका अचेतन मन ही था। वह समस्या पर विचार करने के बाद अपने अतःकरण पर छोड देते थे। और शीघ्र ही उन्हे अपने प्रश्न का उत्तर मिल जाता था। प० नेहरू का यह नियम सा था कि उन्हे जब कभी गहन सोच-विचार करना होता, वह अपने नित्य कार्य से अवकाश ले लेते थे, पहाड पर चले जाते या किसी एकान्त स्थान पर जा बैठते। चन्द दिनो तक वह खूब सोचते है, और जो कुछ करना है, उसका निर्धारण करते। उसके बाद वह किसी पाठशाला या आश्रम मे जाकर बच्चो के साथ खेल-कूद मे मग्न हो जाते। किसी जँगली क्षेत्र मे हो, तो आदिवासियो के साथ नाचते-गाते, और इस प्रकार स्वय को नई शक्ति और स्फूर्ति से प्रेरित करके गम्भीर कार्य

की ओर प्रवृत्त होते । तब उन्हे सही दिशा मे कदम उठाते किसी प्रकार के संकोच या आनिश्चितता का अनुभव नही होता था । उनका अचेतन स्वयमेव ही उन्हे सही दिशा का ज्ञान उपलब्ध कराता था ।

क्लांति के अतिरिक्त व्यग्रता और शोक-क्रोध भी सफल विचार में बाधक होते है । आप उद्विग्नता की दशा मे किसी गम्भीर समस्या पर विचार नही कर सकते, न कोई योजना संगठित कर सकते है । ऐसी अवस्था में सोचना न सोचने से भी ज्यादा अहितकर है, क्योकि जब अस्थिर मन के साथ किसी समस्या पर विचार करने के बाद उपयोगी परिणाम नही निकलते, तो मनुष्य भयभीत हो जाता है, और वह अनुभव करने लगता है कि वह कठिन समस्याओं पर सोच-विचार करने की योग्यता ही नही रखता । इस प्रकार वह अपनी उन्नति की सब सम्भावनाओ का अत कर देता है ।

दुश्चिताओ को वर्तमान युग का सब से घातक रोग समझा जाता है । इसमे सदेह नही कि आज का समुन्नत मनुष्य सुख और शान्ति की खोज मे मारा-मारा फिरता है, परन्तु चिंताये उसका पीछा नही छोडती । अमरीका के एक अरब पति के संबंध मे बतलाया जाता है कि वह अपना आधा धन ऐसे व्यक्ति को देने पर तेयार था, जो उसे रात के समय मीठी नीद सुला सके। एक और अरबपति भूख न लगने के शोक मे रो-रो कर मर गया । इनका इलाज किसी चिकित्सक के वस का रोग नही था । क्योकि दुश्चिंतायो के कारण उन्होने जो बीमारियाँ स्वयं को लगा ली थी, उनकी औषधी किसी डाक्टर के पास नही, स्वयं उन्हीं के पास थी, परतु वे उसका सेवन करने मे असमर्थ थे । वर्तमान युग मे आत्महत्या की घटनायें भी पहले की अपेक्षा इसी कारण ज्यादा होती हैं, कि आज का मनुष्य अधिक चिंता-

ग्रस्त और अशांत है। इस मानसिक अशांति और व्यग्रता के कारण वह ठीक से सोच नही सकता कि उसे क्या करना है। परेशानी की हालत मे सोचना बिल्कुल फजूल है। विश्वास न हो, तो किसी मित्र के पास जाइये, जो परेशान हो, और उससे कहिए कि किसी जटिल समस्या को सुलझाने मे सहायता करे। वह तुरत उत्तर देगा कि इस समय मैं परेशान हूँ, इसलिए क्षमा चाहता हूँ। फिर किसी वक्त आइये। जब मेरा दिमाग ठिकाने हो।' आपका दोस्त गलत नही कहेगा। वास्तव मे वह उस समय आपकी कुछ भी सहायता नही कर सकता।

गरज परेशानी इन्सान की योग्यता पर बहुत बुरा प्रभाव डालती है। यही दशा उस समय होती हैं, जब मनुष्य उत्तेजित या क्रोधित हो। आये दिन हत्याकाड होते है जो मुख्यत उत्तेजना का दुष्परिणाम है। हत्यारा हत्या कर बैठता है और उसके बाद पछताने बैठता है। क्रोध और उत्तेजना से बुद्धि का लोप होता है। अब आप स्वय ही विचार कीजिए कि जब क्रोधावेश मे हत्या जैसे घोर अपराध घटित हो सकते है, तो इस अवस्था मे सदविचार का प्रश्न ही कहाँ उठता है। इसलिए यह कहना अनुचित नही कि सोच-विचार के सुपरिणाम तभी निकल सकते है, जब आप आवेश और उत्तेजना को अपने निकट न आने दें। व्यग्रता चूँकि एक मानसिक दशा है, इसलिए उससे बचने का सर्वोतम उपाय यही है कि आप तत्काल किसी दूसरे काम मे व्यस्त हो जाइए। परेशानी मे अधिकतर अभावात्मक विचार उत्पन्न होते है। इसलिए उन पर काबू पाने के लिए भावात्मक विचारो का सहारा लीजिए। अर्थात कोई आनन्ददायक या हास्यरस-युक्त बात सोचिए। हँसिये और खुश होइये, अथवा किसी ऐसी क्रीड़ा मे तन्मय हो जाइए, जो आपको किसी दूसरी उलझन में डाल दे, जैसे शतरंज की बाजी कैसे जीती जाए, या

टूटी हुई मेज को ठीक कैसे किया जाए।

यदि आपकी दुश्चिताओं का सम्बन्ध आर्थिक स्थिति या किसी ऐसी जटिलता से है, जो तात्कालिक हल चाहती है, तो अपनी कठिनाई का तटस्थ होकर निरीक्षण कीजिए, और यो सोचिए कि यह समस्या आप की नही, किसी दूसरे की है, और वह आप से इसे हल करने में सहायता चाहता है। इस तरह आप फौरन ही मूल समस्या को देख सकेंगे। बहुधा हम जिस समस्या या कठिनाई के कारण परेशान हो जाते है, वास्तव में वही हमारी समस्या नही होती, वल्कि समस्या कुछ और ही होती है, और अकारण ही गौण वातो पर पड कर अपना समय और शक्ति नष्ट करते है। उदाहरण के लिए आपको तीन दिन के अन्दर मकान का किराया अदा करना है। अब आप यदि यो सोचने वैठे कि "यह तो वडी मुसीवत है। भला तीन दिन में किराया कैसे अदा किया जा सकता है। यह मालिक मकान कितना दुष्ट है। अब देखो, यदि मै किराया न दे सका तो मुझे मकान खाली करना होगा। भला यह भी कोई इन्साफ है। मुझे वाल-वच्चो समेत सडक पर वैठना होगा। भगवान जाने मेरी क्या दशा होने वाली है, इत्यादि। अब आप ही वताइए, इस प्रकार के विचारो का क्या फायदा! जरा तटस्थ होकर सोचें, तो आप पर सहज ही मे प्रकट हो जायेगा कि असल समस्या किराए की माग या मालिक मकान की दुष्टता नही है, वल्कि समस्या कुछ रुपयो की है, अर्थात आपको तीन दिन के अन्दर एक निश्चित रकम का प्रवन्ध करना है, तो फिर यो क्यों नही सोचते कि इतनी रकम इस समय के भीतर किन-किन उपायो से उपलब्ध की जा सकती है। कहने का मतलव यह है कि आप मालिक मकान की नीचता सम्वन्धी व्यर्थ के विचारों को छोड़ कर मतलव की वात सोचिए एक दिन खूव सोचिए। और रुपया हासिल करने के सव

सम्मिलित उपायो की छानबीन कर लीजिए। दूसरे दिन इस समस्या पर जरा भी ध्यान न दीजिए और अपने काम में मस्त रहिए। तीसरे दिन आपको या तो रुपया मिल जाएगा, या फिर मालिक मकान से दो-दो हाथ करने की तरकीब सूझ जाएगी। याद रखिए, अचेत मन मनुष्य को कभी धोखा नही देता।

कुछ लोग निर्मूल अशकाओ के कारण आतकित और चिंता-ग्रस्त रहते है। इस प्रकार की दुश्चिताओ से बचने की सभावना निर्भर करती है इस बात पर कि व्यक्ति कितना यथार्थवादी है। जब हम जानते है कि हमे एक न एक दिन मरना है और मृत्यु अटल है, तो फिर मरने से सौ बार मरने की क्या जरूरत। युद्ध दुर्भिक्ष महामारी कोई भी कारण हो, मरना एक ही बार है। फिर एटम् बम् और हाइड्रोजन बम के नाम सुन-सुन कर भय-भीत होने से क्या लाभ ? यदि ऐसी अवस्था मे कल्पना शक्ति का सहारा लिया और अतीत और वर्तमान की सुखद घटनाओ को स्मरण किया जाए, तो ऐसी कल्पित आशकाएँ बडी हद तक कम हो जाती है।

कुछ भी हो इस बात को हमेशा याद रखना चाहिए कि जहाँ तक सोच-विचार का सम्बन्ध है, भय और आशका भी वही काम करते है, जो व्यग्रता के विषय मे बतलाया गया है, अर्थात वे सही विचार मे बाधक होते हैं। और सोच-विचार के बिना उन्नति असम्भव है।

पुरानी डगर पर चलने वाले और पक्षाध व्यक्ति न कोई उच्च-विचार प्रस्तुत कर सकते है और न कोई नया आविष्कार कर सकते है। लकीर की फकीरी हमे कभो कोई बडा काम करने का अवसर नही दे सकती। वैज्ञानिक, विचारक और आविष्कारक बनने का सौभाग्य उन्ही लोगो को प्राप्त होता है, जो स्वतंत्र और विद्रोही होते है। रूस आज अन्य

देशों से आगे निकल गया है, तो इसका एकमात्र कारण यह है कि वहाँ हर प्रकार की रूढियों के विरुद्ध सघर्ष जारी रहता है। वहाँ किसी नए विचार अथवा पद्धति की केवल इसलिए निन्दा नही की जाती कि उससे किसी पुरानी धारणा या प्रथा का खडन होता है। वहाँ हर क्षेत्र मे नवीन विचार वालों का आदर सम्मान किया जाता है। यही कारण है कि आज दुनिया भर में जितने वैज्ञानिक और विचारक हैं, उनसे ज्यादा अकेले रूस में है।

परन्तु दुनिया के वहुत वड़े भाग में अभी मनुष्य सकीर्ण विचारो और अंधविश्वास पर विजय प्राप्त नही कर सकता। मानवता का वहुत वड़ा अश अभी तक पुरानी परम्पराओ और कुप्रथाओ की शृङ्खलाओ मे जकड़ा हुआ है। आज जरूरत इस वात है कि हम श्री नेहरू के शव्दो मे अपने दिमागो के पट खोल दे, और जैसे हम राज-नीतिक अर्थो मे स्वतत्र हुए है, वैसे ही अपने विचारो और भावनाओ मे भी स्वतत्र हो।

इसका अर्थ यह नही कि हमारे वड़ो ने हमारे कल्याण और पथप्रदर्शन के लिए जो काम किए है, उन्हे हम भुला दे अथवा उनका आदर न करे। नि.सन्देह हमें अपने पूर्वजो का सम्मान करना चाहिए, और उन्हे मान देना चाहिए। परन्तु वे जो कुछ कह गए या हमारे शास्त्रों मे लिख गए, वह आज भी सही है, ऐसा समझने की गलती हमें नही करनी चाहिए। सच तो यह है कि नए ढंग से सोचना और नए विचारों को अपनाना एक प्रकार से अपने पूर्वजो का अनुसरण करना ही है, क्योंकि उन्होने भी अपने पूर्वजो के विचारो में ऐसा ही संशोधन किया था। उनकी तरह हमे भी पुराने विचारो का अध्ययन आलोचक की दृष्टि से करना चाहिए। उनकी अच्छाई-बुराई और उपयोगिता-अनोपयोगिता का निश्चय करना चाहिए। और फिर स्वय अपने

स्वतत्र विचार प्रस्तुत करने मे सकोच नही करना चाहिए । याद रखिए, सफलता का द्वार प्रत्येक व्यक्ति को स्वय बनाना पडता है, यहाँ तक कि उसके बनाए हुए द्वार मे से उसकी अपनी संतान भी नही गुजर सकती । इसलिए आप निश्चित होकर स्वतन्त्र सोच-विचार का मार्ग अपनाइए, और इस बात को कोई महत्व न दीजिए कि आपके विचार पुराने ग्रथो मे लिखे अथवा आपके समकालीन लोगो द्वारा व्यक्त किए जाने वाले विचारो से नही मिलते । शायद यही भिन्नता आप की महानता का कारण बन जाए ।

सोच-विचार की आदत से मनुष्य को केवल यही लाभ नही होता कि वह अपनी समस्याओ का हाल मालूम करने के योग्य हो जाता है, और अपनी कठिनाइयो को दूरकर सकता है । बल्कि सबसे बडा फायदा यह होता है कि इस योग्यता के बल पर उसे अपने पर विश्वास हो जाता है । जब वह अनुभव करता है कि वह हर समस्या का हल निकालता है और कठिनाई पर विजय पा लेता है, तो उसे अपनी शक्ति और श्रेष्ठता का विश्वास हो जाता है । और जैसा कि बतलाया गया, यही आत्मविश्वास सफलता की कुंजी है ।

जीवन का संगठन

जीवन के व्यापार से इस तरह निपटना कि जीवन-यात्रा 'पूरे विश्वास और सफलता के साथ जारी रखी जा सके, आसान काम नही है। जब मनुष्य युवावस्था में पदार्पण करता है तो अगणित जिम्मेदारियाँ उसके कंधो पर आ पड़ती है। उसे अपने लिए जीविका का साधन या व्यवसाए चुनना पड़ता है। इसका केवल मनोवांछित होना ही काफी नही, वह लाभ-प्रद भी होना चाहिए। जीवन सगिनी का चुनाव भी कम महत्व की बात नही, इसमें ज़रा सी ग़लती या असावधानी भविष्य को असुखद बना सकती है। इसी स्थल पर अपनी व्यस्तताओ, क्रीडाओं और साथी सम्बन्धियों का चुनाव भी करना पडता है। सारांश यह है कि जीवन-निर्वाह के लिए एक निश्चित कार्यक्रम अथवा नित्य व्यवहार को अपनाना पड़ता है। वे विषय और समस्याएँ इसके अलावा है, जो अकस्मात उपस्थित हो सकती हैं। इन्ही दिनों में इनका हल मालूम करना और नाना प्रकार की गुत्थियों को भी सुलझानापड़ता है। प्रकट है कि इस व्यापार में सफ-लता नहीं मिल सकती, यदि मनुष्य जीने का सलीका न रखता हो। परन्तु तथ्य यह है कि शायद यही एक ऐसी कला या व्य-वसाए है, जिसके सीखने सिखाने की तरफ सब से कम ध्यान दिया जाता है।

एक शिक्षा विशारद ने उचित ही कहा है कि लोग उन घोड़ों के प्रशिक्षण पर तो बहुत ध्यान देते है, जो घुडदौड मे भाग लेते है, परन्तु अपनी सन्तान को जीवन की दौड मे भाग लेने के योग्य बनाने का कोई प्रबन्ध नही करते। इसके उत्तर मे कहा जायगा कि मछली को तैरना कौन सिखाता है। जिस तरह वह बडी मछलियो को तैरते देख कर तैरना सीख लेती है, इसी तरह हमारे बच्चे भी हमे देखकर जीने का ढग मालूम कर सकते है। फिर उन्हे विभिन्न कलाओ की शिक्षा भी तो दी जाती है इसके बावजूद यदि वे जीने की कला से अनभिज्ञ रह जाएँ, तो दोष हमा·ा नही, स्वय उनका है। कुछ लोग इस प्रकार के तर्क 'उपस्थित करके भले—ही सतुष्ट हो जाएँ, परन्तु इस सिद्धात को केवल उसी अवस्था मे युक्तिसगत समझा जा सकता था, जब हम जीवन को इतना जटिल न बनाते। गुफाओ मे जीवन व्यतीत करते, दरख्तो की छाल से देह ढाँपते और जानवरो के माँस और जगली फलो पर गुजारा करते।

मछलियाँ सृष्टि के प्रथम दिन से तैरने और अपना पेट भरने की जो कला जानती है, उसमे इन अरबो वर्षो मे जरा भी परिवर्तन नही हुआ, न उन्नति हुई। मछलियो ने गगनचुम्बी भवन नही बनाए, एटम् बम् का निर्माण नही किया। उन्होने 'थल पर जीवित रह सकने की कला आविष्कृत नही की, न हवा के समुद्र मे उड़ने की। परन्तु मनु की सतान ने किसी एक अवस्था मे रहने पर सतोष नही किया। उसके उद्योग से नित्य नए आविश्कार हो रहे है, जो जीवन को जटिल बना रहे है। इतना जटिल कि एक पत्रकार के शब्दो मे 'आज बहुत से नव-यु ।क केवल इस लिए समय से पहले बूढे हो रहे है कि वे चौबीसो घन्टे क्या होगा' की चिंता में घुलते रहते है। ऐसी अवस्था मे जीने की कला का महत्व सहज ही मे समझा जा सकता है।

जीवन के व्यापार मे कुछ लोग केवल इस लिए असफल रहते है कि उन्हे बचपन और किशोरवस्था मे जीवन-निर्वाह का तरीका सिखाया ही नही जाता। वे प्रबल बोध-शक्ति रखते है। परिस्थितियो को समझने की योग्यता रखते हैं। उन्हें जो काम सौपा जाए, उसे कुशलतापूवक सम्पन्न कर सक्ते है। उनमे सफल व्यवसायी, योग्य राजनीतिज्ञ या कुशल कलाकार बनने के सभी गुण होते है, परन्तु उन्हे अपने लक्ष्य तक पहुंचने मे पग-पग पर कठिनाइयो का सामना करना पड़ता है, क्योंकि वे जीवन-निर्वाह की कला का ज्ञान नही रखते।

वे बडे साहसी होते है, कठिनाइयों को कोई महत्व नही देते। परन्तु वे कठिनाइयों पर काबू नही पा सकते, क्योकि वे उन्हे अपने मार्ग से हटाने का हुनर नही जानते। उन से प्रायः कोई ऐसी गलती हो जाती है कि उनकी सब कोशिशे मिट्टी मे मिल जाती है। उन्हे केवल जीवन का रहस्य न जानने के का॰ण असफलता का मुंह देखना पडता है। निरंतर असफलताएँ उन्हे हताश और भयभीत कर देती हैं, यहाँ तक कि वे निराश और दुर्भाग्य की मूर्ति बनकर रह जाते है।

ये लोग जीवन-क्षेत्र मे ऊंचे सिद्धांतो के साथ प्रवेश करते है। ये सत्यपरता निर्भयता, उदारहृदयता और देश सेवा के ऊँचे आदर्शो को अपनाने की शपथ लेते है। परन्तु उनका सही उपयोग नही कर सकते। इसलिए शीघ्र ही अनुभव करने लगते है कि दुनिया के बाजार मे उनके माल की माग नही है। इस तरह सदेह और दुविधा उनके मार्ग का भारी पत्थर सिद्ध होते है।

उनकी यह धारणा कि अब ये उच्च मूल्य अनावश्यक हो गए हैं, सही नही होती। ससार मे आज भी इनके ग्राहक मौजूद है। दुनियाँ आज भी उन व्यक्तियो को सिर आँखों पर बिठाती है, जो सत्य भाषी हो, सत्य निष्टा हों और उदारहृदय हों।

इन गुणो वाले व्यक्तियों को आज भी सफलता-प्राप्ति मे कोई विशेष कठिनाई नही होती। दुनिया के अधिकतर सफल लोग ऐसे ही गुण-सम्पन्न थे। सच तो यह है कि वास्तविक महत्ता के अधिकारी आज भी वही लोग समझे जाते है, जिनका लक्ष लाभ-उपलब्धि और मान-प्रतिष्ठा प्राप्ति से ज्यादा जन-सेवा और देश कल्याण होता है। परन्तु ये लोग जीवन-यापन की कला से अनभिज्ञ होने के कारण इन गुणों से लाभ नही उठा सकते, इसलिए साहस छोड बैठते है।

इनकी एक मुश्किल यह भी होती है कि ये अपने लिए कोई लाभदायक कार्य-क्षेत्र नही चुन सकते। वे जीवन पर्यन्त अपने कार्य विभाग बदलते रहते है। यह पथभ्रष्टता और घुमक्कड़पन, सभव है, शुरू-शुरू मे इतना हानिकार न हो। परन्तु इसे स्थायी रूप से अपनी प्रवृत्ति ही बना ली जाए, तो यह जीवन के अंतिम दिनो मे एक भयकर प्रकोप का रूप धारण कर जाती है।

जो लोग युवावस्था को पार करने के बाद भी अपने लिए उपयुक्त काम की खोज मे रहते है, वे कभी, सुखी-सम्पन्न नही हो सकते। उनका बहुमूल्य समय इसी खोज मे व्यय हो जाता है। ये लोग किसी एक काम से सम्बन्ध रखें, तो उल्लेखनीय उन्नति कर सकते है। वे नही जानते कि सहयोगियो के साथ किस प्रकार का बर्ताव रखना चाहिए। वे शिष्टाचार से भी परिचित नही होते। वे मित्रो का चुनाव नही कर सकते। वे भरी सभा मे भी अकेले ही होते है। वे चूंकि कल्पना जगत मे बसते हैं, इसलिए व्यवहारिक दुनिया के समान्य विषय भी उनके लिए कठिन समस्याएँ है। वे न तो स्वय को वातावरण मे डाल सकते है और न वातावरण को अपने अनुकूल बना सकते है। इसलिए उन्हे अपने प्रयत्नो का फल परेशानी के रूप मे मिलता है।

यिद आप इन्ही लोगो मे है, यदि माता-पिता के अनुचित

लाड़-प्यार के कारण आप जीने की कला नही सीख सके, और अब स्वय को जीवन क्षेत्र मे अकेला और असहाय पाते है, यदि आप सुशिक्षित और बुद्धिमान होने के बावजूद अभी तक अपने कार्य क्षेत्र का चुनाव नही कर सके, और अपने प्रयत्नों को सफल न होते देख हताश हो चुके है और संघर्ष को व्यर्थ समझने लगे है, तो हथियार डालने की बजाए यह मालूम करने की चेष्टा कीजिए कि आपको असफलता के कारण क्या है । इस अनुसधान के बाद यदि आप इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि आप की असफलता का कारण जीने की कला से अनभिज्ञता है, तो आपको निराश होने की जरूरत नही, आप चाहें और अपने सुधार के लिए तत्पर हो जाएँ तो अब भी इस कला को सीख सकते हैं ।

इस तथ्य को कभी न भुलाइए कि जीवन सकटों के इस युग मे भी अपने अन्दर मनोरजन की काफी सामग्री रखता है । उसे प्राप्त करने के लिए जीवन के पुर्नसगठन पर तत्पर हो जाइये । दृढ सकल्प से काम लीजिए और इस विश्वास के साथ आगे बढिए कि विजय आप की है ।

जीवन के पुनर्सगठन के लिये सर्वप्रथम अतीत का अध्ययन आवश्यक होता है । उसका निरीक्षण कीजिये । अतीत मे आपसे जो गलतियाँ हुई है, उनकी एक सूची ब ाइये । अपनी अब तक की सफलताओं की भी एक सूची बनाइये दोनों की तुलना कीजिए । आप पर प्रकट होगा कि आपका अतीत इतना निराशजनक नही है, जितना कि आपको अपने अन्दर कई कमियाँ और कमजोरियाँ दिखाई देंगी, तो अच्छाइयाँ और गुण भी नजर आएँगे । तब आप महसूस करेंगे कि वास्तव मे आप असफल नहीं है, आपने जीवन के शिक्षालय से बहुत कुछ उपलब्ध किया है । आप के पास धन सम्पत्ति का अभाव सही, पर उस दौलत की

कमी नही जो मानवता का आभूषण समझी जाती है।

अतीत के महान व्यक्तियो पर दृष्टि डालिए, उनमे कितने करोडपतियो के नाम है ? शायद बहुत कम, क्या इससे सिद्ध नही होता कि मनुष्य की वास्तविक महानता धन-ऐश्वर्य मे निहित नही है। तो फिर आप धन न होने पर निराश क्यो हो ? यदि आप विद्या-भूषण से सज्जित है, आपका चरित्र निष्कलक और आचरण आदर्श है, और इतना काफी कमा लेते है कि आपको किसी के आगे हाथ फैलाने की अलश्वकता न हो, तो आप स्वय को कमी तुच्छ न समझे। आप मनुष्य है, उच्च पद रखने वाले मनुष्य, जिस पर सारी मानवता गर्व कर सकती है।

मैं यह नही कहता कि आप धन-सम्पत्ति को प्राप्त करने की चेष्टा न करे, अथवा मान-प्रतिष्ठा के लिये प्रयत्नशील होने को पाप समझे, परन्तु मै यह अवश्य चाहता हूँ कि धन और पदैश्वर्य को इतना महत्व व दिया जाये कि उन पर सिद्धात भी निछावर कर दिए जाएँ और उचित-अनुचित हर साधन से केवल धनोपार्जन को ही अपना लक्ष्य बना लिया जाये। और यदि इन तरीको से भी उद्देश्य सिद्ध न हो, तो फिर किस्मत् को रोया जाए।

धन-दौलत, मान-प्रतिष्ठा ओर प्रसिद्धि के लिए प्रयास करते हुए कुछ लोग उन कर्त्तव्यों की अवहेलना करते है, जो उन पर परिवार के पालन-पोषण और सतान की शिक्षा-दीक्षा के रूप मे लागू होते है। वे धनवान बनने को अत्याधिक लालसा मे बच्चो की उचित अवश्यकताओ पर भी कुछ व्यय करना पाप समझते है। अपने काम में इतने व्यस्त रहते है कि बच्चो को प्यार करने तक का अवकाश नही निकाल पाते। वे अपने मित्रो के भी किसी काम नही आते, उन्हे हर वक्त अपनी ही पडी रहती है, वे जागते सोते हर दम इसी विचार मे विमग्न रहते

है कि धन कैसे प्राप्त किया जाये, अथवा उच्च पद को कैसे पहुँचा जाए।

जो लोग अपने आप मे तल्लीन रहते है, वे निष्ठ बन्धुओं के अभाव का प्रायः रोना रोते है। इसका दोष वे उन लोगों को देते है, जिन्हे वे अपना मित्र बनाना चाहते है, परन्तु वास्तव मे दोष इनका अपना होता है। असल मे वे अत्यत ही स्वार्थी और अहमान्य होते है, और चाहते है कि उनके मित्रगण भी केवल उन्ही की भलाई और उन्नति के लिए सोचा करे, इस अवस्था में कौन उनका मित्र बनना पसद करेगा। इन लोगो के दृष्टिकोण मे यह त्रुटि इसलिए होती है कि वे धन और प्रसिद्धि को लालसा मे सफलता के वास्तविक मर्म को नही समझते। उनके विचार में सफलता का अर्थ केवल धन ऐश्वर्य है। इसलिए वे उनकी प्राप्ति की चेष्टा में सारी दुनियाँ को भुला देते हैं, सबसे अलग-अलग रहते है, और उनकी समस्त अभिरुचियाँ केवल स्वय तक सीमित रह जाती है।

जीवन के सम्बन्ध मे यह दृष्टिकोण स्वस्थ नही है। सफलता के लिए सघर्ष अवश्य कीजिए। आगे—और आगे आपका अभीष्ट लक्ष्य जरूर होना चाहिए। परन्तु सफलता की लालसा में जीवन की सामान्य खुशियों से स्वय को वंचित न कीजिए। भाई-बन्धुओ और दुनियाँ को भुला न दीजिए। उनकी उपेक्षा करके सम्भव है, आप कोई पद प्राप्त कर ले, या कुछ धन एकत्रित कर लें। परन्तु इसका जो मूल्य आप चुका रहे हैं,वह इतना अधिक है कि आपकी कई असफलताये उस पर निछावर की जासकती है।

इसके विपरीत यदि आप उन्नति के लिए प्रयत्न करते हुए अपने परिवार का भी ध्यान रखें, और मित्रो के प्रेम और निष्ठा का जवाब वैसे ही प्रेम और निष्ठा से दें, तो आपके यही घर वाले और मित्र आपके सबल सहायक सिद्ध होंगे, और आपकी

बहुत सी कठिनाइयाँ दूर करने मे आपका हाथ बटायेंगे। इस प्रकार आप सफलता के शिखर पर अपेक्षा अधिक शीघ्रता से पहुँचेंगे।

अपनी योग्यता का अनुमान लगाने मे कभी भ्रम मे न पडिए कुछ लोग केवल इसलिए सुखी जीवन व्यतीत नही कर सकते और सफलता के दर्शन नही करते, कि वे माध्यम कोटि की योग्यता रखने के बावजूद स्वय को बुद्धि और प्रतिभा की मूर्ति समझते है। इस भ्रम के कारण उन्हे जीवनमे बहुत हानिउठानी पड़ती है। यह लोग यानि थोडा धैर्य से काम ले,और प्रारम्भ मे छोटे व्यवसाय को भी कुशलता-पूर्वक सम्पन्न करे तो वे शीघ्र ही उच्च पद प्राप्त कर सकते है। परन्तु यह लोग अपने उतावले और चचल वृत्ति के कारण क्रमश उन्नति करने मे विश्वास नही रखते। वे पहले ही पग पर उच्चतम पद प्राप्त करना चाहते है। और जब उसे हासिल करने मे सफल नही होते क्रोध और सताप के वशीभूत होकर अपने जावन को दुखमय उपाय बना लेते है। इस विपत्ति से बचने का उत्तम उपाय यह है कि अपनी योग्यता का अनुमान लगाने मे यथार्थवाद से काम लिया जाये।

अपने पर विश्वास के अलावा जीवन और उसकी उपयोगिता पर विश्वास, मनुष्य मात्र के उज्जवल भविष्य पर विश्वास और मित्रो व सहयोगियो पर विश्वास, जिससे नित्य सम्बन्ध रहता है, सफलता के दर्शन करने तथा सतुष्ट और प्रसन्न जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक है। आत्मविश्वास का शाब्दिक अर्थ यद्यपि स्वय पर विश्वास है,परन्तु मनुष्य स्वय पर विश्वास तभी कर सकता है, जब उसे अपने अलावा कुछ और लोगो और सहयोगियो पर विश्वास हो।

जीवन की लम्बी यात्रा मे मनुष्य को अगणित अन्य लोगों

के सहयोग की आवश्यकता होती है। पारीवारिक जीवन का सुख-सन्तोष इस बात पर निर्भर करता है कि घर के सब सदस्य परस्पर प्रेम करते हो, एक-दूसरे का सम्मान करते हों,और एक-दूसरे पर विश्वास करते हो। वह घर जिसके सदस्यों में पारस्परिक विश्वास नही होता, वे धन-धान्यपूर्ण होने पर भी जीवन के आधे सुखों से वचित होता है।

आपको अपने ,र विश्वास है। आप समझते है कि नौकरी की वजाय व्यापार मे पैसा लगाएँ, कपड़े की दुकान खोल ले तो आय मे पर्याप्त वृद्धि हो सकती है। परन्तु आप इस योजना में वड़े भाई को विश्वास मे नही लेते, बल्कि उसे परामर्श देने के योग्य ही नही समझते अथवा पहले ही फैसला कर लेते है कि वह तो हर अवस्था मे आपकी योजना का विरोध ही करेगा। इसलिए उसे सूचित किए विना पिता से रुपया लेकर कारोवार मे लगाना चाहेगे, तो उसका परिणाम क्या निकलेगा ! यही न कि यदि पिता ने पैसा दे भी दिया, तो भाइयो मे ठन जायेगी भ्रात-भाव के स्थान पर शत्रुता का सूत्रपात होगा, और सभव है नौवत मुकद्दमेवाजी तक पहुँच जाये। दोनो भाइयो के मतभेद का कुप्रभाव सारे परिवार पर पडेगा और इस प्रकार आपका बड़े भाई पर अविश्वस सारे घर के सुख-चैन का अंत करने का कारण वन जायेगा।
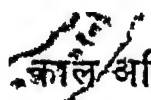
घर के वाद मौहल्ले को लीजिए। यदि आप पड़ोसियो पर विश्वास नही करेंगे तो वे भी आपको संदेह की दृष्टि से देखेंगे। आपके अविश्वास का उत्तर अविश्वास से दिया जायेगा, जिससे अकारण ही खिचाव पैदा होगा। और न केवल अपना जीवन कटु और कष्टपूर्ण हो जाएगा, वल्कि आपका अविश्वास दूसरो की खुशियो के लिए भी घातक सिद्ध होगा। यदि इस क्षेत्र को कुछ और विस्तृत किया जाए, तो आप देखेंगे कि आपका रवैया

सारे समाज को प्रभावित कर सकता है। जिसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि समाज आपको मुंह नही लगाएगा, और आपको अकेलेपन पर सन्तोष करना पडेगा। प्रकट है कि जो व्यक्ति सांसारिक गतिविधियो मे भाग लेकर ऊपर उठना चाहता है. उसे अकेलापन कितना हानिकारक हो सकता है।

मनुष्य एक सामाजिक जीव है। वह स्वभावत मेल-जोल को पसन्द करता है। वर्तमान जनतत्रीय युग मे तो कोई व्यक्ति सफल हो ही नही सकता, जब तक वह दूसरो का सहयोग प्राप्त न करे। इन परिस्थितियो में दूसरो पर विश्वास करके अपने परिचय-प्रभाव के क्षेत्र को सीमित बनाने की मूर्खता वही कर सकता है जो अपने लिए गढा खोदने पर कटिबद्ध हो।

नौकरी या व्यवसाय के क्षेत्र मे भी पारस्परिक विश्वास के बिना काम चल नही सकता। आप किसी व्यापारिक सस्था के व्यवस्थापक है, आपके आधीनस्थ कई छोटे अधिकारी और क्लर्क काम करते है। यदि आप उनपर विश्वास न करे तो आप को हर छोटे अफसर और क्लर्क के काम पर हर वक्त नजर रखनी पडेगी, हर चिट्ठी का स्वय जवाब देना होगा। प्रकट है कि ये सारे काम आप अकेले नही कर सकते। यदि कर सकते, तो इतने बडे कार्यालय की आवश्यकता ही क्या थी, अब यदि आप अविश्वास के कारण एक-एक खत का जवाब लिखने बैंठ जाएँ, तो आपका जो असली काम है, वह तो धरा ही रह जायेगा। साराश यह है कि व्यवहारिक दुनियाँ मे आपको दूसरो पर विश्वास करना ही पडता है।

कुछ लोग केवल इसलिए सफल नही होते कि वे अपने पर तो दूसरो का विश्वास चाहते है, पर स्वय दूसरो पर विश्वास नही करते। उन्हे दूसरो की कोई बात, कोई सुझाव ईमानदारी पर आधारित दिखाई नही देती। इस प्रकार जव वे एक दीर्घ

काल अविश्वास को अपना नियम बनाए रखते हैं, तो वे जीवन के सौन्दर्य और उपयोगिता पर भी विश्वास गंवा बठते है और अंततः स्वयं अपने आप पर सन्देह करने लगते है। जब उन्हे व्यक्ति बेईमान, स्वार्थी और अयोग्य दिखाई देता है,तो वे जीवन को ही एक धोखा और मारीचिका समझने लगते है। मानवी जीवन चूंकि विचारों का प्रतिबिम्ब होता है, इसलिए व्यक्ति जब चौबीसो घटे चारों ओर छल-कपट और झूठ का साम्राज्य देखेगा, तो उसे अंततः अपने भीतर भी उसी का छाप दिखाई देगी। इस प्रकार वह न स्वय अपने उद्देश्यों की सत्यता पर विश्वास कर सकेगा, और न उनकी पूर्ति के लिए दूसरो का सहयोग प्राप्त कर सकेगा अब चाहे वह कितना ही योग्य और प्रतिभाशाली क्यो न हो वे न तो अपने कारोबार को उन्नत कर सकेगा और न किसी संस्था या विभाग का कुशल व्यवस्थापक सिद्ध होगा। ऐसे व्यक्ति को पग-पग पर असफलताओं का सामना करना पड़ेगा। और यह सफलता उसके आत्म-विश्वास पर आक्रमण करेगी। वह अनुभव करने लगेगा कि जब एक संस्था का संचालन नही कर सकता तो इसका अर्थ यही है कि उसकी योग्यता का कोई अस्तित्व नही है। यदि वह कोई योजना तैयार करेगा तो उसे विश्वास न होगा कि वह त्रुटिविहीन है। ऐसी स्थिति में उसकी योजना के सफल होने की क्या संभावना हो सकती है इस प्रकार अविश्वास का शिकार होकर अपनी योग्यताओ के पुरस्कार से वंचित रह जायेगा।

जीवन के सगठन के लिए कुछ और नियम भी आवश्यक है। एक यह कि अपनी जानकारी की सदैव वृद्धि करते रहना चाहिए। समय बडी तेजी से बदल रहा है, कल की जानकारी आज पुरानी हो जाती है, कल के विचार आज की आवश्यकताओं पर पूरे नही उतरते। इसलिए आपको हमेशा समय के

म र कदम `मलाकर च लना चाहिए।

इसके लिए उत्तम उगाय नई-नई पुस्तको, पत्रिकाओ तथा समाचार-पत्रो का अ-ययन है, परन्तु पुस्तको और पत्र पत्रिकाओ के अध्ययन से समुचित लाभ तभी हो सकता है,जब आप उनका चुनाव बड़ी सावधानी से करे। एक पाश्चात्य विद्वान ने ठीक ही कहा है कि कुछ पुस्तको को केवल देख लेना ही पर्याप्त होता है, कुछ पुस्तको को एक बार पढ लेना चाहिए। लेकिन कुछ पुस्तके ऐसी है जिन्हें बार-बार पढने और आत्मसात करने की आवश्यकता होती है।

अंतिम शब्द

हम बड़ी चेष्टाओं के बाद इस तथ्य से अवगत हुए हैं कि आत्मविश्वास का तात्पर्य क्या है, और जीवन के निर्माण में उसका क्या महत्व है ? हमने महापुरुषो के जीवन से यह शिक्षा ग्रहण की है कि यदि अपने पर विश्वास किया जाए, तो बडे से बडे अभियान मे सफलता प्राप्त की जा सकती है, और महान कार्य किए जा सकते है। हम पर यह रहस्य भी खुल चुका है कि हम मनुष्य-सचमुच महान शक्ति रखते है, हमें विधाता ने अक्षय विभूतियाँ प्रदान की है। यदि हम उन्हे विकसित करने और उनसे काम लेने पर तैयार हो जाएँ, तो निश्चय ही सफलता के रंगमहल मे प्रवेश कर सकते है, अपने देश और राष्ट्र की सेवा कर सकते है, और मनुष्य मात्र की उन्नति मे भाग ले सकते है।

हमें शायद पहली बार उन सिद्धांतों, नियमों और उपायों से परिचय प्राप्त हुआ है, जिन्हे कार्यान्वित करने से हम आत्म-विश्वासी बन सकते हैं, और वह शक्ति अपने अन्दर पैदा कर सकते है, जो पहाड़ों को भी रास्ता देने पर बाध्य कर देती है। अब हम उस स्थल पर पहुँच चुके है, जिसे जीवन निर्माण का पहला चरण कहा जाता है। यह यात्रा यह संघर्ष हमारे लिए कितना हितकर होगा, यह निर्भर करता है इस बात पर कि हम

आत्मविश्वास के महत्व और उसकी स्थापना के नियमों से परिचित होने के अलावा उनके प्रकाश मे अपने जीवन के पुन संगठन के लिए तत्पर भी हैं या नही तो फिर क्या यह हमारा मनुष्योचित् कर्त्तव्य नही है कि इस ज्ञान से जो हमे इतने उद्योग के बाद प्राप्त हुआ है, भरपूर लाभ उठाने के लिए कर्म-मार्ग पर अग्रसर हो जाएँ ?

छोटा आदमी	[कुमार कश्यप]	३ ७५
यह बस्ती यह लोग	[हरिदत्तशर्मा]	३·५०
राख की परतें	[कमल शुक्ल]	३ २५
तूलिका	[सॉमरसेट मॉम]	५ २५
प्रेम पुजारिन	[प० सुदर्शन]	२ २५
कौन किसी का ?	[रवीन्द्रनाथ टैगोर]	२ २५
नीरजा	[रवीन्द्रनाथ टैगोर]	२ २५
समाज का अत्याचार	[शरत् चन्द्र चटर्जी]	२ ७५
पछी, पिंजरा और उडान	[शरण]	३ ५०
डाल का पछी	[शरण]	४ ७५
३० लाख के हीरे	[तीर्थराम फिरोज़पुरी]	२·५०
उमराव जान 'अदा'	[अनु० गुलशन नन्दा]	४ ५०

कालिदास साहित्य :

कुमार सम्भव	[अनु० शरण]	१ २५
मालविकाग्निमित्र	[अनु० शरण]	१ २५
नलोदय	[अनु० शरण]	१ २५

मनोविज्ञान :

बच्चे कब क्या सीखते है	[अ० अ० "अनन्त"]	३·५०

यौन-विज्ञान :

बर्थ कन्ट्रोल, क्या, क्यो, कैसे ?	[डा० केवलधीर]	३·२५

स्पोर्ट्स तथा खेल कूद

खेले कैसे ? (सचित्र)	[पी० एन० अग्रवाल]	५ २५
क्रिकेट (सचित्र)	[पी० एन० अग्रवाल]	१ ७५
हाकी, फुटबॉल (सचित्र)	[पी० एन० अग्रवाल]	१ ५०